मानव भूगोल के मूल सिद्धांत

कक्षा 12 के लिए पाठ्यपुस्तक

(सत्र III)

लेखक

हीरालाल यादव

सविता सिन्हा

संपादक

आर.पी. मिश्रा

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

आमुख

भूगोल की प्रस्तुत पुस्तक 'मानव भूगोल के मूल सिद्धांत' कक्षा 12 के सत्र III के लिए निर्मित की गई है। यह पुस्तक राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा 2001 में उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के लिए बनाए गए भूगोल के संशोधित पाठ्यक्रम पर आधारित है।

विद्यालयी शिक्षा के 10 + 2 प्रणाली के अंतर्गत उच्चतर माध्यमिक स्तर कई प्रकार से बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। दस वर्षीय सामान्य शिक्षा के उपरांत, विद्यार्थी इतने परिपक्व हो जाते हैं कि वे अपनी आवश्यकताओं, अभिरुचियों, क्षमताओं एवं अभिक्षमताओं को ध्यान में रखते हुए, विषयों का चयन कर सकें, जो उन्हें भविष्य की चुनौतियों का सामना करने योग्य बना सके। जो विद्यार्थी इस स्तर पर भूगोल का चयन करते हैं, वे इसका अध्ययन केवल दो वर्षों तक कर सकते हैं अथवा इसे उच्च स्तर पर भी जारी रख सकते हैं। अतः इस पाठ्यपुस्तक को दोनों समूहों की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाया गया है।

भूगोल पाठ्यपुस्तक के संशोधन में परिषद् का दृष्टिकोण इसे युवा पीढ़ी के लिए व्यावहारिक और प्रासंगिक बनाना है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1986 के ढाँचे के अंतर्गत सामान्य केंद्रिक घटकों के साथ पाठ्यचर्या के नवीन सरोकारों, जैसे–भूमंडलीकरण के प्रभाव के प्रति प्रतिक्रिया, सूचना और संचार प्रौद्योगिकियों की चुनौतियों का सामना, शिक्षा को जीवन-कलाओं से जोड़ना, राष्ट्रीय पहचान का सुदृढ़ीकरण तथा सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण, को भी ध्यान में रखा गया है।

इस स्तर पर भूगोल के पाठ्यक्रम को चार सत्रों में विभाजित किया गया है। जबकि सत्र I और सत्र II के पाठ्यक्रम को कक्षा 11 में पूरा किया गया है, सत्र III और IV के पाठ्यक्रम कक्षा 12 के लिए हैं। प्रत्येक सत्र में सैद्धांतिक और प्रयोगात्मक भूगोल के घटक हैं। यह प्रयास किया गया है कि प्रत्येक वर्ष का पाठ्यक्रम संतुलित हो। इसलिए भौतिक एवं मानव भूगोल के सिद्धांतों को अलग-अलग दो वर्षों में रखा गया है और उसके साथ प्रत्येक वर्ष के लिए भारत का भूगोल और प्रयोगात्मक कार्य के पाठ्यक्रम का सुझाव दिया गया है।

कक्षा 11 के लिए निर्मित पाठ्यपुस्तकों के क्रम में, कक्षा 12 के लिए तीन पाठ्यपुस्तकें 'मानव भूगोल के मूल सिद्धांत' (सत्र III), 'भारत : लोग और अर्थव्यवस्था' (सत्र IV) एवं 'भूगोल में प्रयोगात्मक कार्य-भाग II' (सत्र III और IV), बनाई गई हैं।

पाठ्यपुस्तकों की इस नईश्रृंखला में यह प्रयास किया गया है कि विषय-वस्तु का प्रस्तुतीकरण यथासंभव सरल और संक्षिप्त हो। भूपृष्ठ पर मानव क्रिया-कलाप की प्रकृति और वितरण आज भी मानव भूगोल के अध्ययन का केंद्र है। परंतु पिछले वर्षों में इसके अध्ययन की विधियों में काफी परिवर्तन आया है। यह पहले से अधिक विश्लेषणात्मक और समस्या-परक हो गई है। प्रस्तुत पुस्तक में नए विचारों और संकल्पनाओं का समावेश है। कोशिश यह है कि अति-सरलीकरण और अति-व्याख्या के बीच का संतुलन बना रहे। विद्यार्थियों से यह अपेक्षा है कि वे इन संकल्पनाओं

की खोजबीन आगे भी करने की ओर प्रेरित होंगे। पुस्तक में दी गई संदर्भ पुस्तकों की सूची इस कार्य में उनके लिए उपयोगी होगी।

परिषद् विषय-विशेषज्ञों, शिक्षकों तथा इन पुस्तकों के निर्माण से जुड़े विभागीय सहयोगियों के बहुमूल्य योगदान के लिए अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती है। पुस्तकों की गुणवत्ता में सुधार के लिए हम प्रयत्नशील रहेंगे। अतः इस दिशा में उपयोगकर्त्ताओं से प्राप्त सुझावों और टिप्पणियों का स्वागत है।

जगमोहन सिंह राजपूत
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

नई दिल्ली
फरवरी 2003

पांडुलिपि समीक्षा-संशोधन कार्यगोष्ठी के सदस्य

आर.पी. मिश्रा
पूर्व उप-कुलपति
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

हीरालाल यादव (अनुवादक)
प्रोफेसर, भूगोल विभाग
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर

नीना सिंह
रीडर, भूगोल विभाग
महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक

शान्ति स्वरूप रस्तोगी
प्रधानाचार्य, (अवकाश प्राप्त)
राजकीय बाल उच्चतर माध्यमिक विद्यालय
सी.सी. कालोनी, दिल्ली

जयलक्ष्मी सेठ
उप-प्रधानाचार्य
डी.टी.ई.ए. उच्चतर माध्यमिक विद्यालय
मोती बाग, नई दिल्ली

कल्पना प्रसाद
पी. जी. टी, भूगोल
भारतीय विद्या भवन,
कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली

अवधेश प्रसाद
पी. जी. टी, भूगोल
केंद्रीय विद्यालय, जे. एन. यू.
न्यू महरौली रोड, नई दिल्ली

जे. सी. कलूवाट
पी. जी. टी, भूगोल
जवाहर नवोदय विद्यालय
बुदवा, राजस्थान

के. आर. दीक्षित
प्रोफेसर (अवकाश प्राप्त)
भूगोल विभाग, पूना विश्वविद्यालय, पुणे

रामबली सिंह
प्रोफेसर, भूगोल विभाग
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी

सूर्यकांत
रीडर, भूगोल विभाग
पंजाब विश्वविद्यालय
चंडीगढ़

यशपाल सिंह
उप-प्रधानाचार्य, (अवकाश प्राप्त)
राजकीय बाल माध्यमिक विद्यालय
नांगलोई, दिल्ली

शिव प्रकाश
प्रवक्ता, भूगोल (अवकाश प्राप्त)
सर्वोदय बाल विद्यालय, पॉकेट-बी,
मयूर विहार, फेस-II, दिल्ली

इंदु शर्मा
पी. जी. टी., भूगोल
डी. एम. स्कूल,
क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, अजमेर

एस. एम. जावेद
पी. जी. टी, भूगोल
केंद्रीय विद्यालय नं. 1
दिल्ली छावनी, नई दिल्ली

जी. के. अग्रवाल
पी. जी. टी, भूगोल
जवाहर नवोदय विद्यालय
छान, टोंक, राजस्थान

सविता सिन्हा
प्रोफेसर **(समन्वयक)**
सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
नई दिल्ली

भारत का संविधान

भाग 4क

नागरिकों के मूल कर्तव्य

अनुच्छेद 51क

मूल कर्तव्य – भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह –

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे,

(ख) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखे और उनका पालन करे,

(ग) भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण बनाए रखे,

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे,

(ङ) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभावों से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो महिलाओं के सम्मान के विरुद्ध हों,

(च) हमारी सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्त्व समझे और उसका परिरक्षण करे,

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्राणिमात्र के प्रति दयाभाव रखे,

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे,

(झ) सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे, और

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत् प्रयास करे, जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊंचाइयों को छू सके।

विषय-सूची

गांधी जी का जंतर

तुम्हें एक जंतर देता हूँ। जब भी तुम्हें संदेह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आज़माओ :

जो सबसे गरीब और कमज़ोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शक्ल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुँचेगा? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? यानी क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा, जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा संदेह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

मो० क० गांधी

इकाई I

मानव भूगोल का परिचय

1 अध्याय

मानव भूगोल की प्रकृति एवं विषय-क्षेत्र

हमने प्रारंभ में यह पढ़ा है कि भूगोल पृथ्वी का मानव गृह के रूप में अध्ययन है। इसकी प्रकृति अंतर्विषयक एवं समन्वय की है। भूगोल, अपनी विभिन्न शाखाओं के साथ ही पृथ्वी की सतह को दो अलग-अलग, किंतु परस्पर संबंधित परिप्रेक्ष्य में देखता है, जिसे क्रमबद्ध एवं प्रादेशिक की संज्ञा दी जाती है। इस प्रकार भूगोल की दो मुख्य शाखाएँ हैं : *क्रमबद्ध भूगोल* और *प्रादेशिक भूगोल*। मानव भूगोल, क्रमबद्ध भूगोल की ही एक शाखा है। इसमें मानव और प्रकृति के बीच सतत परिवर्तनशील पारस्परिक क्रिया से उत्पन्न सांस्कृतिक लक्षणों की स्थिति एवं वितरण की विशेषताओं का अध्ययन किया जाता है।

मानव भूगोल की विस्तृत जानकारी प्राप्त करने से पहले इसकी प्रकृति एवं अध्ययन क्षेत्र को समझना उपयोगी होगा। आगामी पृष्ठों में हम भूगोल की एक शाखा के रूप में मानव भूगोल के उद्भव, विषय-वस्तु, अध्ययन की विधि तथा इसकी वर्तमान स्थिति का अध्ययन करेंगे।

एक अध्ययन क्षेत्र के रूप में मानव भूगोल का उद्भव

लगभग पंद्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से लेकर अठारहवीं शताब्दी तक की अवधि को खोज युग कहा जाता है। इसमें मानचित्र निर्माण की विधियों का गुणात्मक विकास हुआ। इसी के साथ-साथ विश्व के विभिन्न भागों में खोज यात्राओं के द्वारा विस्तृत सूचनाएँ एकत्रित की गईं। भूगोलविदों ने इस प्रकार इकट्ठी की गई सूचनाओं की वैज्ञानिक तरीके से जाँच की तथा उन्हें वर्गीकृत और व्यवस्थित किया। ऐसे वैज्ञानिक विश्लेषण का एक अच्छा उदाहरण बर्नार्ड वेरेनियस की पुस्तक *ज्यॉग्राफिया जनरेलिस* (सामान्य भूगोल) है। इसमें भूगोल विषय को मुख्यत: दो भागों में विभक्त किया गया है: *सामान्य* और *विशिष्ट*। सामान्य भूगोल में संपूर्ण पृथ्वी को एक इकाई मानकर इसके लक्षणों का विवेचन किया गया है, जबकि विशिष्ट भूगोल में अलग-अलग प्रदेशों की संरचना पर बल दिया गया है। भूगोल को इस प्रकार विभाजित करने का विचार प्राचीन काल के यूनानी विद्वानों के समय से ही प्रचलित रहा है। वेरेनियस ने प्रादेशिक भूगोल की विषय-वस्तु को तीन उपभागों में प्रस्तुत किया : *खगोलीय लक्षण, स्थलीय लक्षण* और *मानवीय लक्षण*।

उन्नीसवीं शताब्दी में वैज्ञानिक विधियों के तीव्र विकास के साथ भूगोल के विषय-क्षेत्र को सीमित करने का प्रयास किया गया। इस अवधि में उच्चावच के लक्षणों के अध्ययन पर विशेष बल दिया गया। संभवत: अधिक तीव्रता से बदलते सांस्कृतिक लक्षणों की तुलना में पृथ्वी के अपेक्षाकृत स्थिर लक्षणों का वर्णन करना सरल था। उच्चावच के लक्षणों का अनेक प्रकार से मापन तथा परीक्षण किया गया। इसी कार्य के फलस्वरूप भूगोल की एक विशिष्ट शाखा का विकास हुआ जिसे *भूआकृति विज्ञान* कहा गया। भूआकृति विज्ञान नामक इस शाखा का विकास अन्य शाखाओं की अनदेखी करके किया गया। भौतिक लक्षणों के अध्ययन को आवश्यकता से अधिक महत्त्व देने वाली इस विचारधारा के प्रतिक्रियास्वरूप कुछ विद्वानों ने मानव तथा प्राकृतिक पर्यावरण के बीच के संबंधों की जाँच शुरू कर दी। इसके परिणामस्वरूप *'मानव भूगोल'* की शाखा का उद्भव हुआ।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध (1859) में चार्ल्स डार्विन की पुस्तक *ओरिजिन ऑफ स्पेशिज़* प्रकाशित हुई। इससे भौगोलिक अध्ययन की विशिष्ट शाखा के रूप में *मानव भूगोल* के विकास को प्रेरणा मिली। बकल ने अपनी पुस्तक *हिस्ट्री ऑफ सिविलाइज़ेशन ऑफ इंगलैंड* (1881) में मानव के अपने पर्यावरण पर आश्रित होने की अधिक विस्तार से व्याख्या करके, इस नए अध्ययन क्षेत्र अर्थात् मानव भूगोल का

समर्थन किया। फ्रेडरिक रैटजेल की पुस्तक *एंथ्रोपोज्योग्राफी* के प्रकाशन को भूगोल में मानव केंद्रिक विचारधारा को स्थापित करने के कारण युगांतरकारी घटना माना जाता है। रैटजेल को आधुनिक मानव भूगोल का जनक कहते हैं। इनके अनुसार मानव भूगोल *'भूपृष्ठ' मानव समाजों तथा पृथ्वी-तल के बीच संबंधों का संश्लिष्ट अध्ययन'* है। इसी प्रकार रैटजेल की एक शिष्या एलेन सेंपल के अनुसार मानव भूगोल *'अस्थिर पृथ्वी एवं अथक मानव के परस्पर परिवर्तनशील संबंधों का अध्ययन'* है। फ्रांसिसी विद्वान वाइडल डी ला ब्लाश की प्रसिद्ध पुस्तक *प्रिंसिपल्स डी ज्याग्राफ्री ह्यूमेन* में उन्होंने बताया कि मानव भूगोल '*पृथ्वी एवं मनुष्य के बीच पारस्परिक संबंधों को एक नई समझ* देता है।' इसमें पृथ्वी को नियंत्रित करने वाले भौतिक नियमों के ज्ञान तथा पृथ्वी पर निवास करने वाले जीवों के पारस्परिक संबंधों का संश्लेषण समाविष्ट होता है।

मानव और प्रकृति की भूमिकाएँ सक्रिय एवं निष्क्रिय दोनों ही होती हैं। मानव निरंतर ही क्रिया एवं प्रतिक्रिया में संलग्न रहता है। मानव के विकास की कहानी, स्थान एवं समय दोनों ही संदर्भों में, मनुष्य के अपने भौगोलिक वातावरण के साथ अनुकूलन की प्रक्रिया है। एल्सवर्थ हंटिंग्टन ने मानव भूगोल को *'भौगोलिक पर्यावरण तथा मानवीय क्रियाकलापों के पारस्परिक संबंधों के अध्ययन'* के रूप में परिभाषित किया है। इस प्रकार मानव और पर्यावरण के संबंध गतिशील हैं, न कि स्थिर। जीन ब्रूंस एक अन्य प्रसिद्ध फ्रांसिसी भूगोलविद् ने इसकी व्याख्या *'मानवीय घटनाओं के चढ़ाव-उतार के रूप'* में की, जो स्थलीय घटनाओं की भाँति स्थिर नहीं रहते। अत: हमें उनका अध्ययन विकास के रूप में करना चाहिए।

विभिन्न विद्वानों द्वारा समय-समय पर मानव भूगोल को परिभाषित किया गया है। प्रारंभिक विद्वानों जैसे अरस्तू, बकल, हंबोल्ट और रिटर ने इतिहास पर भूमि के प्रभाव को प्रमुखता दी। बाद में रैटजेल तथा सेंपल के कार्यों में अध्ययन का केंद्र बिंदु बदल गया। इस बात पर अधिक बल दिया जाने लगा कि भौतिक पर्यावरण किस प्रकार मानवीय क्रियाओं को प्रभावित करते हैं। ब्लाश ने पारिस्थितिकी एवं स्थलीय एकता को मानव भूगोल के दो सिद्धांतों के रूप में देखा। हंटिंग्टन ने समाज, संस्कृति और इतिहास पर जलवायु के प्रभाव को महत्त्व दिया। इस प्रकार, उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि इन सभी रचनाओं में मानव समाज तथा पर्यावरण के बीच संबंधों के अध्ययन को ही प्रमुखता दी गई है।

मानव भूगोल का विषय-क्षेत्र

मानव भूगोल एक अति विस्तृत विषय है। इसका उद्भव कुछ देशों में सामाजिक विज्ञानों से हुआ है जो दिक् एवं स्थान के संदर्भ में मनुष्यों का अध्ययन करते हैं। अन्यत्र यह भौतिक विज्ञानों से और कुछ देशों में भू-विज्ञानों से संबद्ध रहा जिसमें अध्ययन का केंद्र मानव का भौतिक पर्यावरण से संबंध था। अमेरिकी भूगोलवेत्ताओं फिंच एवं ट्रिवार्था ने मानव भूगोल की विषय-वस्तु को दो मुख्य भागों में बाँटा : *भौतिक* या *प्राकृतिक पर्यावरण* और *सांस्कृतिक* या *मानव-निर्मित पर्यावरण* ।

भौतिक या प्राकृतिक पर्यावरण के अंतर्गत भौतिक लक्षण जैसे जलवायु, धरातलीय उच्चावच एवं अपवाह प्रणाली तथा प्राकृतिक संसाधन जैसे मृदा, खनिज, जल एवं वन आते हैं। *सांस्कृतिक पर्यावरण* के अंतर्गत पृथ्वी पर मानव निर्मित लक्षण जैसे, जनसंख्या और मानव बस्तियाँ एवं कृषि, विनिर्माण उद्योग, परिवहन आदि को सम्मिलित किया जाता है। एल्सवर्थ हंटिंग्टन (1956) के अनुसार *मानव भूगोल भौतिक दशाओं तथा भौतिक पर्यावरण के साथ मानव की अनुक्रियाओं से संबंधित है* (सारणी 1.1)।

वाइडल डी ला ब्लाश की पुस्तक मानव भूगोल में जनसंख्या तथा बस्तियों के विश्व वितरण, सभ्यता को प्रभावित करने वाले तत्त्वों के प्रकार एवं वितरण और परिवहन के विभिन्न प्रकारों के विकास का विवेचन किया गया है। ये सभी तत्त्व भू-दृश्य को अत्यधिक परिवर्तित करते हैं। जीन ब्रूंस ने अपने मानव भूगोल की पुस्तक में इस विषय को तीन वर्गों और छ: प्रकार के आवश्यक तथ्यों के अध्ययन के रूप में विभाजित किया है। ये तथ्य हैं : मृदा के अनुत्पादक व्यवसाय से संबंधित तथ्य जैसे (i) *मकान* और (ii) *सड़कें ;* वनस्पति और जीव जगत पर मानव विजय से संबंधित तथ्य जैसे (iii) *कृषि* और (iv) *पशुपालन* तथा मृदा के विनाशकारी उपयोग से संबंधित तथ्य जैसे (v) *पौधों एवं पशुओं का विनाश* तथा (vi) *खनिजों का अवशोषण* ।

ऊपर वर्णित आवश्यक तथ्यों के अतिरिक्त मानव भूगोल निम्नलिखित मानवीय-पर्यावरण के पक्षों के अध्ययन से भी संबंधित है :

सर्वप्रमुख आवश्यकताओं का भूगोल : आधारभूत भौतिक आवश्यकताएँ- भोजन, मकान एवं वस्त्र;

पृथ्वी के संसाधनों के उपयोग का भूगोल : वे भौतिक वस्तुएँ जो मानव जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं को

सारणी - 1.1 हंटिंग्टन के अनुसार मानव भूगोल के तत्त्व
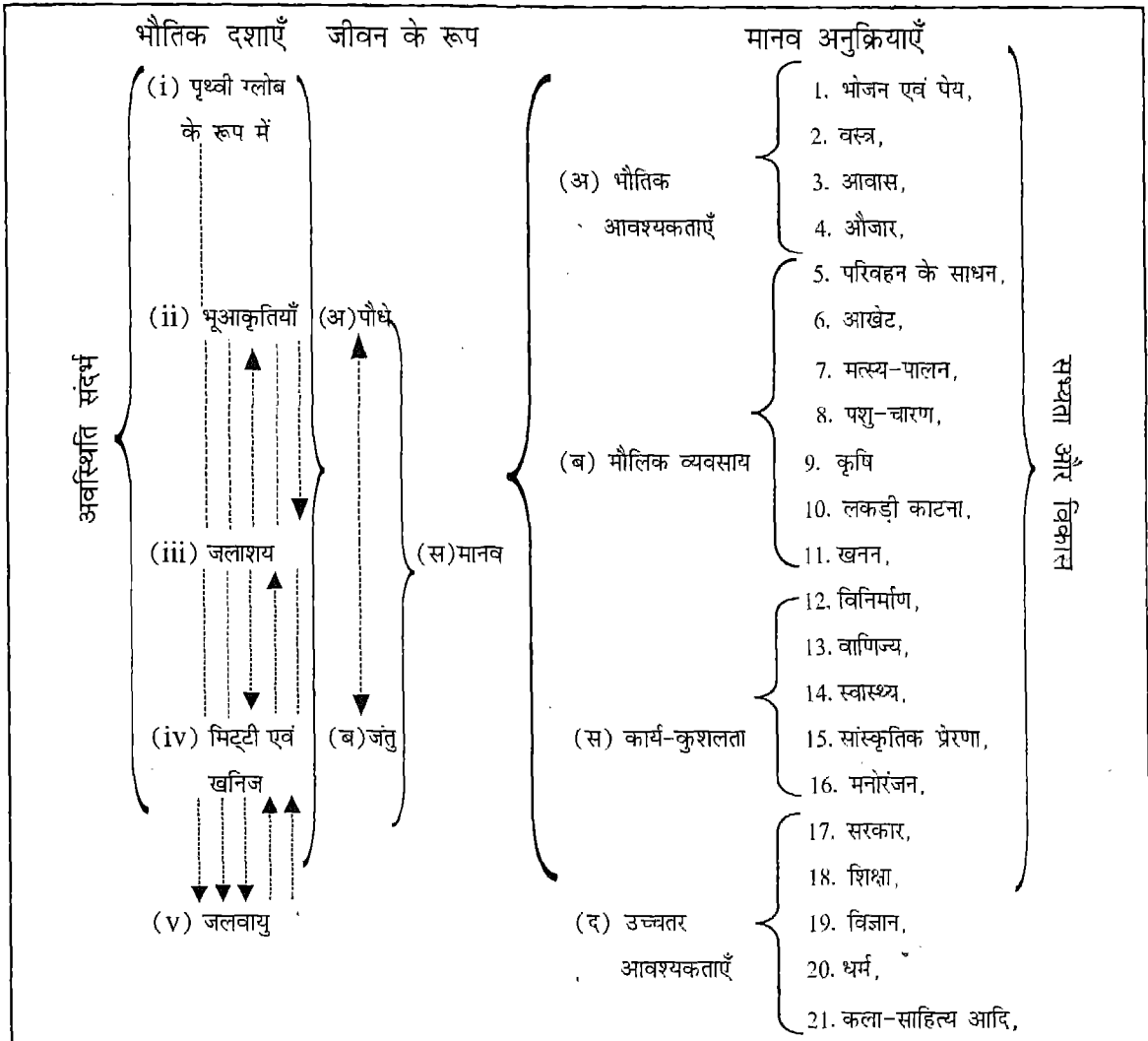
नोट : तीर तथा उनके विस्तार, उन तरीकों का संकेत करते हैं, जिनमें भौतिक दशाएँ एक दूसरे को प्रभावित करती हैं। उदाहरण के लिए जलवायु, पृथ्वी की गोल आकृति, धरातल के लक्षणों तथा महासागर जैसे जलाशयों से प्रभावित होती है। बदले में यह धरातल के लक्षणों, मिट्टी की गुणवत्ता और खनिज निक्षेपों के स्वरूप को प्रभावित करती है। यह जलाशयों को भी प्रभावित करती है.......... लेकिन स्पष्टता की दृष्टि से कुछ को छोड़ दिया गया है।

पूरा करती हैं- कृषि, पशुचारण एवं औद्योगिक क्रियाकलाप;

आर्थिक एवं सामाजिक भूगोल : उत्पादन, परिवहन, और विनिमय तथा सांस्कृतिक भूगोल;

राजनीतिक भूगोल एवं ऐतिहासिक भूगोल : सीमाएँ, राज्य क्षेत्र, मार्ग एवं राज्यों के समूह आदि।

मानव भूगोल की विषय वस्तु में समय के साथ वृद्धि और समुचित विस्तार हो रहा है। बीसवीं सदी के प्रारंभ में सांस्कृतिक एवं आर्थिक पक्षों पर विशेष ध्यान दिया जाता था। किंतु कालांतर में नई चुनौतियों एवं समस्याओं के अध्ययन के लिए अनेक नई शाखाओं का उदय हुआ। राजनीतिक आयाम, सामाजिक औचित्य, नगरीकरण एवं नगरीय प्रणाली, स्वास्थ्य एवं सामाजिक सुविधाएँ, लिंग असमानता और जन-नीति आदि कुछ ऐसी ही चुनौतियाँ और समस्याएँ हैं। ऐसा करते समय मानव भूगोल न केवल एकीकरण तथा अंतर्विषयक गुणों से परिपूर्ण हुआ है अपितु इसमें अध्ययन की कई नई विधियाँ

भी जोड़ी गई हैं। इसने दूसरे सामाजिक विज्ञानों में आवश्यक क्षेत्रीय आयाम या क्षेत्र संबंधी विचार को सम्मिलित कराने का भी कार्य किया, जिसकी उन विषयों में कमी थी। इसके साथ ही मानव भूगोल में विश्लेषण हेतु दूसरे सामाजिक विज्ञानों से सहयोग लिया जाता है, जो इसके उप-क्षेत्र के रूप में पहचाने जाते हैं जैसे *व्यावहारिक भूगोल, राजनीतिक भूगोल, आर्थिक भूगोल*, और *सामाजिक भूगोल*।

मानव भूगोल में भूगोल विषय की भाँति, एक दूसरे से निकट रूप से संबंधित तीन कार्यों को संपन्न किया जाता है:

(i) भूपृष्ठ पर मानव निर्मित घटनाओं का स्थानिक अथवा स्थिति संबंधी विश्लेषण करना। इसका संबंध संख्याओं, विशेषताओं, क्रियाकलापों और वितरणों से होता है। इन विशेषताओं को प्रभावशाली ढंग से मानचित्रों द्वारा प्रदर्शित करते हैं। कारक, जिनसे निश्चित क्षेत्रीय प्रतिरूप बनते हैं, उनका वर्णन किया जाता है। अधिक महत्वपूर्ण तथा उच्च दक्षता या साम्य वाले वैकल्पिक क्षेत्रीय प्रतिरूपों को प्रस्तावित किया जाता है। यहाँ क्षेत्रों के बीच स्थानिक विभिन्नता को बल दिया जाता है। तत्वों के बीच के संबंधों को दो प्रकार से देखा जा सकता है, मनुष्य का प्रदेश पर प्रभाव और पर्यावरण का मनुष्य पर प्रभाव।

(ii) पारिस्थितिक विश्लेषण, जिसमें एक भौगोलिक प्रदेश के भीतर मानव और पर्यावरण के संबंधों के अध्ययन को प्रमुखता दी जाती है।

(iii) प्रादेशिक संश्लेषण, जिसमें स्थानिक एवं पारिस्थितिक उपागमों को एक साथ मिला दिया जाता है। प्रदेशों की पहचान कर ली जाती है। यहाँ अध्ययन का उद्देश्य आंतरिक आकृति, पारिस्थितिक सहलग्नता और बाह्य संबंधों की समझ पैदा करना होता है।

इस संबंध की गवेषणा विभिन्न स्थानिक मापकों पर की जाती है, जो वृहत् स्तर जैसे, विश्व के मुख्य प्रदेशों से लेकर मध्यम स्तर और सूक्ष्म स्तर जैसे, व्यक्ति या समूह और उनके निकटवर्ती भूभाग तक हो सकती है। इसमें मानव को विश्लेषण का आधार बनाया जाता है : वे कहाँ हैं ? वे वहीं पर क्यों हैं ? क्या वे आपस में एक जैसे हैं ? वे क्षेत्र में कैसे अंतर्क्रिया करते हैं ? और वे अपने प्राकृतिक परिवेश में किस प्रकार के सांस्कृतिक भूदृश्य की रचना कर रहे हैं ? ऐसे विभिन्न प्रश्नों के उत्तर एक भूगोलवेत्ता द्वारा अपनाए जाने वाले आधारभूत तरीकों से ही प्राप्त करना होता है : कौन कहाँ है और कैसे एवं क्यों वह वहाँ है ? यही नहीं, हम यह भी जानना चाहते हैं कि हमारे लिए, हमारी संतानों के लिए और भावी पीढ़ी के लिए इसका अर्थ क्या है ?

मानव भूगोल के अध्ययन की विधियाँ

मानव भूगोल की मुख्य विषय-वस्तु, मानव और पर्यावरण के संबंधों की विवेचना अनेक प्रकार से की गई है। इस संबंध के परीक्षण के लिए उत्तर डार्विन काल में बहुत से नए तरीके अपनाए गए हैं। समय के साथ-साथ मानव भूगोल की विषय-वस्तु को पढ़ने के तरीके भी बदलते रहे हैं। ये परिवर्तन केवल मानव भूगोल में ही अकेले नहीं हुए हैं, अपितु संपूर्ण भूगोल जगत में होने वाले परिवर्तनों के साथ ही घटित हुए हैं। इन प्रवृत्तियों की विवेचना नीचे की जा रही हैं।

नियतिवाद अथवा *निश्चयवाद* की विचारधारा के अनुसार मनुष्य के प्रत्येक क्रियाकलाप को पर्यावरण से नियंत्रित माना जाता है। इस प्रकार किसी सामाजिक समूह, समाज या राष्ट्र का इतिहास, संस्कृति, जीवन-शैली और विकास की अवस्था मुख्य रूप से पर्यावरण के भौतिक कारकों के द्वारा नियंत्रित होती है। धरातलीय स्वरूप, जलवायु, वनस्पति और जीव-जंतु पर्यावरण के भौतिक कारक हैं। नियतिवादी सामान्यत: मानव को एक निष्क्रिय कारक समझते हैं, जो पर्यावरणीय कारकों से प्रभावित होता है। ये कारक मानव के आचरण, निर्णय क्षमता तथा जीवन पद्धति को भी निश्चित करते हैं। हिपोक्रेट्स, अरस्तु, हेरोडोटस, स्ट्रैबो आदि रोमन और यूनानी विद्वानों ने सर्वप्रथम मानव पर प्राकृतिक दशाओं के प्रभाव की विवेचना की थी। इन्होंने विभिन्न जाति समूहों के शारीरिक लक्षणों और उनकी संस्कृति पर भौतिक कारकों के प्रभाव का विशेष रूप से अध्ययन किया था।

भौगोलिक साहित्य में नियतिवाद की संकल्पना, अल-मसूदी, अल-इदरिसी और इब्न-खल्दून, कांट, हंबोल्ट, रिटर और रैटजेल जैसे विद्वानों के कार्यों से लेकर बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक दशक तक आगे बढ़ती रही। इस विचारधारा का विस्तृत विकास, विशेषत: संयुक्त राज्य अमेरिका में, एलेन सेंपल तथा एल्सवर्थ हंटिंग्टन के लेखों से हुआ, जो इसके सबसे बड़े समर्थक थे।

नियतिवादी दर्शन की मूलरूप से दो आधारों पर आलोचना की गई :

(i) यह स्पष्ट हो चुका है कि निश्चित दशाओं और परिस्थितियों में समान भौतिक पर्यावरण समान अनुक्रियाएँ

उत्पन्न नहीं करता। भूमध्यसागरीय प्रदेश में स्थित यूनान और रोम में जैसी सभ्यताओं का विकास हुआ, वैसी सभ्यताएँ आस्ट्रेलिया, चिली, दक्षिण अफ्रीका और कैलीफोर्निया के भूमध्यसागरीय जलवायु वाले प्रदेशों में विकसित नहीं हुईं।

(ii) यद्यपि पर्यावरण मानव को प्रभावित करता है, लेकिन मानव भी पर्यावरण को प्रभावित करता है। इसकी व्याख्या करने में नियतिवाद का 'कारण और प्रभाव संबंध' का सिद्धांत सक्षम नहीं है।

इस प्रकार नियतिवाद से उत्पन्न यह विचार कि '*मनुष्य प्रकृति का दास है*' अस्वीकृत कर दिया गया। दूसरे भूगोलवेत्ताओं ने इस बात पर बल देना प्रारंभ किया कि मनुष्य प्रकृति के तत्वों को चुनने के लिए स्वतंत्र होता है। जब प्रकृति की तुलना में मनुष्य को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया जाए और जब मानव को अकर्मक या निष्क्रिय से सक्रिय शक्ति के रूप में देखा जाए तो यह धारणा *संभावनावाद* कहलाती है।

लूसियन फेबव्रे ने सबसे पहले संभावनावाद शब्द का प्रयोग किया। इनके अनुसार *कहीं कोई अनिवार्यता नहीं, सर्वत्र संभावनाएँ हैं और मनुष्य इन संभावनाओं का स्वामी होने के नाते उनके उपयोग का निर्णयकर्ता* है। यद्यपि संभावनावाद की संकल्पना प्रथम विश्वयुद्ध के बाद काफी प्रसिद्ध हुई, फ्रांसिसी विद्वान वाइडल डी ला ब्लाश ने व्यवस्थित तरीके से इस विचारधारा का प्रचार-प्रसार कर उसे आगे बढ़ाया। उनके अनुसार *मनुष्य की जीवन शैली उसकी सभ्यता का दर्पण एवं प्रतिफल होता* है। यह मनुष्य और उसके निवास स्थल के संबंधों को नियंत्रित करने वाले भौतिक, ऐतिहासिक और सामाजिक प्रभावों का समन्वित परिणाम है। उन्होंने समान पर्यावरण के भीतर मानव समूहों के बीच के अंतर को स्पष्ट करने का प्रयास किया और बताया कि ये विभिन्नताएँ भौतिक पर्यावरण के दबाव के प्रतिफल नहीं, अपितु कुछ दूसरे कारकों जैसे लोगों की मनोवृत्ति, मानव मूल्यों एवं आदतों में परिवर्तन का परिणाम होता है। यही संकल्पना संभावनावादियों के लिए आधारभूत दर्शन बना। संभावनावाद के पक्षधरों ने भौतिक पर्यावरण में, मनुष्य को अपने लाभ के लिए उनका शोषण करने की अनेक संभावनाएँ देखीं। यह अनुभव किया गया कि मानव के सांस्कृतिक स्तर, संदर्भ एवं तकनीकी उन्नति ही यह निश्चित करते हैं कि पर्यावरण का उपयोग किस प्रकार होगा। अतिविषम जलवायु तथा प्रतिकूल धरातलीय विशेषताओं वाले प्रदेशों को कदाचित् इससे अलग रखा गया।

यद्यपि प्रकृति ने मानव को विकास के लिए बहुत अवसर प्रदान किए हैं, लेकिन उसने इस पर एक अंतिम सीमा भी तय कर दी है। इस सीमा को पार करके उसे वापस लौटने का अवसर नहीं मिलता। अतः संभावनावाद की विचारधारा की अनेक समकालीन विचारकों ने आलोचना की। संभावनावाद की आलोचना करते हुए ग्रिफिथ टेलर ने *नव-नियतिवाद* की विचारधारा को प्रस्तुत किया। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि भूगोलवेत्ता का मुख्य कार्य एक सलाहकार का है, न कि प्रकृति की योजनाओं की व्याख्या करना।

नवीन परिवर्तन

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद शैक्षिक जगत समेत अनेक क्षेत्रों में तेजी से विकास हुआ। सामान्य रूप से भूगोल और विशेष रूप से मानव भूगोल ने मानव समाज की समकालीन समस्याओं और मुद्दों के समाधान प्रस्तुत किए। इस अवधि में मानव कल्याण से संबंधित नई समस्याएँ जैसे गरीबी, सामाजिक व प्रादेशिक असमानता, समाज कल्याण तथा सशक्तिकरण आदि को समझने में पारंपरिक विधियाँ असमर्थ थीं। फलस्वरूप समय-समय पर नई विधियाँ अपनाई गईं। उदाहरण के लिए पचास के दशक के मध्य में *प्रत्यक्षवाद* के रूप में नई विचारधारा का जन्म हुआ। इसने मात्रात्मक विधियों के उपयोग पर अधिक बल दिया, ताकि विभिन्न कारकों के भौगोलिक प्रतिरूपों के अध्ययन के समय विश्लेषण को अधिक वस्तुनिष्ठ बनाया जा सके। बी. जे. एल. बेरी, विलियम बंग और डेविड हार्वे सदृश विद्वानों ने इस विचारधारा की वकालत की। बाद में इस विचारधारा की भी आलोचना, तथाकथित नीरस मात्रात्मक तकनीकों पर आवश्यकता से अधिक बल दिए जाने के कारण की गई, क्योंकि इस विधि से मानव की निर्णय क्षमता, विश्वास तथा भय जैसे मानवोचित गुणों के विश्लेषण पर ध्यान नहीं दिया गया। तदंतर प्रत्यक्षवाद के विरोधस्वरूप मनोविज्ञान से ली गई संकल्पना पर आधारित *व्यवहारगत* विचारधारा का उदय हुआ, जिसमें मानव की ज्ञान शक्ति पर विशेष बल दिया गया।

विश्व के विभिन्न प्रदेशों तथा देशों के भीतर तथा पूँजीवाद के प्रभाव से विभिन्न सामाजिक समूहों के भीतर बढ़ती असमानता के कारण मानव भूगोल में *कल्याणपरक विचारधारा का* जन्म हुआ। निर्धनता, विकास में प्रादेशिक असमानता, नगरीय झुग्गी-झोंपड़ियों और अभावों जैसे विषय

भौगोलिक अध्ययन के केंद्र बन गए। डी. एम. स्मिथ और डेविड हार्वे जैसे कुछ प्रसिद्ध विद्वानों ने इस विचारधारा का प्रचार किया। कल्याणपरक विचारधारा का मूलबिंदु रहा : कौन कहाँ क्या पाता है और कैसे ? यहाँ 'कौन' से तात्पर्य समीक्षा के लिए चुना गया क्षेत्र है। 'क्या' से तात्पर्य विभिन्न अच्छे और बुरे वस्तुओं, सेवाओं, पर्यावरणीय गुणवत्ता आदि से है, जिनका लोग आनंद लेते हैं या जिन्हें सहते हैं। 'कहाँ' से यह तथ्य प्रकट होता है कि निवास के क्षेत्र के अनुसार जीवन स्तर भिन्न होते हैं। 'कैसे' उस प्रक्रिया की ओर ध्यान दिलाता है, जिसके द्वारा विभिन्नताएँ पैदा होती हैं। कल्याणपरक विचारधारा अब दूसरी खोज पद्धतियों के साथ समाहित हो गई है।

मानवतावाद भी मानव भूगोल की एक और विचारधारा है, जिसमें मानव-जागृति, मानव-साधन, मानव चेतना और मानव की सृजनात्मकता के संदर्भ में मनुष्य की केंद्रीय एवं क्रियाशील भूमिका पर बल दिया जाता है। दूसरे शब्दों में यह विचारधारा स्वयं मनुष्य पर केंद्रित है।

विगत चार दशकों में मानव भूगोल में नई विचारधाराओं का तेजी से विकास हुआ है। इसका प्रमुख कारण मानव भूगोल में मानवीय परिघटनाओं के प्रतिरूपों के वर्णन के स्थान पर इन प्रतिरूपों के पीछे कार्यरत प्रक्रियाओं को समझना है। इस प्रक्रिया में मानव भूगोल अब अधिक मानवीय हो गया है।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए :
   - (i) *ज्यॉग्राफिया जनरेलिस* (सामान्य भूगोल) किसने लिखा ?
   - (ii) मानव भूगोल का उद्भव कब भौगोलिक अध्ययन की एक विशेष शाखा के रूप में हुआ ?
   - (iii) फ्रेडरिक रैटजेल की पुस्तक *एन्थ्रोपोज्याग्राफी* का प्रकाशन एक युगांतरकारी घटना क्यों कहलाती है ?
   - (iv) उस फ्रांसिसी विद्वान का नाम बताइए जिसने *प्रिंसिपल्स डी ज्यॉग्राफी ह्यूमेन* नामक पुस्तक लिखी।
   - (v) जीन ब्रूंस द्वारा बताए गए मानव भूगोल के छः प्रकार के आवश्यक तथ्य कौन से हैं ?
   - (vi) मानव भूगोल का अध्ययन करने के लिए लूसियन फेबव्रे तथा वाइडल डी ला ब्लाश ने किस विचारधारा का अनुसरण किया था ?
2. अंतर बताइए :
   - (i) नियतिवाद और संभावनावाद
   - (ii) प्रत्यक्षवाद और मानवतावाद
3. एक अलग अध्ययन क्षेत्र के रूप में विकसित होने के बाद से मानव भूगोल के विकास की विवेचना कीजिए।
4. बीसवीं सदी के प्रारंभ में मानव भूगोल और अधिक समन्वयकारी और अंतर्विषयक विषय कैसे बन गया है, इसकी व्याख्या कीजिए।
5. "द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् मानव भूगोल ने मानव समाज की समकालीन समस्याओं तथा चुनौतियों के समाधान प्रस्तुत किए।" इस कथन की विवेचना कीजिए।

इकाई II
लोग

2 अध्याय

विश्व की जनसंख्या : प्रवृत्तियाँ एवं प्रतिरूप

मनुष्य, मानव भूगोल के केंद्र बिंदु हैं। संसाधनों के उत्पादक, निर्माता तथा उपयोगकर्त्ता के रूप में वे पर्यावरण को प्रभावित करने के साथ-साथ उसे समयानुसार परिवर्तित भी करते हैं। मनुष्य अपनी आर्थिक क्रियाओं द्वारा भौतिक पर्यावरण को कैसे प्रभावित करते हैं ? इसका अध्ययन करने से पहले मानव की कुल जनसंख्या, वितरण, घनत्व, वृद्धि तथा जनांकिकी की संरचना की जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। यद्यपि भौतिक दशाएँ मानवीय जनसंख्या के वितरण तथा वृद्धि को सर्वाधिक प्रभावित करती हैं, लेकिन मनुष्य विभिन्न पर्यावरणीय दशाओं के अनुरूप अपने आपको ढालने की अदभुत क्षमता भी रखते हैं। अत: कुल जनसंख्या, उसका घनत्व तथा उसके गुणों का अध्ययन, किसी पर्यावरणीय संदर्भ में जनांकिकी प्रक्रियाओं तथा प्रभावों के विश्लेषण में सहायता प्रदान करता है।

जनसंख्या वितरण और घनत्व

मनुष्य पृथ्वी पर हजारों वर्षों से रहते आ रहे हैं, किंतु बहुत लंबी अवधि तक उनकी संख्या सीमित ही रही। विगत कुछ सौ वर्षों में ही जनसंख्या में चिंताजनक वृद्धि अंकित की गई है (चित्र 2.1)।

इक्कीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में विश्व की कुल जनसंख्या 6 अरब हो गई। मात्र एक शताब्दी में ही यह 1.6 अरब से चार गुनी बढ़ गई। हम प्रतिवर्ष आठ करोड़ व्यक्ति जोड़ रहे हैं। वास्तव में गत 500 वर्षों में मानव जनसंख्या में दस गुने से अधिक की वृद्धि हुई है।
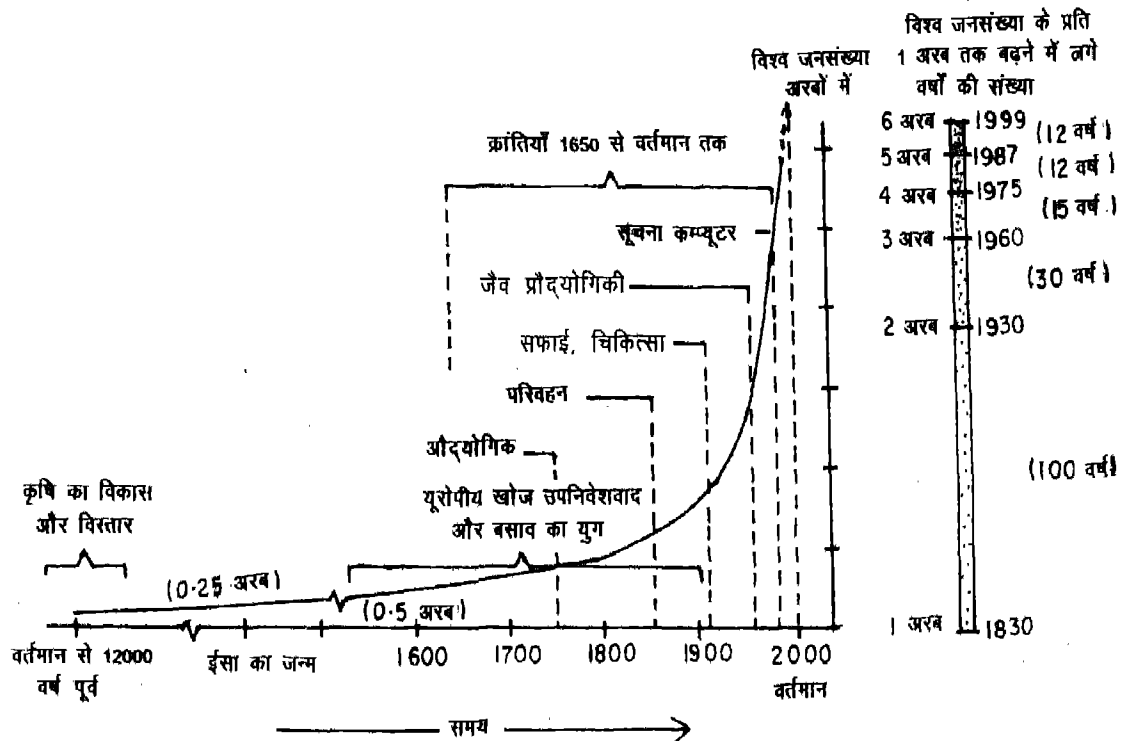
चित्र 2.1 : संसाधन, प्रौद्योगिकी और जनसंख्या वृद्धि

जनसंख्या महाद्वीपों पर असमान रूप से वितरित है। मानव का संकेंद्रण संसार के कुछ क्षेत्रों में ही अत्यधिक है और बहुत बड़े भाग में कम या बिलकुल नहीं। ऐसा क्यों हैं? वस्तुत: पृथ्वी पर जनसंख्या के असमान वितरण एवं वृद्धि को अनेक कारकों ने प्रभावित किया है।

जनसंख्या के वितरण को प्रभावित करने वाले कारक

भौतिक कारक

धरातल पर जनसंख्या के वितरण तथा वृद्धि को प्रभावित करने में भौतिक विशेषताओं का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। उच्चावच, जलवायु, मृदा, प्राकृतिक वनस्पति, जल तथा खनिज संपदा कुछ महत्त्वपूर्ण भौतिक कारक हैं। पर्वतीय तथा ऊबड़-खाबड़ प्रदेश मानव बसाव के लिए अनुपयुक्त होते हैं। अनुकूल भौतिक पर्यावरण को हमेशा ही पसंद किया गया है। हजारों वर्ष पहले पश्चिमी एशिया और मिस्र की मरुभूमि, वहाँ बहने वाली दज़ला, फरात और नील नदियों के कारण अत्यधिक उपजाऊ भू-भाग थे। इसीलिए वहाँ प्राचीन सभ्यताओं का विकास हुआ।

सामान्यत: मैदान, आर्द्र जलवायु, उपजाऊ मृदा और लंबे वर्धन काल वाले प्रदेशों में सघन जनसंख्या पाई जाती है। इसके विपरीत कठोर या विषम जलवायु और अनुर्वर मृदा वाले प्रदेशों में जनसंख्या विरल पाई जाती है। तथापि भौतिक पर्यावरण में मानवीय परिवर्तन ने जनसंख्या वितरण प्रतिरूप को अत्यधिक बदल दिया है।

सांस्कृतिक कारक

जनसंख्या के वितरण में मनुष्य की संस्कृति की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। प्राचीन परंपराएँ तथा व्यवहार, धर्म और भाषा भी जनसंख्या के संकेंद्रण तथा बिखराव को प्रभावित करते है। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका के विभिन्न भागों में जर्मन, स्पैनिश, फ्रांसिसी तथा चीनी जैसी अलग-अलग राष्ट्रीयताओं के लोगों का जमाव, स्पष्टत: उनकी अपनी पसंद को प्रकट करता है। इस जमाव का मुख्य कारण लोगों का अपनी-अपनी संस्कृति से जुड़ा होना ही है।

आर्थिक कारक

कठिन आर्थिक दशाओं, बेरोजगारी, धर्म, जातीय या राजनीतिक असहिष्णुता, वर्ग संघर्ष तथा युद्ध जैसे विभिन्न *प्रतिकर्ष कारकों* के प्रभाव से लोग एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में प्रवास कर सकते हैं। दूसरी ओर उन्नत आर्थिक अवसर जैसे *अपकर्ष कारक* लोगों को किसी स्थान पर आकर्षित कर सकते हैं। आधुनिक विश्व के विविध बस्ती प्रतिरूप प्रतिकर्ष एवं अपकर्ष कारकों के सम्मिलित प्रभाव को दर्शाते हैं। उदाहरणार्थ लगभग दस लाख से अधिक आइरिश लोग अपने देश में 1864 के आलू अकाल के पश्चात् उत्तर अमेरिका में जाकर बस गए। इन आप्रवासियों को सस्ती कृषि भूमि और कारखानों में रोजगार मिल गया। उनके मित्रों और रिश्तेदारों के द्वारा उत्तर अमेरिका में रोजगार के अधिक अवसर होने की खबर यूरोप और एशिया में पहुँची तो प्रवासियों के समूह वहाँ जाकर बसने लगे। संयुक्त राज्य अमेरिका तथा दूसरे विकसित देशों में आजकल भारत से कंप्यूटर-विशेषज्ञों (पेशेवर लोगों) का जाना, इस तरह का एक अन्य उदाहरण है।

राजनीतिक कारक

आर्थिक कठिनाईयों, राजनीतिक अशांति और युद्ध के कारण जनसंख्या का स्थानांतरण इतिहास की अभूतपूर्व घटना है। विगत दशकों की कुछ घटनाओं ने लाखों लोगों को शरणार्थी बना दिया है। ऐसी घटनाओं में फारस की खाड़ी का युद्ध, कांगो लोकतांत्रिक गणतंत्र (जायर), इथियोपिया, सूडान और चाड के गृह युद्ध, रवांडा और श्रीलंका के जातीय झगड़े एवं क्रांतियाँ, हैती की सैनिक क्रांतियाँ, सोवियत संघ का विघटन तथा 15 स्वतंत्र राष्ट्रों का उदय, जातीय विभेद के आधार पर यूगोस्लाविया तथा चेकोस्लोवाकिया का अनेक गणराज्यों में विघटन और चीन का तिब्बत की जनसंख्या पर प्रभाव आदि प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय सरकारों के राजनीतिक नियंत्रण एवं उसकी नीतियों ने भी जनसंख्या वृद्धि, ह्रास अथवा प्रवास को प्रेरित किया है।

संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि वर्तमान जनसंख्या प्रतिरूप गतिशील हैं और वे नयी तथा पुरानी, दोनों ही प्रकार की जनांकिकीय प्रवृत्तियों को प्रतिबिंबित करते हैं। उदाहरणार्थ, चीन, भारत और दक्षिण-पूर्व एशिया की बड़ी नदी घाटियों तथा डेल्टाई भागों में कृषि के उच्च उत्पादन के फलस्वरूप लंबे समय से बहुत बड़ी जनसंख्या का भरण-पोषण हो रहा है। दूसरी ओर, पश्चिमी यूरोप तथा उत्तर-पूर्वी संयुक्त राज्य अमेरिका में सघन नगरीय जनसंख्या के बसाव का कारण औद्योगिक क्रांति, आर्थिक विकास तथा उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में वृहत् स्तर पर हुआ प्रवास है। चीन तथा भारत जैसे विकासशील देशों में गाँवों से नगरीय क्षेत्रों में

जनसंख्या के प्रवास के लिए प्रतिकर्ष और अपकर्ष कारक उत्तरदायी रहे हैं। अब विकसित देशों की तुलना में विकासशील देशों में महानगरों की संख्या अधिक हो गई है। आज जनसंख्या की सर्वाधिक वृद्धि अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका के कुछ भागों में हो रही है, जहाँ मृत्यु दर तेजी से घटी है, जबकि जन्म दर काफी ऊँची है।

जनसंख्या वितरण के प्रतिरूप

जनसंख्या वितरण और उसके घनत्व के प्रतिरूपों का विश्लेषण किसी क्षेत्र की जनांकिकीय विशेषताओं के अध्ययन का आधार होता है। *जनसंख्या वितरण* का अर्थ यह है कि पृथ्वी के धरातल पर लोग किस प्रकार फैले हैं। देशों के जनसंख्या आकार से वहाँ जनसंख्या की प्रवृत्तियों और प्रतिरूपों को अच्छी तरह से समझा जा सकता है, क्योंकि देश एक राजनीतिक तथा भौगोलिक इकाई होता है जिसमें जनसंख्या, पर्यावरण तथा संसाधनों से संबंधित निर्णय लिए जाते हैं। विश्व के दस सबसे अधिक जनसंख्या वाले देशों में संसार की लगभग 60 प्रतिशत जनसंख्या रहती है। इन दस देशों में से छः देश एशिया महाद्वीप में स्थित हैं (चित्र 2.2)। विश्व के पाँच व्यक्तियों में से एक चीन में निवास करता है तथा छः में से एक भारत में।
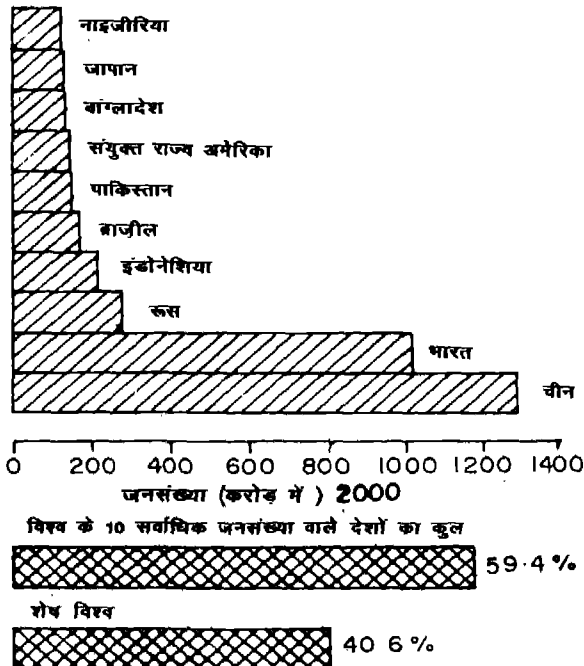
चित्र 2.2 : संसार के दस सर्वाधिक जनसंख्या वाले देश

जनसंख्या का घनत्व, जनसंख्या वितरण को विश्लेषित करने वाला एक और माप है। यह एक देश में जनसंख्या तथा क्षेत्रफल के बीच के अनुपात को प्रदर्शित करता है। *अंकगणितीय जनसंख्या घनत्व*, कुल जनसंख्या को कुल क्षेत्रफल से विभाजित कर प्राप्त करते हैं। यह जनसंख्या के संकेंद्रण की मात्रा को समझने का सबसे सरल तरीका है। यद्यपि घनत्व द्वारा एक प्रदेश या देश के भीतर जनसंख्या वितरण की विभिन्नताओं को अनदेखा कर दिया जाता है तथापि विभिन्न देशों की जनसंख्या विशेषताओं की तुलना करने की यह एक अच्छी विधि है। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका विश्व का तीसरा सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश है। साथ ही यह क्षेत्रफल की दृष्टि से भी विश्व का तीसरा सबसे बड़ा देश है। अतः यहाँ जनसंख्या घनत्व अपेक्षाकृत कम अर्थात् लगभग 28 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है (चित्र 2.3)। इसके विपरीत, यूरोप का कोई भी देश, विश्व के दस सर्वाधिक जनसंख्या वाले देशों में नहीं आता है। 8.2 करोड़ की जनसंख्या वाला जर्मनी संसार में 12वें स्थान पर है। तथापि रूस को छोड़ कर यूरोप के 40 स्वतंत्र देशों में सम्मिलित रूप से 58.2 करोड़ लोग रहते हैं। यह संयुक्त राज्य अमेरिका की जनसंख्या के दो गुने से अधिक है, जबकि इन देशों का सम्मिलित क्षेत्रफल संयुक्त राज्य अमेरिका के क्षेत्रफल का आधा ही है। इस प्रकार यूरोप का जनसंख्या घनत्व 104 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है जो संयुक्त राज्य अमेरिका के जनसंख्या घनत्व का लगभग चार गुना है।

साधारण अंकगणितीय घनत्व की तुलना में *कायिक या पोषक घनत्व*, मनुष्य और भूमि के अनुपात की गणना की अधिक परिष्कृत विधि है। इसमें कुल क्षेत्रफल की जगह कुल कृषि भूमि या फसल क्षेत्र से कुल जनसंख्या को विभाजित किया जाता है। यह कुल जनसंख्या और कुल कृषि क्षेत्र के बीच अनुपात है। विकासशील देशों में जहाँ जीवन निर्वाह कृषि, आर्थिक क्रियाओं में सबसे महत्त्वपूर्ण है, कायिक घनत्व से कृषि की गहनता प्रतिबिंबित होती है। एशिया के लगभग सभी अधिक जनसंख्या वाले विकासशील देशों जैसे — भारत, इंडोनेशिया, पाकिस्तान, बांग्लादेश आदि में औसतन प्रति व्यक्ति फसल क्षेत्र एक एकड़ से कम (0. 4 हेक्टेयर) है। भारत में एक हेक्टेयर कृषि भूमि पर 5 व्यक्ति, चीन में 12 व्यक्ति और संयुक्त राज्य अमेरिका में 1.5 व्यक्ति आश्रित हैं। अधिकांश कृषि प्रधान देशों में फसलों के लिए
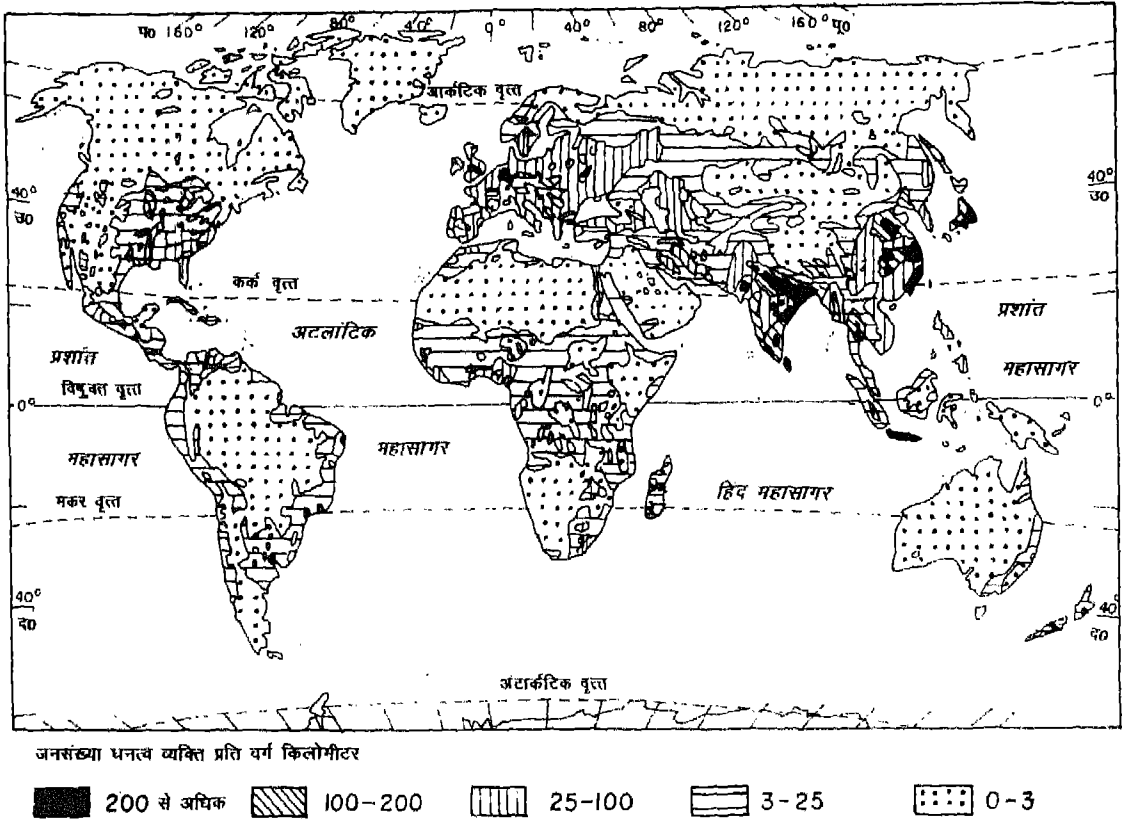
चित्र 2.3 : जनसंख्या घनत्व

उपयुक्त लगभग सभी भूमि पर खेती की जा रही है। अत: ज्यों-ज्यों जनसंख्या बढ़ रही है, अधिक से अधिक जनसंख्या को उपलब्ध कृषि क्षेत्र पर ही आश्रित होना पड़ रहा है। चूँकि कृषि उत्पादकता में स्थान-स्थान पर विभिन्नता पाई जाती है, अत: कायिक घनत्व भी जनसंख्या के दबाव का एक कामचलाऊ मापन ही प्रस्तुत करता है।

अंकगणितीय जनसंख्या घनत्व के आधार पर, विश्व मानचित्र पर दर्शाए गए जनसंख्या घनत्व को देखकर दो भिन्न प्रकार के क्षेत्र देखे जा सकते हैं। उच्च जनसंख्या घनत्व के कुछ ही क्षेत्र हैं और बहुत बड़ा भूभाग अल्प जनसंख्या घनत्व वाला या लगभग निर्जन क्षेत्र है।

उच्च जनसंख्या घनत्व के क्षेत्र

अनुकूल जलवायु वाले उपजाऊ मैदान तथा उच्च औद्योगीकृत और नगरीकृत क्षेत्र सामान्यत: घने आबाद हैं। संसार में 100 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. से अधिक उच्च जन घनत्व के चार प्रमुख क्षेत्र इस प्रकार हैं :

- पूर्व एशिया (चीन, जापान, कोरिया और ताइवान) ;
- दक्षिण तथा दक्षिण-पूर्व एशिया ;
- उत्तर-पश्चिम यूरोप (यूनाइटेड किंगडम, फ्रांस, जर्मनी, नीदरलैंड, बेल्जियम, लग्ज़ेमबर्ग, आयरलैंड, डेनमार्क, स्पेन, इटली) ; और
- उत्तर अमेरिका का पूर्वी तट।

वास्तविक अर्थों में, विश्व की लगभग आधी जनसंख्या मात्र 5 प्रतिशत क्षेत्र पर ही संकेंद्रित है, जबकि कुल क्षेत्रफल का 33 प्रतिशत भाग लगभग निर्जन है।

जनसंख्या का संकेंद्रण कुछ नगरीय क्षेत्रों में बहुत अधिक है। विगत दो शताब्दियों में औद्योगीकरण तथा आधुनिक प्रौद्योगिकी ने बस्तियों तथा जनसंख्या घनत्व के प्रतिरूपों को बदल डाला है। विकसित देशों की लगभग तीन चौथाई (75 प्रतिशत से अधिक) जनसंख्या आज नगरों में रहती है। जनसंख्या का संकेंद्रण प्रमुख महानगरीय क्षेत्रों में और उनके निकटवर्ती भागों में काफी अधिक है। उत्तर-पश्चिमी यूरोप को सबसे अधिक नगरीकृत प्रदेश माना जाता है, जहाँ उसकी

80 प्रतिशत जनसंख्या नगरों में रहती है। उत्तर अमेरिका में लगभग 75 प्रतिशत लोग नगर निवासी हैं। हांगकांग तथा सिंगापुर जैसे नगर राज्यों में जहाँ वास्तविक अर्थों में कोई ग्रामीण या कृषि क्षेत्र नहीं है, व्यावहारिक रूप से कुल जनसंख्या नगरीय है।

औद्योगीकरण और वाणिज्यीकरण की प्रक्रियाओं के कारण लोग गाँवों से नगरों में जाकर बस गए हैं। प्रौद्योगिकी ने अनेक आधुनिक नगरीय क्षेत्रों में कृत्रिम पर्यावरण को जन्म दिया। लॉस एंजिल्स, सैन डियागो, फीनिक्स तथा टकसान नगर कैलिफोर्निया और एरीजोना के मरुस्थलीय क्षेत्र में स्थित होते हुए भी तेजी से विकसित होकर महानगरीय क्षेत्रों में बदलते जा रहे हैं। इन नगरों में जल की आपूर्ति नहरों और कृत्रिम जल-प्रणालियों के जटिल तंत्रों से की जाती है।

निम्न घनत्व के सीमांत भूभाग

विश्व के अधिकांश देशों में वर्तमान जनसंख्या प्रतिरूप, अब भी खाद्य पदार्थ उत्पन्न करने वाले क्षेत्रों से परंपरागत संबंधों को प्रतिबिंबित करते हैं। अतः कृषि प्रतिकूल क्षेत्रों में अपेक्षाकृत कम जनसंख्या ही पाई जाती है। ये विरल जनसंख्या या जनविहीन अकृष्य क्षेत्र, जिन्हें सीमांत पर्यावरण के रूप में जाना जाता है, पृथ्वी के 60 प्रतिशत भूभाग पर फैले हुए हैं। इनमें निम्नलिखित सम्मिलित हैं -

शुष्क क्षेत्र : जहाँ वर्षा का अभाव कृषि को सीमित करता है और जहाँ सिंचाई करना संभव नहीं है।

शीत क्षेत्र : उच्च अक्षांशों में जहाँ तापमान बहुत कम होने के कारण कृषि नहीं की जा सकती।
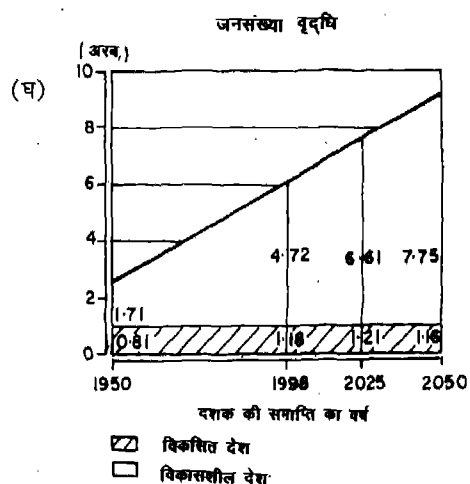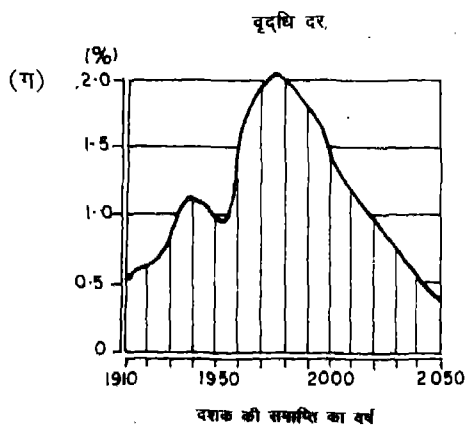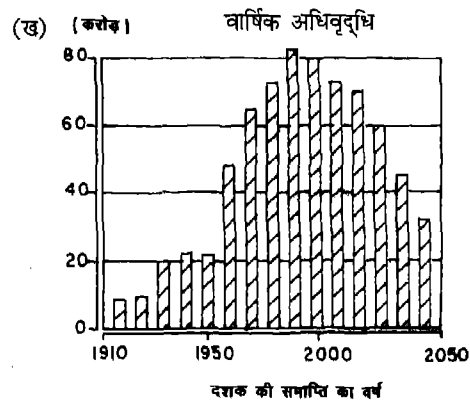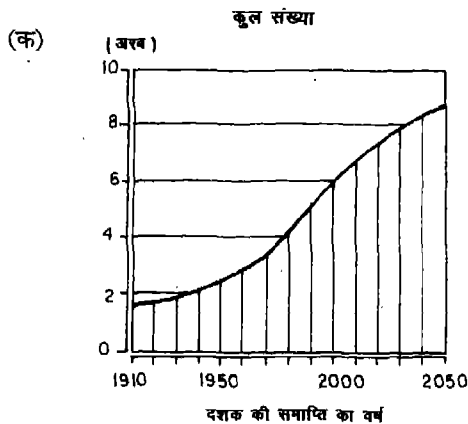
चित्र 2.4 जनसंख्या परिवर्तन: (क) कुल संख्या; (ख) वार्षिक अधिवृद्धि; (ग) वृद्धि दर; तथा (घ) जनसंख्या वृद्धि

प्रमुख पर्वत श्रेणियाँ : पर्वतीय क्षेत्रों में जहाँ की जलवायु अत्यंत कठोर है तथा धरातल अत्यधिक उबड़-खाबड़ है, कृषि कार्य संभव नहीं है।

आर्द्र-उष्ण कटिबंध : जहाँ पर भारी वर्षा तथा उच्च तापमान के संयुक्त प्रभाव के कारण अपेक्षाकृत अनुपजाऊ मृदा पाई जाती है। इसमें गहन स्थायी कृषि नहीं की जा सकती तथा इन क्षेत्रों में मलेरिया जैसी शरीर को कमजोर करने वाली बीमारियों का प्रकोप बना रहता है।

दूरस्थ क्षेत्र : विगत शताब्दी में कुछ एकाकी दूरस्थ कठिनाई वाले पर्यावरणीय क्षेत्रों में भी स्थायी अधिवासों को स्थापित किया गया है। ये स्थानीय खनिजों अथवा वन संपदा के विकास से पहले मुख्यतः निर्जन थे। आजकल इनकी अर्थव्यवस्था प्रौद्योगिकी पर आधारित है।

उच्च घनत्व तथा निम्न घनत्व के क्षेत्रों के बीच मध्यम जन घनत्व के क्षेत्र हैं। प्रतिकूल उच्चावच, जलवायु या मृदा वाले प्रदेशों में भी कृषि, खनन तथा औद्योगिक विकास के रूप में आर्थिक अवसर लोगों को आकर्षित कर सकते हैं। इनके अलावा उच्च घनत्व के क्षेत्रों के निकट भी जनसंख्या का मध्यम घनत्व पाया जाता है।

जनसंख्या वृद्धि

जनसंख्या वृद्धि से हम क्या समझते हैं ? यह किसी एक क्षेत्र विशेष में निवासियों की संख्या में, एक निश्चित समय के भीतर जैसे 10 वर्ष में हुए परिवर्तन को दर्शाता है। इस परिवर्तन को कुल संख्या या प्रतिशत के रूप में व्यक्त किया जा सकता है (चित्र 2.4)।

समय या क्षेत्र के संदर्भ में जनसंख्या के परिवर्तन को निश्चित करने वाले मूल तत्व, *जन्म* दर, *मृत्यु* दर तथा *प्रवास* हैं। एक वर्ष में प्रति हजार व्यक्ति पर जन्म तथा मृत्यु की संख्या को क्रमशः *अशोधित जन्म* दर तथा *अशोधित मृत्यु* दर कहते हैं। एक वर्ष के भीतर जन्म तथा मृत्यु की संख्या में अंतर द्वारा प्राकृतिक वृद्धि अथवा ह्रास की वार्षिक दर निश्चित होती है। चित्र 2.5 में विश्व और महाद्वीपों की अशोधित जन्म और मृत्यु दर तथा जनसंख्या की वार्षिक वृद्धि दिखाई गई है। उन्नीसवीं सदी में तथा बीसवीं सदी के प्रारंभ तक, विभिन्न देशों और महाद्वीपों के मध्य जनांकिकीय परिवर्तनों में महत्त्वपूर्ण भूमिका-निभाने वाला कारक *प्रवास* का महत्त्व अब घट गया है। तथापि देश के भीतर *प्रवास* अभी भी जनसंख्या परिवर्तन का एक महत्त्वपूर्ण कारक है। यदि जन्म दर तथा मृत्यु दर के साथ *प्रवास* (आप्रवास एवं उत्प्रवास) को भी सम्मिलित किया जाता है, तब उसे *वास्तविक जनसंख्या वृद्धि* दर कहते हैं।

यदि किसी दिए गए वर्ष में जन्मे लोगों की संख्या मरने वाले व्यक्तियों की संख्या से अधिक हो तो जनसंख्या में वृद्धि होती है। इसके विपरीत यदि मरने वाले व्यक्तियों की संख्या जन्मे लोगों की संख्या से अधिक हो तो जनसंख्या कम हो जाती है। यदि जन्म तथा मृत्यु के बीच के संबंध असाधारण रूप से परिवर्तित हों तो अपेक्षाकृत कम समय में ही जनसंख्या विस्फोट अथवा जनाभाव की स्थिति आ जाएगी।

किसी देश या प्रदेश के भीतर महामारियों और दीर्घकालीन अकाल से मृत्यु में तीव्र वृद्धि हो सकती है। दूसरी ओर असाध्य और छुआछूत वाली बीमारियों की रोकथाम के लिए, विस्तृत पैमाने पर टीकाकरण, पेयजल
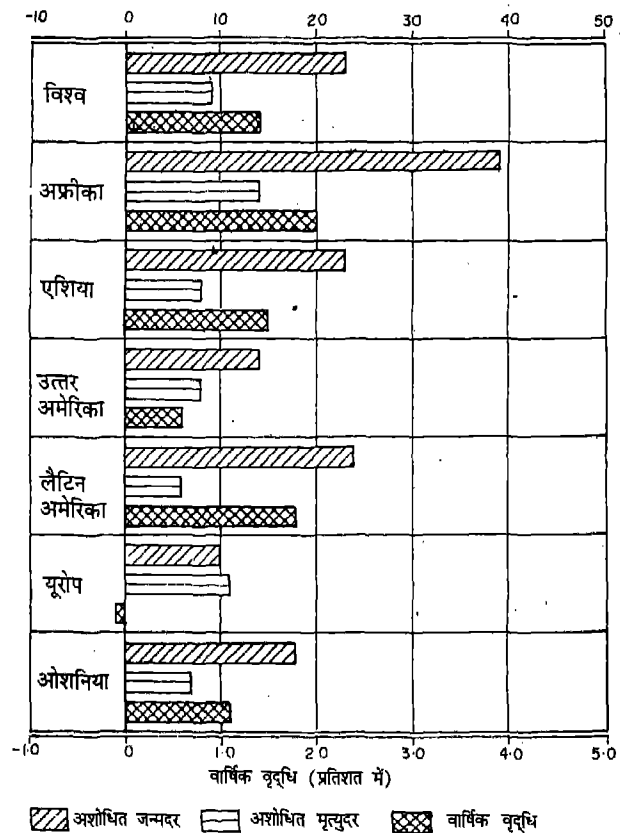
चित्र 2.5 : अशोधित जन्म दर और अशोधित मृत्यु दर

की आपूर्ति, नगरीय स्वच्छता की प्रणाली का विकास करके एक पीढ़ी के भीतर मृत्यु दर को कम किया जा सकता है।

प्रवास जनसंख्या परिवर्तन का तीसरा घटक है। इसे मनुष्य तथा संसाधन के बीच बेहतर संतुलन प्राप्त करने की दिशा में एक स्वफूर्त प्रभाव के रूप में विश्लेषित किया जा सकता है। यह मनुष्य के निवास का स्थाई तथा अद्र्ध स्थाई परिवर्तन है। प्रजनन और मृत्यु की अपेक्षा प्रवास किसी क्षेत्र में जनसंख्या की संरचना और परिवर्तन को निश्चित करने वाला संभवत: एक अधिक महत्त्वपूर्ण कारक है। प्रवास के प्रतिरूप को कई प्रकार से विभाजित किया गया है। भौगोलिक दृष्टिकोण से, स्थानिक मापक महत्त्वपूर्ण होता है और इस प्रकार प्रवास ग्रामीण से ग्रामीण क्षेत्र, ग्रामीण से नगरीय क्षेत्र, नगरीय से नगरीय क्षेत्र, नगरीय से ग्रामीण क्षेत्र, अंतर्प्रदेशीय और अंतर्राष्ट्रीय हो सकता है। समय के अनुसार प्रवास अस्थाई और स्थाई दो प्रकार का हो सकता है। अस्थाई प्रवास का एक रूप *ऋतुनिष्ठ प्रवास* के रूप में भी हो सकता है। इसमें श्रम प्रधान कृषि-मौसम में खेती की माँग की पूर्ति करने के लिए कृषि मजदूरों का स्थानांतरण होता है। कामगारों का अपने स्थाई घरों से कुछ वर्षों के लिए आवधिक प्रवास भी इसमें शामिल है। इस अवधि में वे अपने घरों को रुपए भेजते रहते हैं। अधिक विकसित समाजों में मध्यम स्तर का प्रवास महत्त्वपूर्ण है। इसमें स्थानों के बीच लोगों का प्रवास एक ऋतु से अधिक लेकिन जीवन काल से कम समय के लिए होता है। इसमें उच्च वर्गीय लोगों का महानगरों के मध्य आना-जाना सम्मिलित है।

अंतर्राष्ट्रीय प्रवास देशों तथा महाद्वीपों के बीच लोगों के स्थानांतरण को कहते हैं (चित्र 2.6)। अपेक्षाकृत कम समय में ही जनसंख्या के प्रतिरूपों में परिवर्तन लाने में प्रवास की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। हाल के दशकों में अंतर्राष्ट्रीय प्रवास में पुन: वृद्धि हो रही है। स्वैच्छिक प्रवास अधिकांश लोगों को अधिक अच्छे आर्थिक या अन्य प्रकार के अवसर प्रदान करता है। दूसरी ओर, काफी संख्या में लोगों को गृह युद्ध, राजनीतिक अशांति या पर्यावरणीय ह्रास जो कम सामान्य है, के कारण दूसरे देशों में जाना पड़ता है। इक्कीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में, संयुक्त राष्ट्र के अनुमान के अनुसार विश्वभर में लगभग 12 करोड़ लोग अपनी जन्मभूमि से बाहर रह रहे थे जिसमें 1.5 करोड़ शरणार्थी थे।
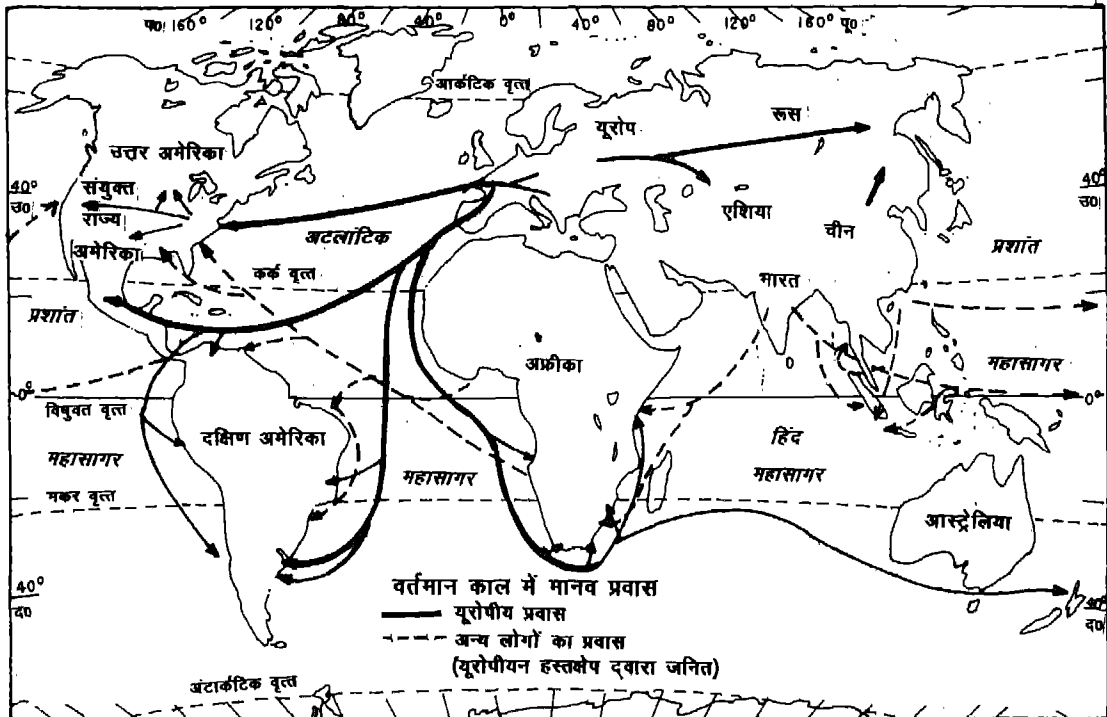
चित्र 2.6 : आधुनिक काल में मानव प्रवास

आंतरिक प्रवास अपेक्षाकृत अधिक प्रचलित जनांकिकीय प्रक्रिया है। इसमें लाखों लोग गाँव छोड़कर नगरों की ओर या अति घने आबाद क्षेत्र से बेहतर अवसर प्रदान करने वाले प्रदेशों की ओर प्रवास करते हैं।

निरंतर बड़े हो रहे नगर केंद्रों पर ग्रामीण जनसंख्या का प्रवास प्रतिकर्षण और अपकर्षण कारकों के कारण होता है। ग्रामीण क्षेत्रों में पाई जाने वाली प्रतिकूल दशाएँ जैसे, निर्धनता, बेरोजगारी, शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन और अन्य सुविधाओं की खराब दशाएँ वहाँ की जनसंख्या को दूसरे स्थानों पर रहने के लिए बाध्य करती हैं। इसे *प्रतिकर्षण* कहते हैं। इसके विपरीत नगरों तथा लक्षित क्षेत्रों के प्रमुख आकर्षण *अपकर्षण* कारक हैं। इनमें उच्च वेतन, सस्ती भूमि, अच्छा जीवन स्तर तथा आर्थिक प्रगति के अवसर शामिल हैं। ऐसे स्थानांतरण के फलस्वरूप ग्रामीण प्रवासियों का अधिकांश भाग नगरों की ओर पलायन करता है। इसके कारण नगरों में बड़ी संख्या में झुग्गी-झोपड़ी बस्तियों की संख्या बढ़ रही है।

ऐसे देशों में जहाँ कुल जनसंख्या का तीन-चौथाई भाग नगरीकृत है, एक नगर से दूसरे नगर के बीच अर्थात् अंतर्नगरीय प्रवास अधिक प्रचलित है। ऐसे प्रवासी प्राय: एक नगरीय केंद्र से दूसरे नगरीय केंद्र में आते-जाते रहते हैं। कुछ ऐसे भी उदाहरण हैं कि गाँवों से लोग पहले निकटवर्ती नगर में जाते हैं तथा कुछ समय वहाँ रहने के पश्चात् उससे बड़े नगर में चले जाते हैं। इसे *सोपानी प्रवास* कहा जाता है। आज पूरे विश्व में बड़े नगर शक्तिशाली चुंबकों की भाँति आर्थिक कारणों से प्रेरित नगर से नगर की ओर प्रवास को अपने तरफ आकर्षित कर रहे हैं। इसका कारण छोटे नगरों की तुलना में यहाँ रोजगार के बेहतर और विविध अवसर और अनेकों अन्य सुविधाएँ उपलब्ध होना है। परिणामस्वरूप बड़े नगर अनुपात से अधिक बड़े होते जा रहे हैं जबकि छोटे नगरों की वृद्धि रुक सी गई है।

जनसंख्या का स्थानांतरण एक से दूसरे गाँव की ओर भी होता है। ऐसा प्राय: विश्व के कृषि प्रधान देशों में होता है। इस प्रकार का प्रवास प्राय: घने आबादी वाले उन क्षेत्रों से होता है जहाँ प्रति व्यक्ति कृषि उत्पादकता कम है। इस प्रवाह की दिशा विरल जनसंख्या वाले उन क्षेत्रों की ओर होती है, जो नए विकास कार्यों विशेष रूप से कृषि, खनन, उद्योग आदि में लगे हुए हैं। परिणामस्वरूप ग्रामीण जनसंख्या तथा कृषि संसाधन-आधार के बीच अधिक संतुलन विकसित हो जाता है।

जनसंख्या वृद्धि की प्रवृत्तियाँ

विकास की प्रारंभिक अवस्थाओं में आखेटक, संग्राहक तथा कृषक केवल साधारण औजारों का प्रयोग करते थे और एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमते रहते थे। 8,000 से 12,000 वर्ष पूर्व आई कृषि-क्रांति के बाद भी विश्व की जनसंख्या बहुत कम थी और उनके क्रियाकलाप साधारण प्रकृति के थे। इस प्रकार मानव का प्रकृति के ऊपर बहुत कम प्रभाव था। जनसंख्या वृद्धि धीमी थी, जिसकी पुष्टि इस बात से की जा सकती है कि पहली शताब्दी में विश्व की कुल जनसंख्या मात्र 25 करोड़ ही थी।

सोलहवीं तथा सत्रहवीं शताब्दी में व्यापार के विस्तार से जनसंख्या में तेजी से वृद्धि हुई। औद्योगिक क्रांति के प्रारंभ (लगभग 1750 ई) में विश्व की जनसंख्या लगभग 50 करोड़ थी। तथापि अठारहवीं सदी में औद्योगिक क्रांति के बाद जनसंख्या में विस्फोट हुआ। प्रौद्योगिकी में आए नाटकीय परिवर्तनों की शृंखला ने बड़ी तीव्रता से संसाधन आधार को विस्तृत किया। इससे जनसंख्या की तीव्र वृद्धि को आधार मिला और यह सिलसिला दो शताब्दियों से अधिक चलता रहा।

भाप के इंजन के विकास के बाद पहले तो वह मनुष्य तथा पशु ऊर्जा का पूरक बना और बाद में उसने इनका स्थान ग्रहण कर लिया। इसने जल और पवन की यंत्रीकृत ऊर्जा प्रदान की। यंत्रीकरण से कृषि और औद्योगिक उत्पादन में सुधार आया।

वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिक उन्नति के कारण आर्थिक रूप से संपन्न देशों में लोगों के जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि हुई। चिकित्सा सुविधाओं तथा स्वच्छता में सुधार से भूमंडलीय जनसंख्या के स्वरूप में नाटकीय रूप से और तेजी से परिवर्तन आया। महामारियों और अन्य संक्रामक बीमारियों के टीके लगाने, कई रोगों के जीवाणुओं को नष्ट करने या उन्हें कम करने तथा स्वच्छता में सुधार होने से लगभग सभी देशों में मृत्यु दर में काफी तेजी से कमी आई।

जब औद्योगिक क्रांति प्रारंभ हुई, उस समय विश्व की जनसंख्या 0.12 प्रतिशत के दर से बढ़ रही थी। किंतु बाद में यह दर अप्रत्याशित रूप से बढ़कर 1930 तक 1 प्रतिशत और 1960 तक 2.1 प्रतिशत हो गई। जनसंख्या की यह तीव्र वृद्धि दर विश्व के लिए चिंता का विषय बन गई। अनेक विकसित

देशों ने इस पर तुरंत ध्यान दिया। विकासशील देश धीरे-धीरे इस तीव्र वृद्धि को नियंत्रित करने का प्रयास कर रहे हैं। विगत चार दशकों में वृद्धि दर में धीमी गति से कमी आई है। वर्तमान वृद्धि दर 1.4 प्रतिशत है।

वृद्धि दर में कमी की यह प्रवृत्ति आगे भी बने रहने की संभावना है, यद्यपि विकसित और विकासशील देशों के मध्य इस दर में बहुत भिन्नता है। विकसित देशों में जनसंख्या की वार्षिक वृद्धि कम होकर अब 0.1 प्रतिशत ही रह गई है। बहुत से विकासशील देशों में भी वृद्धि दर कम हो रही है, किंतु यह 1.0 प्रतिशत से ऊपर ही है। अनुमान है कि विश्व की जनसंख्या 2010 में 6.8 अरब तथा वर्ष 2025 में 8 अरब तक पहुँच जाएगी। ऐसा माना जा रहा है कि अगले 25 वर्षों में होने वाली कुल जनसंख्या वृद्धि का 98 प्रतिशत से अधिक (लगभग 2 अरब) भाग विकासशील देशों का होगा। तद्नुसार, विकसित देशों में जहाँ आज विश्व की 20 प्रतिशत जनसंख्या है, वहाँ वर्ष 2025 में केवल 15 प्रतिशत जनसंख्या ही रहेगी।

जनसंख्या परिवर्तन का स्थानिक प्रतिरूप

जैसा ऊपर बताया गया है कि जन्म, मृत्यु तथा प्रवास जनसंख्या परिवर्तन के तीन घटक हैं। सामान्यत: विश्व के विभिन्न भागों में जनसंख्या वृद्धि दर की तुलना संसार के प्रतिरूपों को पहचानने के लिए की जाती है (परिशिष्ट I)।

अफ्रीका की वार्षिक जनसंख्या वृद्धि दर (2.4 प्रतिशत) आज विश्व के प्रमुख देशों में सबसे अधिक है। अफ्रीका की सबसे अधिक आबादी वाले देश नाइजीरिया में जनसंख्या वृद्धि की वार्षिक दर 2.4 प्रतिशत है। नाइजीरिया की वर्तमान जनसंख्या 12.30 करोड़ है जो इस दर से अगले 25 वर्षों से कम समय में ही दो गुनी हो जाएगी।

दक्षिण अमेरिका, एशिया, ओशनिया और उत्तर अमेरिका में औसत वार्षिक वृद्धि 1 से 2 प्रतिशत के बीच है। इसके विपरीत यूरोप में वृद्धि दर न्यूनतम अर्थात् 0.2 प्रतिशत ही है।

यद्यपि जनसंख्या की यह वार्षिक परिवर्तन दर धीमी लगती है, लेकिन यह दो कारणों से भ्रांतिजनक हो सकती है। प्रथम, जब यह छोटी वार्षिक वृद्धि दर, बहुत बड़ी जनसंख्या के लिए प्रयुक्त होती है, तो यह एक बड़े परिवर्तन को जन्म देती है। विश्व की वर्तमान 6.2 अरब जनसंख्या यदि 1.4 प्रतिशत की दर से बढ़ती है तो एक वर्ष में ही 8.2 करोड़ लोग बढ़ जाते हैं, जो लगभग उतनी ही है जितनी जर्मनी की कुल जनसंख्या। द्वितीय, ये परिवर्तन संचयी होते हैं, क्योंकि कुछ वर्षों तक वृद्धि दर के धीरे-धीरे घटते जाने पर भी, कुल जनसंख्या में प्रति वर्ष वृद्धि होती रहती है।

विगत दशक में, सर्वाधिक जनसंख्या वाले देश जर्मनी समेत यूरोप के अनेक सबसे बड़े देशों में जनसंख्या में थोड़ी लेकिन सतत कमी हुई है। परिशिष्ट-I से यह ज्ञात कीजिए कि शून्य वृद्धि दर या ऋणात्मक वृद्धि दर वाले देश कौन-से हैं ?

पूर्व सोवियत संघ के कई गणराज्यों में पर्यावरणीय तथा सामाजिक दशाओं में ह्रास के फलस्वरूप विनाशकारी जनांकिकी ह्रास देखा जा रहा है। पूर्व सोवियत संघ के अनेक औद्योगिक एवं खनन केंद्रों पर दशकों से पर्यावरणीय प्रदूषण व अवक्रमण के साथ-साथ युद्धोत्तरकाल के बाद लंबी अवधि तक आर्थिक अस्थिरता के परिणामस्वरूप मृत्यु दर में तीव्र वृद्धि तथा जन्म दर में लगातार कमी हुई है। जीवन प्रत्याशा में भी तेजी से गिरावट आई है। शिशु मृत्यु दर तथा शिशु जन्म के समय मृत्यु में अधिक बढ़ोत्तरी हुई है। दो बड़े गणराज्यों रूस तथा यूक्रेन में प्राकृतिक जनसंख्या परिवर्तन आज -0.6 प्रतिशत प्रति वर्ष है। 2000 ई. में शिशु मृत्यु दर 16 प्रति हजार थी जो यूरोप के औसत से दो गुना अधिक है।

यद्यपि ये उदाहरण वर्तमान जनांकिकीय प्रवृत्ति की अतिशयता को दर्शाते हैं, जनसंख्या परिवर्तन को सदा ही किसी भी संगठित समाज में गंभीरता से लिया गया है। आज जनसंख्या की वृद्धि तथा ह्रास वाले दोनों ही प्रकार के देशों में यह एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा है।

इस बात पर सामान्य सहमति है कि एक अर्थव्यवस्था में जनसंख्या में एक छोटी-सी वृद्धि अवांछित नहीं मानी जाती है, तो भी, एक निश्चित सीमा से ऊपर की जनसंख्या वृद्धि से विकासशील अर्थव्यवस्था में समस्याओं का ढेर लग जाता है। बढ़ती जनसंख्या का दबाव भूमि तथा प्राकृतिक संसाधनों पर सर्वाधिक पड़ रहा है। अनेक स्थानों पर शुद्ध जल दुर्लभ वस्तु होती जा रही है। जंगल समाप्त हो रहे हैं। मृदा का अपरदन तथा मछलियों (मछली-पालन) का अतिशोषण हो रहा है।

जनसंख्या में कमी होना भी चिंता का विषय है क्योंकि जो संसाधन किसी दिए गए स्तर पर एक जनसंख्या का पालन करते थे, वे अब उस जनसंख्या का पालन करने में सक्षम नहीं हैं। यदि जनसंख्या को विपरीत दिशा में नहीं मोड़ा गया तो उस

समाज की आधारभूत संरचना स्वयं अस्थिर हो सकती है। जनसंख्या वृद्धि सामाजिक समृद्धि और उन्नति की सूचक होती है, क्योंकि इससे संसाधन आधार बढ़ते हैं। तथापि, यदि भूमि तथा अन्य महत्त्वपूर्ण संसाधन कम हैं, तो इसे एक अन्य विशिष्ट समस्या के रूप में देखा जाता है।

विकसित देशों में जहाँ संसाधन आधार समुचित मात्रा में हैं या ऐसा लगता है कि उनका भरपूर उपयोग नहीं हुआ है, जनसंख्या वृद्धि को प्रोत्साहित करने वाली नीतियों, जैसे प्राकृतिक वृद्धि के लिए प्रोत्साहन, बड़े परिवार के लिए करों में समुचित छूट और आप्रवास को स्वीकृति आदि को अपनाया जाता है। दूसरी ओर, यदि जनसंख्या वृद्धि को समस्या के रूप में देखा जा रहा है तो सरकारें जनसंख्या नियंत्रण की नीतियाँ बनाती हैं, जैसे, चीन तथा भारत सहित अनेक विकासशील देशों द्वारा प्राकृतिक जनसंख्या वृद्धि दर को कम करने के लिए जन्म नियंत्रण कार्यक्रम प्रायोजित किए गए हैं। वर्ष 1994 में, जनसंख्या विषय पर संयुक्त राष्ट्र के अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में अधिकांश देशों ने अगले दो दशकों में विश्व जनसंख्या को स्थिर करने की एक योजना बनाई है। इस लक्ष्य की पूर्ति एक विश्वस्तरीय कार्यक्रम द्वारा सर्वसुलभ साक्षरता, शिक्षा, प्रजनन, स्वास्थ्य और शिशु स्वास्थ्य की देखभाल आदि के माध्यम से परिवार नियोजन में महिलाओं की भूमिका बढ़ाकर की जाएगी।

विश्व जनसंख्या के दो गुनी होने की अवधि

जनसंख्या वृद्धि दर की तुलना करने की यह एक अन्य विधि है। इसमें इस बात की गणना की जाती है कि वर्तमान वार्षिक वृद्धि दर पर कोई जनसंख्या कितने वर्षों की अवधि में दो गुनी हो जाएगी। सारणी 2.1 में, विश्व में कुल जनसंख्या के दो गुनी होने में लगने वाले समय को दर्शाया गया है। ध्यान दीजिए कि दो गुनी होने की अवधि में कितनी तेजी से कमी हो रही है। विभिन्न प्रदेशों में जनसंख्या दो गुनी होने के समय में अत्यधिक भिन्नता दिखाई पड़ती है (चित्र 2.5)। उपरोक्त आँकड़ों से यह स्पष्ट है कि विकसित देशों में जनसंख्या के दो गुनी होने की अवधि अधिक है।

वर्तमान 2 से 2.9 प्रतिशत की वृद्धि दर से 71 देशों की जनसंख्या 24-35 वर्षों में दो गुनी हो जाएगी और 3 से 4.4 प्रतिशत वृद्धि दर वाले 14 देशों की जनसंख्या को दो गुनी होने में 16 से 23 वर्ष लगेंगे। विश्व की लगभग एक चौथाई जनसंख्या 90 देशों में निवास करती है, जिनकी जनसंख्या एक
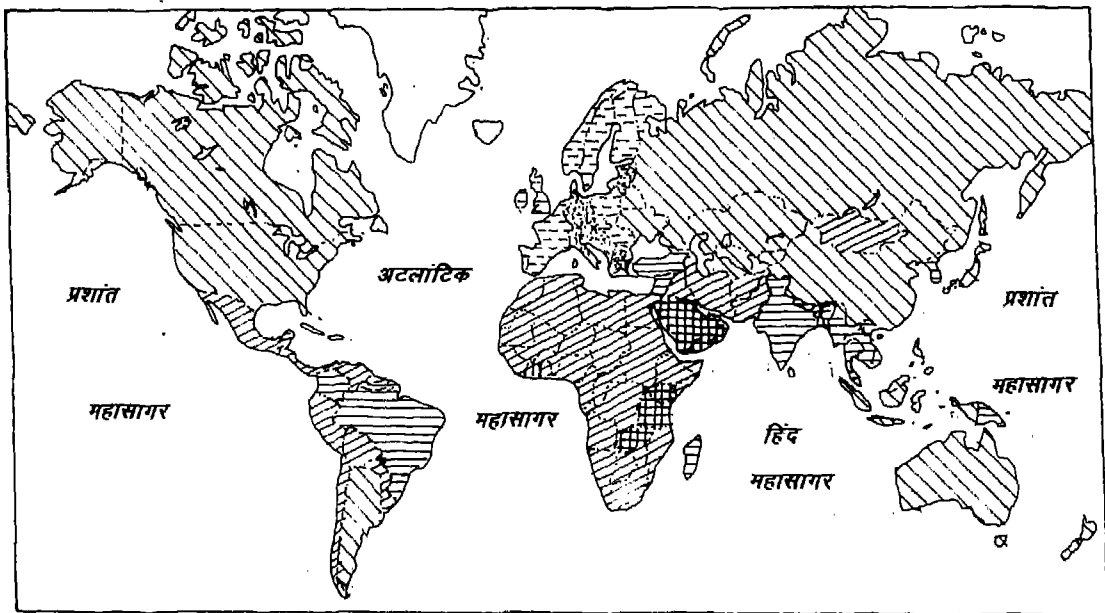
चित्र 2.7 : जनसंख्या दो गुनी होने की अवधि

सारणी 2.1 विश्व जनसंख्या की दो गुनी होने की अवधि

अवधि	*जनसंख्या*	*जनसंख्या दो गुनी होने की अवधि*
10,000 वर्ष ई. पू.	50 लाख	-
1650 ई.	50 करोड़	1500 वर्ष
1850 ई.	100 करोड़	200 वर्ष
1930 ई.	200 करोड़	80 वर्ष
1975 ई.	400 करोड़	45 वर्ष
2012 ई.	800 करोड़ (प्रक्षेपित आँकड़े)	37 वर्ष

सारणी 2.2 में वर्तमान प्राकृतिक वृद्धि दर के संदर्भ में कुछ चुने गए देशों/प्रदेशों के लिए जनसंख्या के दो गुनी होने का समय दिया गया है।

सारणी 2.2 चुने गए देशों तथा संसार के प्रमुख प्रदेशों में जनसंख्या के दो गुना होने की अवधि

वार्षिक जनसंख्या वृद्धि (प्रतिशत में)	*देश/प्रदेश*	*जनसंख्या के दो गुनी होने की अवधि (वर्षों में)*
3.3	चाड	21
2.8	ईराक, पाकिस्तान	25
2.6	उपसहारीय अफ्रीका	27
2.5	**अफ्रीका**	28
2.0	मिस्र	35
1.9	भारत	36
1.8	**लैटिन अमेरिका**, बांग्ला देश	38
1.5	**एशिया**, ब्राजील	46
1.2	**संसार**, श्रीलंका	58
1.1	**ओशनिया**, थाईलैंड	63
1.0	चीन, सिंगापुर	70
0.7	**आस्ट्रेलिया**	104
0.6	**उत्तर अमेरिका**, संयुक्त राज्य अमेरिका	116
0.0	स्पेन, आस्ट्रिया	-
0.2	जापान, यू. के., फिनलैंड	318
-0.1	**यूरोप**, जर्मनी	-
-0.5	रूस	-
-0.6	यूक्रेन	-

स्रोत : वर्ल्ड पॉपुलेशन डाटा शीट, 1999, पॉपुलेशन रैफरेंस ब्यूरो

सारणी 2.3 : कुछ अफ्रीकी देशों में एड्स के प्रभाव से मृत्यु दर तथा जीवन प्रत्याशा में परिवर्तन (1990-1999)

देश	*एड्स युक्त प्रौढ़ जनसंख्या का प्रतिशत*	*प्रति हजार जनसंख्या पर (मृत्यु दर)*		*औसत जीवन प्रत्याशा*	
	1999	*1999*	*1990*	*1999*	*1990*
बोत्सवाना	36	33	11	40	59
नामीबिया	20	36	12	42	56
द. अफ्रीका	20	27	8	58	63
जाम्बिया	20	23	14	37	53
जिम्बाब्वे	25	20	10	40	58

या दो पीढ़ी में दो गुनी हो जाएगी। भारत एक मध्यम उदाहरण प्रस्तुत करता है। यहाँ वर्तमान वृद्धि दर 1.9 प्रतिशत है। यदि यह दर इतना ही रहा तब देश की एक अरब आबादी को दो अरब होने में 36 वर्ष लगेंगे।

अफ्रीका में घातक एच. आई. वी./ एड्स ने महामारी का रूप ले लिया है। एशिया एवं स्वतंत्र देशों के राष्ट्र कुल में भी (पूर्व सोवियत संघ) एड्स से मृत्यु दर में वृद्धि हो रही है। इन कारणों से इन क्षेत्रों में जनसंख्या वृद्धि दर की गति धीमी हुई है (सारणी 2.3)।

जनांकिकीय संक्रमण

वर्तमान जनांकिकीय प्रवृत्ति को देखने से यह स्पष्ट होता है कि विकासशील देशों में वार्षिक औसत जनसंख्या वृद्धि विकसित देशों की तुलना में 20 गुने से भी अधिक है। यद्यपि दोनों ही समूहों में अशोधित मृत्यु दर भिन्न है तथापि औसत अशोधित जन्म दर विकासशील देशों में विकसित देशों की तुलना में लगभग तीन गुना अधिक है। ऐसा क्यों है? एफ. डब्लू. नोटेस्टीन नामक जनांकिकीविद् ने आर्थिक विकास की प्रक्रियाओं एवं जनसंख्या वृद्धि के बीच एक निकट संबंध की पहचान की।

जब एक कृषि प्रधान ग्रामीण समाज प्रौद्योगिकी आधारित नगरीय समाज में बदलता है तब जनांकिकीय प्रवृत्तियों में भी परिवर्तन होता है। चित्र 2.8 में आर्थिक विकास से जुड़ी औद्योगीकरण एवं नगरीकरण प्रक्रियाओं के साथ जनसंख्या गत्यात्मकता में हुए परिवर्तनों के सहसंबंधों को *जनांकिकीय संक्रमण मॉडल* के रूप में दर्शाया गया है (चित्र 2.8)।

इस मॉडल की *प्रथम अवस्था* आर्थिक विकास की प्रक्रिया प्रारंभ होने से पहले की जनांकिकीय प्रवृत्तियों को प्रकट करती है। यह औद्योगिक विकास से पहले की यूरोप की जनांकिकी अथवा उन्नीसवीं सदी के मध्य में जापान की जनांकिकी या संभवत: उष्ण वनों में एकांकी निवास करने वाली एक जनजाति समुदाय की जनांकिकी को प्रदर्शित करता है। इस प्रवृत्ति की सामान्य विशेषता यह है कि जनसंख्या का आकार छोटा होता है और यह कुछ समय तक के लिए स्थिर (शुद्ध वृद्धि दर लगभग 1 प्रतिशत) होता है। जन्म तथा मृत्यु दर दोनों ही बहुत उच्च हैं किंतु संपन्नता के काल में मृत्यु दर में कमी आती है, जबकि अकाल, महामारियों या युद्ध के समय में इसमें वृद्धि होती है।

दूसरी अवस्था प्रौद्योगिकी क्रांति के साथ प्रारंभ होती है, जो आर्थिक विकास की प्रारंभिक अवस्था की विशेषता है। अठारहवीं तथा उन्नीसवीं सदी के यूरोप और उत्तर अमेरिका में औद्योगिक क्रांति ने ही परिवहन, कृषि तथा चिकित्सा के क्षेत्र में क्रांतियों को जन्म दिया। इन्होंने सम्मिलित रूप से आर्थिक विकास के स्तर को ऊँचा उठाया। खान-पान, लोक-स्वास्थ्य और चिकित्सा सुविधाओं से मृत्यु दर में तेजी से गिरावट आई लेकिन जन्म दर समृद्धि के प्रारंभिक काल में ऊँची बनी रही। आगे चलकर इसमें भी कमी आने लगी परंतु धीमी गति से, क्योंकि परिवार के आकार संबंधी सामाजिक-सांस्कृतिक प्रथाओं को बदलती परिस्थितियों के साथ सामंजस्य स्थापित करने में समय लगता है। इसके परिणामस्वरूप जनसंख्या वृद्धि तेजी से हुई।
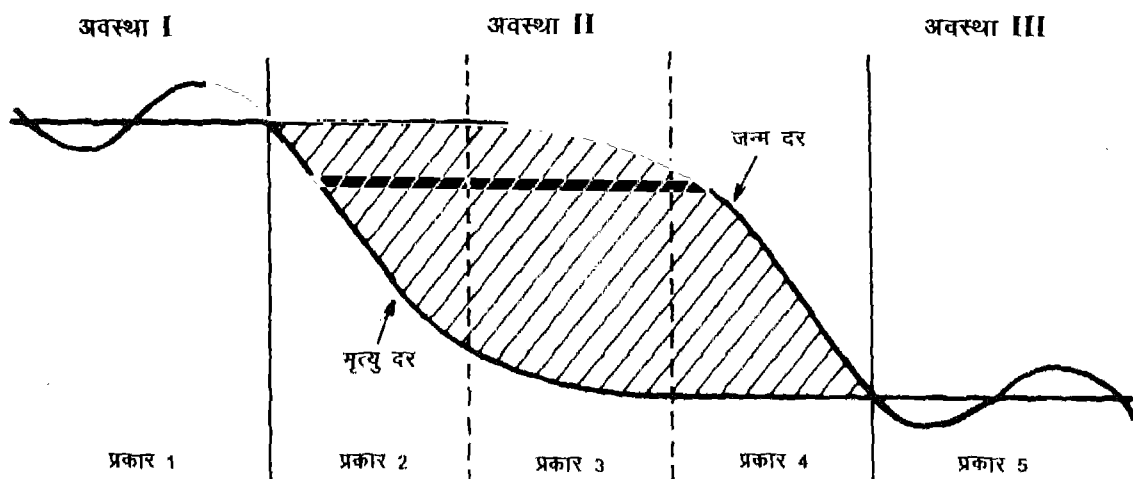
चित्र 2.8 : जनांकिकीय संक्रमण मॉडल

तृतीय अवस्था में मृत्यु दर नीचे स्तर पर लगभग स्थिर हो जाती है। जबकि जन्म दर में कमी होने पर भी उसमें उतार-चढ़ाव आता रहता है। जनसंख्या का शुद्ध वृद्धि दर लगभग शून्य रहता है। यूरोप के कुछ विकसित देशों में, एक *चौथी अवस्था* भी देखने को मिल रही है। निम्न जन्म दर के साथ बढ़ती मृत्यु दर के कारण जनसंख्या घट रही है।

दूसरी अवस्था को भी तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है – जनसंख्या विस्फोट के क्रांतिक काल का प्रारंभ, जनसंख्या विस्फोट का मध्य काल तथा वृद्धि के चरण के पूरा होने का काल। इस प्रकार कुल मिलाकर जनसंख्या वृद्धि के पाँच प्रकार देखे जा सकते हैं (चित्र 2.8)। संसार के सभी देश इस वर्गीकरण में आ जाते हैं। लेकिन विकसित और विकासशील देशों के बीच जनसंख्या वृद्धि की प्रवृतियों में महत्त्वपूर्ण अंतर है।

जनांकिकीय संक्रमण

अवस्था I

प्रकार-1 **आदि कालीन जनांकिकीय अवधि**
उच्च जन्म दर और मृत्यु दर तथा धीमी जनसंख्या वृद्धि।

अवस्था II

प्रकार-2 **प्रसरणशील या युवा जनांकिकीय अवधि**
तेजी से घटती मृत्यु दर, उच्च जन्म दर तथा जनसंख्या में तीव्र वृद्धि।

प्रकार-3 **परवर्ती प्रसरणशील जनांकिकीय अवधि**
घटती जन्म दर, निम्न मृत्यु दर तथा जनसंख्या वृद्धि दर में ह्रास।

प्रकार-4 **निम्न परिवर्तनशील अथवा परिपक्व जनांकिकीय**
अवधि निम्न जन्म दर और उच्च मृत्यु दर तथा घटती जनसंख्या

अवस्था III

प्रकार-5 **जनसंख्या की लगभग शून्य वृद्धि की अवधि**
निम्न जन्म दर और मृत्यु दर के लगभग समान होने से जनसंख्या वृद्धि-शून्य के लगभग होती है।

विकासशील विश्व में जनांकिकीय प्रवृत्तियाँ यूरोप तथा उत्तर अमेरिका के देशों में दिखने वाली उपरोक्त प्रवृत्तियों जैसी नहीं होती हैं। स्वास्थ्य दशाओं के बेहतर होने तथा जीवन प्रत्याशा के बढ़ने के फलस्वरूप विगत कई दशकों से इन देशों की जनसंख्या में तीव्र वृद्धि हुई है। लेकिन विकासशील देशों के बीच एक अवस्था से दूसरी अवस्था में पहुँचने की अवधि में काफी अंतर है। हाल के वर्षों में अनेक विकासशील देशों में परिवार नियोजन कार्यक्रमों के फलस्वरूप जनसंख्या वृद्धि दर में कमी देखी गई है। सबसे महत्त्वपूर्ण कमी उन एशियाई तथा लैटिन अमेरिकी देशों में देखी गई है, जहाँ आर्थिक विकास, नगरीकरण तथा परिवार नियोजन कार्यक्रमों के अपनाए जाने से प्रतिबिंबित सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तनों के प्रत्युत्तर में जन्म दर में गिरावट आई है। लेकिन अधिकांश अफ्रीकी तथा कुछ एशियाई और लैटिन अमेरिकी देशों में जनांकिकी संक्रमण की उच्च जनसंख्या वृद्धि की अवस्था अनेक दशकों से बनी हुई है। इसका कारण बड़े परिवारों की सांस्कृतिक परंपरा तथा उच्च प्रजनन दर का महत्त्व बना रहना है। इस प्रकार ऐसी कोई संभावना नहीं है कि इन देशों में भी आर्थिक रूप से विकसित देशों की तरह आर्थिक और सामाजिक परिवर्तनों के कारण जन्म दर गिर जाएगी। अभी तक विकासशील संसार के एक बड़े भाग में जन्म दर में भारी कमी, जो जनसंख्या संक्रमण मॉडल की दूसरी अवस्था के अंतिम भाग में हुई अनुमान मात्र ही है।

जनांकिकीय संक्रमण मॉडल से असंगत होते हुए भी उसकी अनेक विशेषताएँ यहाँ मान्य हैं :

- वस्तुतः सभी देशों में जन्म दर में गिरावट से कुछ पहले मृत्यु दर में गिरावट आई है।
- अभी तक विकासशील देशों में जनसंख्या परिवर्तन मुख्यतः मृत्यु दर के परिवर्तन में ही दिखाई पड़ता है। अब विकासशील विश्व में औसत मृत्यु दर लगभग 9 व्यक्ति प्रति हजार पर स्थिर है। युवा जनसंख्या वाले 90 से अधिक विकासशील देशों में मृत्यु दर, विकसित देशों की परिपक्व जनसंख्या के औसत मृत्यु दर से कम ही है। विकासशील देशों में जन्म दर प्रवृत्तियाँ जनसंख्या के आकार का निर्धारण मुख्य रूप से उसी प्रकार करेंगी जैसा उन्होंने विकसित विश्व में कई दशकों तक किया।

प्रजनन दर, आयु संरचना और *जनसंख्या संचलन :* जनांकिकीय प्रवृत्तियों के पूर्वानुमान में जन्म दर तथा मृत्यु दर के अलावा, दो अन्य चरों की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। *कुल प्रजनन* दर किसी स्त्री के पैदा होने वाले बच्चों की औसत संख्या है। आज विकसित देशों में कुल प्रजनन दर का औसत 1.5 है। जन्म दर को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करने वाला एक अन्य कारक *जनसंख्या संरचना*, विशेषतः उसकी आयु की संरचना है। जन्म दर तथा प्रजनन दरों की तुलना इस कारक का महत्त्व स्पष्ट करेगी। उदाहरण के लिए 1982 में, सिंगापुर तथा स्पेन दोनों में ही एक-सी अशोधित जन्म दरें क्रमशः 17.2 और 15.2 प्रति हजार थीं। किंतु सिंगापुर में प्रजनन दर (58) स्पेन की दर से (73.1) काफी कम थी, क्योंकि उसकी आयु संरचना अधिक युवा थी। दूसरे शब्दों में, उच्च युवा वयस्कों के उच्च अनुपात वाले क्षेत्र में उच्च जन्मदर की संभावना रहती है। नए नगर, नई बस्तियाँ तथा उच्च आप्रवास दर वाले प्रदेश इस वर्ग में आते हैं। इस प्रकार हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि प्रजनन दर को प्रभावित करने वाले कारक मुख्य रूप से आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक होते हैं, भौतिक नहीं।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए :
   (i) इक्कीसवीं सदी के प्रारंभ में विश्व की जनसंख्या कितनी थी ?
   (ii) जनसंख्या के वितरण को कौन-से कारक प्रभावित करते हैं ?
   (iii) जनसंख्या घनत्व किसे कहते हैं ?
   (iv) विश्व में उच्च जनसंख्या घनत्व के चार प्रमुख क्षेत्र कौन-से हैं ?
   (v) जनसंख्या वृद्धि से क्या अभिप्राय है ?
   (vi) जनसंख्या परिवर्तन के तीन घटकों के नाम बताइए।
   (vii) विश्व जनसंख्या वृद्धि की वर्तमान दर क्या है ?
2. अंतर स्पष्ट कीजिए :
   (i) जनसंख्या का अंकगणितीय एवं कायिक घनत्व
   (ii) अशोधित जन्म दर तथा अशोधित मृत्यु दर
   (iii) स्थानांतरण के प्रतिकर्ष एवं अपकर्ष कारक
3. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए :
   (i) विश्व जनसंख्या की दो गुनी होने की अवधि
   (ii) जनांकिकीय संक्रमण
4. विश्व में जनसंख्या वितरण तथा जनसंख्या के घनत्व को प्रभावित करने वाले कारकों की विवेचना कीजिए।
5. जनसंख्या वृद्धि और ह्रास के परिणामों को समझाइए।
6. विगत कुछ शताब्दियों में जनसंख्या वृद्धि तीव्र क्यों रही है ? इसकी व्याख्या कीजिए।

भौगोलिक कुशलताएँ

7. विश्व के रेखा मानचित्र पर निम्न को उचित आभाओं द्वारा प्रदर्शित कीजिए :
   अफ्रीका, एशिया, यूरोप, लैटिन अमेरिका और ओशनिया से एक-एक सबसे अधिक घने तथा सबसे विरल जनसंख्या वाले देश।
   (संदर्भ के लिए परिशिष्ट-I देखिए)

8. निम्नलिखित देशों के लिए जनसंख्या के वार्षिक वृद्धि दर (1995–2000) को प्रदर्शित करने वाले एक उपयुक्त आरेख की रचना कीजिए :

बांग्लादेश
भारत
थाईलैंड
नाइजीरिया
र्वांडा
लाइबेरिया
गिनी
संयुक्त अरब अमीरात
चीन
जापान
बुल्गारिया
उरुग्वे
मेक्सिको
कोलंबिया
यूनाइटेड किंगडम
संयुक्त राज्य अमेरिका
जर्मनी
इटली
आस्ट्रेलिया
रूस

3 अध्याय
जनसंख्या संघटन

जनसंख्या संघटन या जनांकिकी संरचना, जनसंख्या की उन विशेषताओं को प्रदर्शित करता है, जिनकी माप की जा सके तथा जिनकी मदद से दो भिन्न प्रकार के व्यक्तियों के समूहों में अंतर स्पष्ट किया जा सके। आयु, लिंग, साक्षरता, आवास का स्थान आदि ऐसे महत्त्वपूर्ण घटक हैं, जो जनसंख्या के संघटन को प्रदर्शित करते हैं। ये विकास की भावी योजनाओं को निश्चित करने में भी सहायता करते हैं।

आयु संरचना

विभिन्न आयु वर्गों में लोगों की संख्या को जनसंख्या की *आयु संरचना* कहते हैं। विभिन्न आयु वर्गों के आकार एक जनसंख्या से दूसरी जनसंख्या तथा समयानुसार बदलते रहते हैं। यदि जनसंख्या में बच्चों की संख्या अधिक है, पराश्रितता अनुपात अधिक होगा। इसी प्रकार 15 से 59 वर्ष के आयु वर्ग में अधिक जनसंख्या होने पर वहाँ बड़ी कार्यशील जनसंख्या होने
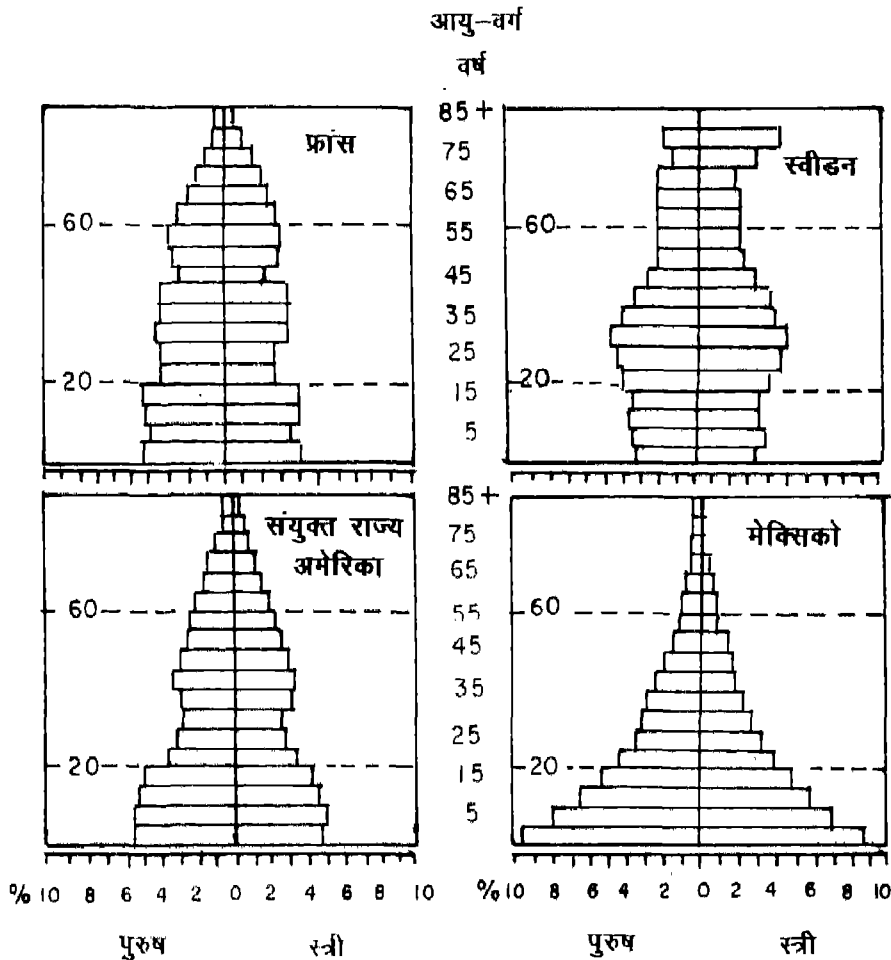
चित्र 3.1 : कुछ चयनित देशों के आयु-लिंग पिरामिड

की संभावना होती है। इसी प्रकार 60 वर्ष से ऊपर के आयु संरचना वर्ग में बढ़ती हुई जनसंख्या से वृद्धों की देखभाल पर अधिक व्यय होने का संकेत मिलता है। यदि कहीं पर बड़ी संख्या में युवक हैं और जन्म दर उच्च है, तो जनसंख्या युवा होगी। जैसे एशिया, अफ्रीका तथा दक्षिण अमेरिका के अनेक विकासशील देशों में देखा जाता है। इसके विपरीत यदि जन्म दर कम है और लोगों की दीर्घ आयु है तो जनसंख्या को कालप्रभावित (वृद्ध) कहा जाता है। ऐसा अनेक यूरोपीय देशों, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा तथा जापान में घटित हो रहा है। कभी-कभी अप्रत्याशित घटनाएँ जैसे युद्ध और प्राकृतिक आपदाओं के कारण किसी निश्चित आयु वर्ग के लोगों की मृत्यु होने पर आयु संरचना का स्वरूप बिगड़ जाता है। सामान्यत: किसी देश की जनसंख्या को तीन बड़े आयु वर्गों में रखा जाता है : बाल वर्ग (0-14 वर्ष), प्रौढ़ वर्ग (15-59 वर्ष) और वृद्ध (60 से ऊपर)।

विश्व के विभिन्न भागों के आयु-वर्ग संबंधी आँकड़ों के परीक्षण से स्पष्ट होता है कि इन तीन वर्गों में प्रौढ़ जनसंख्या का अनुपात सबसे कम परिवर्तनशील है। बाल तथा वृद्ध आयु-वर्गों के अनुपात में प्रादेशिक विभिन्नताएँ सर्वाधिक पाई जाती हैं। ऐसी विभिन्नताओं के आधार पर तीन प्रकार की आयु-संरचनाएँ पहचानी गई हैं :

(i) *पश्चिमी यूरोपीय प्रकार*- इसमें बाल आयुवर्ग और वृद्ध आयु-वर्ग में जनसंख्या क्रमश: 30 प्रतिशत और 15 प्रशित होती है।

(ii) *संयुक्त राज्य प्रकार*- इस प्रकार की जनसंख्या में बच्चों तथा वृद्धों का अनुपात क्रमश: 35 से 45 प्रतिशत तथा 10 प्रतिशत होता है।

(iii) *तृतीय विश्व प्रकार*- इस प्रकार की जनसंख्या में बच्चों का अनुपात 45-55 प्रतिशत तथा वृद्धों का 4-8 प्रतिशत होता है।

आयु पिरामिड के द्वारा आयु संरचना का अधिक विस्तृत चित्र प्राप्त होता है। इसके लिए, सामान्यत: 5 या 10 वर्ष के अंतराल वाले आयु वर्ग लिए जाते हैं। प्रत्येक आयु वर्ग की जनसंख्या को क्षैतिज दंड द्वारा प्रदर्शित करते हैं। दंड की लंबाई उस वर्ग में स्त्रियों तथा पुरुषों के प्रतिशत के अनुपात में होती है। पुरुषों को दिखाने वाले दंडों को केंद्रीय अक्ष के बाईं ओर तथा स्त्रियों के दंडों को दाईं ओर ऊर्ध्वाधर रूप में व्यवस्थित किया जाता है। अक्ष को एक वर्ष या बहुवर्ष के अंतराल पर विभक्त करते हैं (चित्र 3.1)। पिरामिड की आकृति, प्रदर्शित जनसंख्या के इतिहास तथा उसकी विशेषताओं को दर्शाती है। इस प्रकार पिरामिड की तीन अलग-अलग आकृतियों का संबंध जनसंख्या की तीन भिन्न स्थितियों से होता है।

- *स्थिर जनसंख्या :* पिरामिड का ऊपर की ओर एक नियमित रूप में संकीर्ण होता स्वरूप, लंबे समय तक परिवर्तन रहित जन्म तथा मृत्यु दरों को दर्शाता है।
- *विकासशील जनसंख्या :* पिरामिड का चौड़ा आधार तथा तेजी से पतला होता शीर्ष बढ़ते जन्म दर तथा उच्च मृत्यु दर को दर्शाता है।
- *घटती या ह्रासमान जनसंख्या :* पिरामिड का संकीर्ण पतला आधार और संकीर्ण शीर्ष घटते हुए जन्म दर तथा निम्न मृत्यु दर को प्रदर्शित करता है।

विश्व जनसंख्या की आयु संरचना निम्नलिखित विशेषताओं को प्रकट करती है:

(i) विश्व की जनसंख्या अधिक युवा है क्योंकि 36 प्रतिशत जनसंख्या 15 वर्ष से कम आयु वर्ग में विद्यमान है। तथापि इसमें प्रादेशिक भिन्नता भी है क्योंकि अधिक विकसित प्रदेशों में 23 प्रतिशत और विकासशील प्रदेशों में 40 प्रतिशत जनसंख्या युवा वर्ग में आती है। परंतु विकास के निचले स्तर के महाद्वीपों और देशों में यह भिन्नता और भी अधिक है। युवा-जनसंख्या का अनुपात यूरोप में 25 प्रतिशत से कम और एशिया तथा दक्षिण अमेरिका में 40 प्रतिशत तथा अफ्रीका में लगभग 50 प्रतिशत है। जिन देशों में उच्च जन्म दर है, वहाँ पर युवा जनसंख्या का प्रतिशत अधिक है। जहाँ जन्म दर नीची है, वहाँ युवा जनसंख्या का प्रतिशत कम है। यह आयु वर्ग आर्थिक रूप से अनुत्पादक होता है तथा इनके भोजन, वस्त्र, शिक्षा तथा स्वास्थ्य सुविधाओं पर अधिक धन खर्च करना पड़ता है।

(ii) प्रौढ़ आयु वर्ग (15 से 59 वर्ष) की जनसख्या हमेशा दूसरे वर्गों से अधिक होती है। यद्यपि विकासशील देशों में इसका अनुपात और भी अधिक है। जैविकीय दृष्टि से जनसंख्या का आयु-वर्ग सबसे अधिक प्रजननशील, आर्थिक दृष्टि से सर्वाधिक उत्पादक तथा जनांकिकीय दृष्टि से सर्वाधिक गतिशील होता है।

(iii) वृद्ध आयु वर्ग (60 वर्ष और इससे ऊपर) में लोगों की संख्या में उस समय वृद्धि होती है जब कोई देश

अपनी जनांकिकी क्रम विकास को पूर्ण कर लेता है। विकसित देशों में इस वर्ग में स्त्रियों की संख्या पुरुषों से अधिक होती है। इस प्रकार की आयु संरचना से स्वास्थ्य तथा सामाजिक सेवाओं पर बोझ पड़ता है।

जनसंख्या का लिंग-संघटन

किसी दी गई जनसंख्या में *लिंग अनुपात,* पुरुष तथा स्त्रियों के बीच संतुलन का एक सूचक होता है। यह प्रति हजार (1000) पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या के रूप में मापा जाता है। लिंग अनुपात का दूसरे जनांकिकी लक्षणों जैसे जनसंख्या की वृद्धि, विवाह-दर, व्यावसायिक संरचना आदि पर व्यापक प्रभाव पड़ता है।

अज्ञात कारणों से, लगभग सभी समाजों में पुरुष-जन्म, स्त्री-जन्म से अधिक होता है। किंतु जन्म से पहले और बाद की दशाएँ, कभी-कभी इस स्थिति को अत्यधिक परिवर्तित कर देती हैं। विकासशील देशों में *शिशु मृत्यु* दर बालिकाओं की तुलना में बालकों में अधिक है। इस कारण बालकों के जन्म के समय उनकी अधिकता, एक वर्ष में ही समाप्त हो जाती है। विकसित देशों में भी जीवन की सभी अवस्थाओं में पुरुष मृत्यु-दर, स्त्री मृत्यु-दर से अधिक होती है। अत: जन्म के समय पुरुष वर्ग की बढ़ी हुई संख्या, उत्तरोत्तर समाप्त हो जाती है और यहाँ तक कि 30 वर्ष की आयु के पश्चात् स्त्रियों की संख्या बढ़ जाती है। अनेक विकासशील देशों में स्त्रियों को समाज में गौण स्थान प्रदान किए जाने के कारण उनमें प्रजनन के समय हुई मृत्यु दर काफी ऊँची होती है। इससे प्रतिकूल लिंग-अनुपात को बढ़ावा मिलता है। इन देशों में समग्र लिंगानुपात अधिकतर महिलाओं के प्रतिकूल ही होता है।

दोनों लिंगों में असमान जन्म या मृत्यु दर होने के अतिरिक्त, लिंगानुपात स्त्री अथवा पुरुष के प्रवास से भी गंभीर रूप से प्रभावित होता है। प्राचीन समय में अंतर्राष्ट्रीय तथा लंबी दूरी के प्रवास में सदैव पुरुषों की प्रधानता रही है। इस कारण उद्भव क्षेत्र तथा गंतव्य क्षेत्र दोनों ही स्थानों के लिंगानुपातों में जटिल असंतुलन उत्पन्न हो जाता था। वर्तमान समय में पुरुष प्रधान क्षेत्र मात्र अलास्का तथा आस्ट्रेलिया की नार्दन टेरिटरी हैं। इन दोनों ही में प्रति हजार स्त्रियों पर 1350 पुरुष पाए जाते हैं।

एक देश के आंतरिक प्रवास में लिंग-चयन की तीव्रता उस देश के प्रौद्योगिक एवं आर्थिक विकास से सीधे जुड़ी प्रतीत होती है। विकासशील देशों में, विशेषत: एशिया तथा अफ्रीका में, ग्रामीण क्षेत्रों से नगरीय केंद्रों की ओर पुरुषों के प्रवास की ही प्रधानता पाई जाती है। भारतीय नगरों में अप्रत्याशित रूप से पुरुषों के प्रवास का उच्च अनुपात है। कोलकाता में, प्रति हजार पुरुषों पर 570 स्त्रियों की संख्या का होना इसका ज्वलंत उदाहरण है। आर्थिक रूप से उन्नत राष्ट्रों में इसके प्रतिकूल दशा पाई जाती है। यहाँ खनन और भारी उद्योगों के केंद्रों तथा सैन्य नगरों में प्रवास को छोड़कर, स्त्रियाँ भी ग्रामीण क्षेत्रों से नगरीय क्षेत्रों की ओर प्रवास करती हैं।

विभिन्न देशों में ग्रामीण तथा नगरीय लिंग-संघटन में अंतर के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि इनमें प्रवास की धाराओं से समान परिणाम उत्पन्न नहीं होते। यह तथ्य बड़ा रोचक है कि संयुक्त राज्य अमेरिका तथा पश्चिमी यूरोप के देशों में ग्रामीण और नगरीय लिंग-अनुपातों में अंतर, एशिया के देशों जैसे भारत से बिलकुल भिन्न है। पश्चिमी देशों में ग्रामीण क्षेत्रों में पुरुषों की संख्या स्त्रियों से अधिक होती है, जबकि नगरों में स्त्रियों की संख्या पुरुषों से अधिक होती है। इसके विपरीत भारत जैसे देशों में बिलकुल प्रतिकूल स्थिति पाई जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका तथा यूरोप के नगरीय क्षेत्रों में स्त्रियों की अधिकता का मुख्य कारण यहाँ महिलाओं के लिए रोजगार के अधिक अवसर उपलब्ध होना है जिससे बड़ी संख्या में स्त्रियों का ग्रामीण क्षेत्रों से प्रवास हुआ है। खेती का कार्य ग्रामीण क्षेत्रों में मुख्यत: पुरुषों का ही व्यवसाय है। इसके विपरीत, एशियाई नगरों में लिंगानुपात, विशेषत: भारत में, पुरुष प्रधान रहा है। इसका कारण प्रवास में पुरुषों का आधिक्य है। यहाँ के नगरों में आवास की समस्या, रहन-सहन का ऊँचा खर्च, रोजगार के अवसरों तथा सुरक्षा की कमी के कारण स्त्रियों का गाँवों से नगरों की ओर प्रवास बहुत कम हुआ है।

ग्रामीण-नगरीय संघटन

जनसंख्या का ग्रामीण तथा नगरीय वर्गों में विभाजन, लोगों के निवास-स्थान के आधार पर किया जाता है। अधिकांश देशों में यह विभाजन विभिन्न 'आकार-बिंदु' के संदर्भ में किया जाता है। यह विभाजन इसलिए आवश्यक होता है क्योंकि ग्राम और नगर दोनों ही जीवन-यापन के तरीकों तथा सामाजिक पर्यावरण की दृष्टि से एक-दूसरे से अलग होते हैं। व्यावसायिक संरचना, जनसंख्या का घनत्व एवं सामाजिक व आर्थिक विकास के स्तरों में, दोनों वर्गों में विशेष अंतर होता है।

गाँवों में निवास करने वाली तथा कृषि अथवा प्राथमिक क्रियाकलापों में संलग्न जनसंख्या को *ग्रामीण* वर्ग में रखते हैं। इसके विपरीत, *नगरीय जनसंख्या* गैर-कृषि कार्यों में संलग्न होती है। रोजगार के अवसर की खोज, बेहतर सामाजिक सुविधाएँ तथा उच्च जीवन स्तर की तलाश में लोग नगरीय क्षेत्रों की ओर आकर्षित होते हैं। प्राकृतिक वृद्धि के साथ ग्रामीण क्षेत्रों से नगरों में प्रवास करने वाली जनसंख्या के कारण नगरीय जनसंख्या में वृद्धि होती रहती है।

किसी बस्ती को नगर घोषित करने के लिए प्रयुक्त आँकड़ों में एक देश से दूसरे देश में भिन्नता मिलती है। संयुक्त राज्य अमेरिका में 2,500 से कम जनसंख्या की बस्ती को ग्रामीण और उससे अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्र को नगर की संज्ञा दी जाती है। भारत में वे सभी क्षेत्र जो नगरीय नहीं हैं, ग्रामीण कहलाते हैं।

खेती पर आधारित कृषि प्रधान देशों में ग्रामीण जनसंख्या का प्रतिशत उच्च होता है, जबकि औद्योगिक विकसित प्रदेशों

सारणी 3.1: प्रदेश के अनुसार ग्रामीण व नगरीय जनसंख्या, (सन् 2000)

प्रदेश / महाद्वीप	*कुल जनसंख्या* (करोड़ में)	*नगरीय जनसंख्या*		*ग्रामीण जनसंख्या*	
		कुल (करोड़ में)	प्रतिशत	कुल (करोड़ में)	प्रतिशत
एशिया	368.2	138.3	38	229.9	62
अफ्रीका	78.4	29.5	38	48.9	62
यूरोप	72.9	54.6	75	18.3	25
लैटिन अमेरिका	51.9	39.1	75	12.8	25
उत्तरी अमेरिका	31.0	23.9	77	7.1	23
ओशनिया	3.0	2.1	70	.9	30
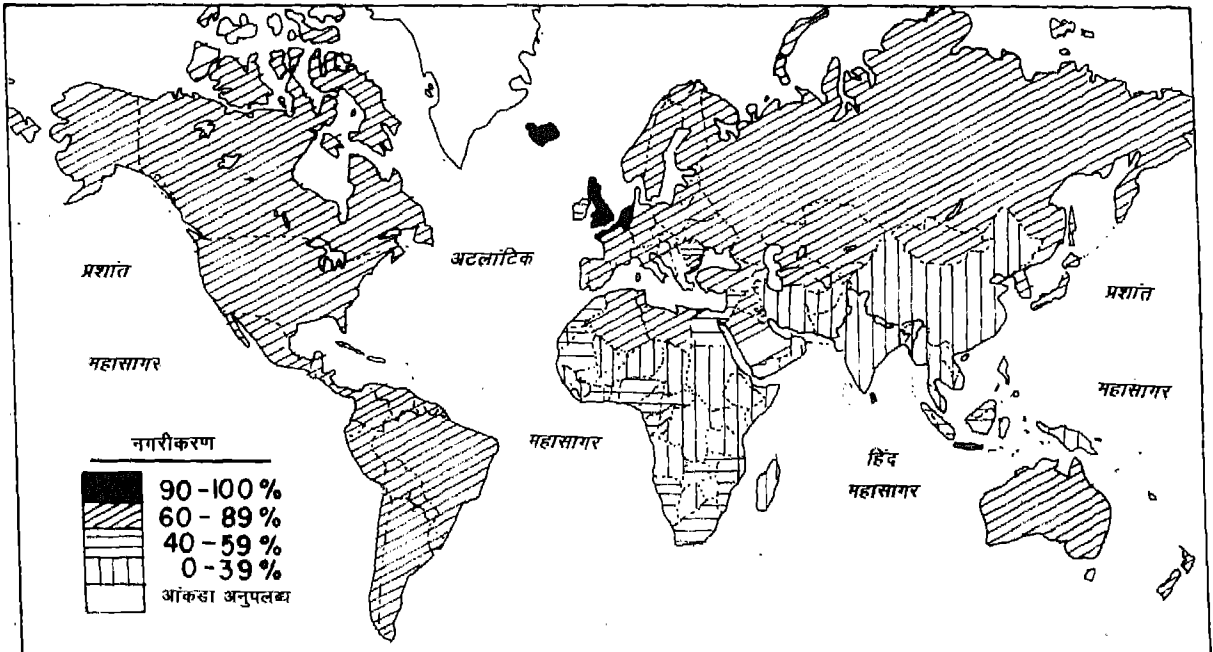
चित्र 3.2 : विश्व नगरीकरण

में नगरीय जनसंख्या का अनुपात अधिक होता है। सारणी 3.1में सन् 2000 में विभिन्न महाद्वीपों की ग्रामीण तथा नगरीय जनसंख्या का वितरण दिया गया है। सिर्फ एशिया तथा अफ्रीका में 60 प्रतिशत से अधिक ग्रामीण जनसंख्या है जबकि विश्व की कुल जनसंख्या के 62 प्रतिशत का निवास नगरों में है। उत्तरी अमेरिका अपनी 77 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या के साथ विश्व का सबसे अधिक नगरीकृत महाद्वीप है।

विश्व की नगरीय जनसंख्या में प्रतिवर्ष 6 करोड़ की वृद्धि हो रही है जो ग्रामीण जनसंख्या में हो रही वृद्धि का लगभग तीन गुना है। दूसरे शब्दों में संसार में प्रथम नगरीय अधिवास के उदय के पश्चात् से ही विश्व की नगरीय जनसंख्या, ग्रामीण जनसंख्या की तुलना में अधिक तीव्र गति से बढ़ी है। लगभग दो शताब्दी पहले सन् 1800 ई. में विश्व की केवल 2.5 प्रतिशत जनसंख्या ही नगरों में निवास करती थी, जबकि 1960 ई. में विश्व की लगभग एक तिहाई जनसंख्या नगरों में रहने लगी थी। सन् 1999 ई. तक 47 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या का आवास नगरीय था। नगरीय जनसंख्या वृद्धि का अधिकांश भाग (6 करोड़ की जनसंख्या का लगभग 60 प्रतिशत) नगरों में जन्मे लोगों से हुई प्राकृतिक वृद्धि है और शेष वृद्धि ग्रामीण क्षेत्रों से नगरों में प्रवास करने वाली जनसंख्या के कारण है।

जनसंख्या के पुनर्वितरण का एक महत्त्वपूर्ण लक्षण, विशेषतः विकासशील देशों में, बड़े-बड़े नगरों की संख्या में वृद्धि है। विश्व की लगभग आधी जनसंख्या नगरों में निवास करती है (चित्र 3.2)। 1960 तथा 2000 के बीच नगर निवासियों की संख्या 80 करोड़ से 290 करोड़ हो गई, जो तीन गुने से अधिक की वृद्धि है, जबकि इसी अवधि में विश्व की कुल जनसंख्या में मात्र दो गुनी (3 अरब से 6 अरब) वृद्धि अंकित की गई। एक जनसंख्या प्रक्षेपण के अनुसार सन् 2030 ई. तक नगरीय संख्या 8 अरब हो जाएगी, जिसमें से 80 प्रतिशत जनसंख्या विकासशील देशों में ही निवास करेगी।

आज तकनीकी, औद्योगिक एवं सेवा-आधारित अर्थव्यवस्थाओं की ओर भूमंडलीय झुकाव के परिणामस्वरूप विश्व जनसंख्या के नगरीकरण दर में तीव्र वृद्धि हुई है। अतः इस बढ़ती हुई नगरीय जनसंख्या से उत्पन्न अभूतपूर्व समस्याओं का समाधान करने में कुछ ही देश समर्थ होंगे। सघन आबाद नगरीय क्षेत्रों में निम्न स्तरीय आवास तथा निकृष्ट सफाई व्यवस्था से उत्पन्न दशाओं के चलते प्रति वर्ष लगभग 1 करोड़ से अधिक लोग मर रहे हैं। सारे विश्व में लगभग 50 करोड़ लोग गृह विहीन हैं या ऐसे घरों में रहते है जहाँ जीवन को हमेशा खतरा बना रहता है।

साक्षरता

साक्षरता जनसंख्या की वह गुणात्मक विशेषता है जो किसी क्षेत्र की सामाजिक-आर्थिक विकास का एक विश्वसनीय तथा यथार्थ सूचक होता है। यह जनसंख्या के उस सामाजिक पक्ष को प्रतिबिंबित करता है, जिससे जनसंख्या की गुणवत्ता को निर्धारित किया जा सकता है। विश्व स्तर पर साक्षरता दर में अत्यधिक विभिन्नता पाई जाती है। *साक्षरता*-दर कुल जनसंख्या में उस जनसंख्या के प्रतिशत को प्रदर्शित करता है जिसमें 15 वर्ष तथा उससे अधिक आयु के लोग, अपने दैनिक जीवन में एक छोटे और सरल कथन को समझकर, पढ़ तथा लिख सकते हैं।

सारणी : 3.2 प्रौढ़ साक्षरता दर 1998

प्रदेश	*15 वर्ष या इससे अधिक के लोगों का प्रतिशत*
सभी विकासशील देश	**72.3**
अल्प विकसित देश	**50.7**
अरब राष्ट्र	59.7
पूर्व एशिया	83.4
पूर्व एशिया (चीन को छोड़कर)	96.3
लैटिन अमेरिका तथा केरिबियन	87.7
दक्षिण एशिया	54.3
दक्षिण एशिया (भारत को छोड़कर)	50.5
दक्षिण-पूर्व एशिया पैसिफिक	88.2
उप-सहारीय अफ्रीका	58.5
पूर्वी यूरोप तथा स्वतंत्र देशों का राष्ट्रकुल	98.6
आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन	**97.4**
उच्च मानव विकास	98.5
मध्यम मानव विकास	76.9
निम्न मानव विकास	48.9
उच्च आय	98.6
मध्यम आय	87.8
निम्न आय	68.9
विश्व	**78.8**

स्रोत : मानव विकास रिपोर्ट - 2000 सारणी-1 यू. एन. डी. पी. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

इस दर को प्रभावित करने वाले कारकों में आर्थिक विकास का स्तर, नगरीकरण, जीवन-स्तर, महिलाओं की सामाजिक स्थिति, विभिन्न शैक्षिक सुविधाओं की उपलब्धता तथा सरकारी नीतियाँ प्रमुख हैं। आर्थिक विकास का स्तर स्वयं साक्षरता का कारण और परिणाम दोनों ही है। सारणी 3.2 विश्व के विभिन्न प्रदेशों में प्रौढ़ साक्षरों के वितरण को प्रदर्शित करती है। उन्नत तथा नगरीय अर्थव्यवस्थाएँ, उच्चतर साक्षरता दर तथा उच्चतर शैक्षणिक स्तर को प्रतिबिंबित करती है। साक्षरता एवं शिक्षा का निम्न स्तर, ग्रामीण-कृषि अर्थव्यवस्था को इंगित करता है। विश्व के सिर्फ विकासशील देशों में जहाँ ऐसी विभिन्नताएँ अधिक दृष्टिगोचर हो रही हैं, साक्षरता-क्रांति को कोई स्वरूप देना अभी शेष है।

जनसंख्या की व्यावसायिक संरचना

सामान्यत: "पारिश्रमिक युक्त व्यवसाय कार्यों से संलग्न तथा इन्हीं कार्यों से जीविकोपार्जन करने वाली जनसंख्या" को आर्थिक रूप से सक्रिय जनसंख्या कहा जाता है। कार्यशील आयु से कम आयु के बच्चे, वृद्ध, सेवामुक्त व्यक्ति, गृहणियाँ, विद्यार्थी आदि जो अपने जीवनयापन के लिए किसी आर्थिक कार्य में संलग्न नहीं हैं, सक्रिय जनसंख्या से अलग रखे जाते हैं। किसी निश्चित आर्थिक कार्य के अंतर्गत इसी सक्रिय जनसंख्या के आनुपातिक वितरण को व्यावसायिक संरचना कहते हैं। संयुक्त राष्ट्र ने निम्न प्रकार के व्यावसायिक वर्गों की पहचान की है :

कृषि; वानिकी; आखेटन और मत्स्य पालन; खनन तथा उत्खनन; विचारों का विकास जैसे विनिर्माण उद्योग, निर्माण कार्य; बिजली, गैस, जल एवं स्वास्थ्य सेवाएँ; वाणिज्य; परिवहन, भंडारण, एवं संचार-सेवाएँ तथा अवर्गीकृत व्यवसाय।

यह वर्गीकरण अंतर्राष्ट्रीय तुलना के लिए आवश्यक है, किंतु प्रत्येक देश अपनी जनसंख्या को अपनी आवश्यकता के अनुसार अलग-अलग व्यावसायिक वर्गों में वर्गीकृत करता है।

वर्गीकरण के एक वैकल्पिक स्वरूप में उपरोक्त वर्गों को घटाकर चार मुख्य वर्गों में बाँटा जाता है :

प्राथमिक व्यवसाय, इसके अंतर्गत आखेटन, कृषि, वानिकी तथा, मत्स्य पालन सम्मिलित हैं; *द्वितीयक व्यवसाय* में विनिर्माण उद्योग तथा शक्ति उत्पादन आते हैं; *तृतीयक व्यवसाय* में परिवहन, संचार और अन्य सेवाएँ सम्मिलित की जाती हैं; तथा *चतुर्थक व्यवसाय* के अंतर्गत अधिक बौद्धिकतापूर्ण व्यवसाय सम्मिलित किए जा रहे हैं, जिनका कार्य चिंतन शोध तथा विचारों का विकास करना है।

इन क्रियाकलापों में संलग्न कार्यशील जनसंख्या का अनुपात, विभिन्न देशों में उनके आर्थिक विकास के स्तर के आधार पर भिन्न-भिन्न होता है। यदि अर्थव्यवस्था अल्प विकसित है तो वहाँ पर प्राथमिक कार्य में क्रियाशील जनसंख्या का अनुपात अधिक होता है। अर्थव्यवस्था के विकास के साथ पहले द्वितीयक तथा उसके बाद तृतीयक कार्यों में क्रियाशील जनसंख्या के अनुपात में वृद्धि होती जाती है। अति उच्च औद्योगीकृत देशों में, तृतीयक कार्यों में संलग्न लोगों का अनुपात 40 से 45 प्रतिशत तक है। संयुक्त राज्य अमेरिका में यह 70 प्रतिशत से अधिक है। चतुर्थक वर्ग से संबंधित आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं किंतु ऐसा अनुमान है कि यद्यपि इस वर्ग में अभी जनसंख्या के अल्प प्रतिशत को ही रोजगार प्राप्त है, परंतु इनकी आय सर्वाधिक होती है तथा वे अत्यधिक गतिशील हैं।

जनसंख्या और विकास

मनुष्य विकास प्रक्रिया का केंद्र तथा सभी विकास रणनीतियों का एक अभिन्न तत्व होता है। विकास के अर्थ को लेकर अनेकों अलग-अलग तथा बहुधा परस्पर विरोधी विचार सामने आते हैं। विभिन्न समय और स्थान के संदर्भ में सबसे उपयुक्त रणनीति का अनुसरण करने की आवश्यकता है। जनसंख्या के बड़े आकार को अनेक लोग विकास में ऋणात्मक कारक के रूप में देखते हैं, परंतु बहुत कुछ जनसंख्या के गुण पर निर्भर करता है।

यदि खाद्य उत्पादन की तुलना में जनसंख्या वृद्धि अधिक हो तो माल्थस ने मानव जाति के लिए एक डरावने भविष्य की बात कही थी। इस भविष्यवाणी के समय से ही जनसंख्या और खाद्य आपूर्ति के बीच का संबंध अध्ययन का विषय बन गया है। असमान जनसंख्या वृद्धि पर और खाद्य उत्पादन में तकनीकी क्रांतियों के कारण यह बताना कठिन है कि खाद्य आपूर्ति की दर क्या होगी या उसका उपभोग किस प्रकार बदलेगा। इसके साथ ही यह तथ्य भी विचारणीय है कि खाद्य उत्पादन बढ़ाने के लिए भूमि के अति उपयोग या दुरुपयोग से पर्यावरण पर भयंकर परिणाम पड़ते हैं और इस प्रकार खाद्य सुरक्षा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होती है।

इस संदर्भ में छानबीन के प्रमुख प्रश्न यह हैं : क्या जनसंख्या वृद्धि में पाई जाने वाली प्रादेशिक विभिन्नताएँ उन

क्षेत्रों की भरण-पोषण क्षमताओं में पाई जाने वाली प्रादेशिक विषमताओं के अनुरूप हैं? यदि नहीं, तो वृद्धि दरों में ये विभिन्नताएँ जनसंख्या और संसाधनों के बीच असंतुलन उत्पन्न करने में किस सीमा तक उत्तरदाई हैं ? इस प्रकार जनसंख्या और संसाधनों के बीच संतुलन के किसी मूल्यांकन में जनसंख्या वृद्धि महत्त्वपूर्ण तत्त्व बन जाता हैं। किंतु हम इस तथ्य की उपेक्षा नहीं कर सकते हैं कि केवल उच्च जनसंख्या वृद्धि अथवा संसाधनों की कमी ही असंतुलन के लिए उत्तरदाई है। सामाजिक संरचना, प्रौद्योगिक उन्नति की अवस्था, वितरण प्रणाली की विशेषताएँ और सरकारी नीतियाँ आदि वे तत्व हैं जो मनुष्यों तथा संसाधनों के बीच संतुलन को प्रभावित करते हैं। इस प्रकार एक भूभाग द्वारा पोषित जनसंख्या उस क्षेत्र के भौतिक संसाधनों पर ही निर्भर नहीं होती अपितु यह सामाजिक, आर्थिक, प्रौद्योगिक और राजनीतिक दशाओं पर भी निर्भर करती है। इस प्रकार जनसंख्या और जीवन निर्वाह के साधनों के बीच संतुलन संबंधी किसी निर्धारण में, ये सभी कारक उस प्रणाली के महत्त्वपूर्ण घटक का निर्माण करते हैं। इस जटिल अंतर्संबंध को, विभिन्न विद्वानों और चिंतकों द्वारा एक मॉडल या सिद्धांत के रूप में प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत अध्याय में हम मानव विकास की संकल्पना से परिचित होंगे, जो विकास को सिर्फ आर्थिक विकास के रूप में देखने की अवधारणा का विकल्प है।

मानव विकास सूचकांक (एच.डी.आई.)

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू.एन.डी.पी.) द्वारा प्रस्तावित मानव विकास प्रतिवेदन (रिपोर्ट)-1990 के अनुसार विकास सिर्फ लोगों की आय तथा पूँजी का ही विस्तार नहीं अपितु यह मानव के कार्यप्रणाली- कार्य करने के तरीके तथा क्षमताओं में उन्नयन की प्रक्रिया है। विकास की इसी विचारधारा को *मानव विकास* नाम दिया गया है। इस संकल्पना को इस प्रकार परिभाषित करते हैं "*मानव विकास मनुष्य की आकांक्षाओं एवं उन्हें उपलब्ध जीवनयापन की सुविधाओं के स्तर को विस्तृत करने की प्रक्रिया है।* यह प्रतिवेदन बताती है कि विकास के स्तर के अतिरिक्त लोगों की तीन आकांक्षाएँ हैं: प्रथम, लंबा एवं स्वस्थ जीवन व्यतीत करना; द्वितीय, साक्षर या ज्ञानवान होना और तृतीय, उत्तम जीवन स्तर के लिए आवश्यक संसाधनों की उपलब्धता या प्राप्ति। इन्हें तीन अलग-अलग सूचकों द्वारा प्रदर्शित किया जाता है : जीवन काल; जिसकी माप जन्म के समय जीवन प्रत्याशा से की जाती है; शैक्षिक उपलब्धता, जिसे प्रौढ़ साक्षरता (दो-तिहाई भार) और प्राथमिक, माध्यमिक तथा तृतीयक स्तर की शिक्षा के सम्मिलित सकल नामांकन अनुपात (एक-तिहाई भार), दोनों को जोड़कर मापा जाता है तथा जीवन स्तर, जिसे प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद के रूप में आय (जी.डी.पी.) द्वारा मापा जाता है। सकल घरेलू उत्पाद को अमेरिकी डॉलर की क्रय-शक्ति समता (पी.पी.पी.) के आधार पर आकलित करते हैं।

संयुक्त राष्ट्र द्वारा सन् 1990 से प्रतिवर्ष यह मानव विकास सूचकांक तैयार किया जा रहा है। यह आधारभूत मानव विकास की औसत उपलब्धियों को एक सरल संश्लिष्ट सूचकांक के रूप में मापता है तथा विभिन्न देशों का पदानुक्रम निर्धारित करता है।

मानव विकास सूचकांक का परिकलन

सूचकांक निर्मित करने के लिए प्रत्येक सूचक के लिए सर्वप्रथम न्यूनतम तथा अधिकतम मान निश्चित कर लेते हैं:
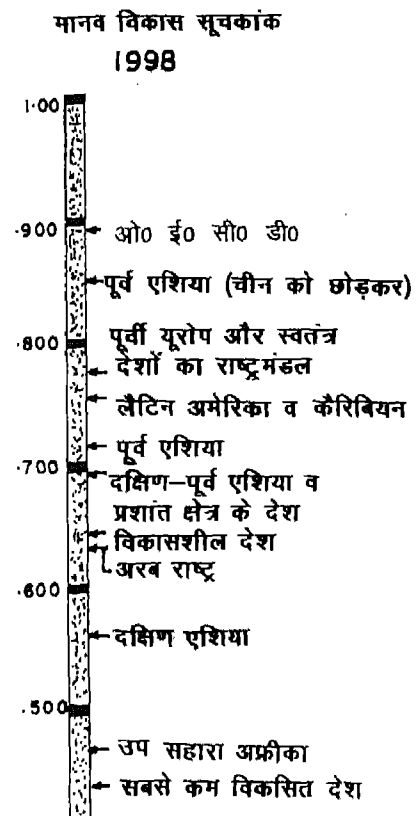
चित्र 3.3 : मानव विकास में प्रादेशिक विभिन्नता

- जन्म के समय जीवन प्रत्याशा : 25 वर्ष और 85 वर्ष;
- सामान्य साक्षरता दर : 0 प्रतिशत और 100 प्रतिशत
- प्रति व्यक्ति वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद (पी.पी.पी $): 100 अमेरिकी डालर और 40,000 अमेरिकी डालर।

पहले प्रत्येक सूचक का मान दिए गए सूत्र के आधार पर निकाला जाता है। मानव विकास सूचकांक इन तीनों सूचकों का औसत है। अत: इन तीनों सूचकों के मानों के योगफल को 3 से भाग देने पर मानव विकास सूचकांक प्राप्त होता है।

मानव विकास सूचकांक के चरों के मानों को सामान्यीकृत करने पर इसका मान शून्य से एक (0-1) के बीच ही रहता है। किसी देश या प्रदेश के लिए मानव विकास सूचकांक उस दूरी को प्रदर्शित करता है जो इसे अधिकतम संभावित मान 1 तक पहुँचने के लिए तय करना पड़ेगा। इससे दो देशों के बीच विकास-स्तर की तुलना करने में भी सहायता मिलती है। इस प्रकार यह सूचकांक प्रत्येक देश के समक्ष इस मानक (सूचकांक 1) को प्राप्त करने के उपायों को ढूँढ़ने की चुनौती भी प्रस्तुत है।

अंतर्राष्ट्रीय तुलनाएँ

वर्ष 2000 में जिन 174 देशों के लिए मानव विकास सूचकांक की गणना की गई उनमें से 46 उच्च मानव विकास श्रेणी में (सूचकांक 0.8 से अधिक); 93 मध्यम श्रेणी (0.5 से0.79) में; तथा 35 निम्न श्रेणी (0.5 से कम) में स्थित थे। 20 देशों ने एड्स के प्रभाव के फलस्वरूप वर्ष 1990 से ही मानव विकास में उत्क्रमण का अनुभव किया। इसमें सर्वाधिक ह्रास (उत्क्रमण) उपसहारीय अफ्रीका, पूर्वी यूरोप तथा स्वतंत्र देशों के राष्ट्रकुल (पूर्व सोवियत संघ) के देशों में हुआ है (परिशिष्ट-II)।

- मानव विकास के शिखर पर कनाडा, नार्वे, संयुक्त राज्य अमेरिका प्रतिस्थापित हैं जबकि सियरा लियोन, नाइजर तथा बुरकिना फासो न्यूनतम स्तर पर विद्यमान हैं।
- प्रादेशिक असमानताएँ काफी हैं। कुछ देशों को लक्ष्य तक पहुँचने के लिए अभी लंबी दूरी तय करनी है जबकि कुछ को कम ही। उप-सहारीय अफ्रीका को लैटिन अमेरिका तथा कैरिबियन की तुलना में लगभग दोगुनी दूरी तय करनी है तो दक्षिण एशिया को चीन रहित पूर्वी एशिया से लगभग तीन गुनी अधिक विकास यात्रा करनी है।
- अंतर्देशीय असमानताएँ भी बहुत हो सकती हैं। दक्षिण पूर्व एशिया एवं प्रशांत क्षेत्र में यह सूचकांक लाओ लोकतांत्रिक गणराज्य में 0.484 से सिंगापुर में 0.881 के बीच है। अरब देशों में यह मान जिबूती में 0.447 से कुवैत में 0.836 तक देखा जाता है।
- आर्थिक संपन्नता और विकास के बीच सहसंबंध न तो स्वचालित हैं और न ही स्पष्ट। कुल 174 देशों में से 97 देशों में मानव विकास सूचकांक का क्रम, प्रति व्यक्ति सकल घेरलू उत्पाद की तुलना में ऊँचा है, जो यह प्रदर्शित करता है कि इन देशों ने अपनी आय को बड़ी कुशलता से मानव विकास में परिवर्तित कर लिया है। 69 देशों में मानव विकास सूचकांक प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद से कम है। ये देश अपनी आर्थिक संपन्नता का उपयोग करते हुए अपने देशवासियों के जीवन स्तर को बेहतर बनाने में अधिक सफल नहीं हुए हैं।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए :
   (i) जनसंख्या संघटन का क्या अर्थ है ?
   (ii) किसी देश की जनसंख्या के जनांकिकीय निर्धारक के रूप में आयु-संरचना का क्या महत्त्व है ?
   (iii) ऊपर की ओर नियमित रूप से संकीर्ण होने वाला आयु-लिंग पिरामिड जनसंख्या संबंधी किन-किन विशेषताओं को प्रकट करता है ?
   (iv) लिंग-अनुपात किसे कहते हैं ?
   (v) विकासशील देशों में नगरीकरण की दर तेजी से क्यों बढ़ रही है ?
   (vi) साक्षरता दर से क्या तात्पर्य है ? संसार के विभिन्न देशों के बीच साक्षरता दर में बड़ी असमानता क्यों है ?

(vii) मानव विकास सूचकांक किसे कहते हैं ?

(viii) 1990 से किन प्रदेशों ने मानव विकास में उत्क्रमण का अनुभव किया ?

2. विकासशील जनसंख्या एवं ह्रासमान जनसंख्या में अंतर बताइए ।
3. लिंग-संरचना द्वारा प्रकट की जाने वाली विश्व जनसंख्या की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
4. संसार में ग्रामीण-नगरीय जनसंख्या के प्रतिरूप पर चर्चा कीजिए।
5. जनसंख्या और विकास के बीच अंतर्संबंधों की व्याख्या कीजिए।
6. संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम द्वारा परिभाषित मानव विकास की संकल्पना समझाइए और मानव विकास सूचकांक विकसित करने के पक्ष में तर्क दीजिए।

भौगोलिक कुशलताएँ

7. परिशिष्ट-II से निम्नलिखित मालूम कीजिए :

(i) कनाडा, स्वीडन, जर्मनी, रूस, ब्राजील, श्रीलंका, भारत, नेपाल, जांबिया और इथोपिया को क्या-क्या क्रम या स्थान दिए गए हैं?

(ii) यूरोप के कितने देश प्रत्येक वर्ग में हैं ?

(iii) एशिया के कौन से देश उच्च मानव विकास की श्रेणी में हैं ?

(iv) अफ्रीका के कितने देश निम्न मानव विकास की श्रेणी में हैं ?

(v) ऊपर की जानकारियों से क्या प्रतिरूप उभरता है ?

इकाई III

मानव क्रियाकलाप

4 अध्याय
मानव क्रियाकलाप : प्राथमिक

मनुष्य विभिन्न प्रकार की वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन, विनिमय या वितरण एवं उपभोग से संबंधित आर्थिक क्रियाकलापों में संलग्न रहता है। मानव समाज के विकास के साथ-साथ आर्थिक क्रियाकलापों की प्रकृति में अत्यधिक परिवर्तन हुए हैं तथा यह अधिकाधिक जटिल हो गई है।

ऐतिहासिक पक्ष

मानव अपने जीवन की रक्षा तथा विकास के लिए भौतिक पर्यावरण पर उसी समय से आश्रित रहा है जबसे उसका उद्भव पृथ्वी पर हुआ। आज भी हम अपनी विभिन्न भौतिक तथा सौंदर्यपरक आवश्यकताओं के लिए प्रकृति पर आश्रित रहते हैं। धूप, मृदा, खनिज एवं शैल, जल, वनस्पति तथा जीव-जंतु के अभाव में हमारा अपना ही अस्तित्व संभव नहीं है।

आदिमानव साधारण किंतु कठिन जीवन व्यतीत करते थे। उनकी आवश्यकताएँ सीमित थीं। वे एक स्थान से दूसरे स्थान पर भोजन तथा जल की खोज में घूमते रहते थे। वे अपनी भूख को शांत करने के लिए जानवरों का शिकार करते थे और खाने योग्य पेड़-पौधों से फल, गिरीफल, जड़, तना और पत्ते एकत्र करते थे। मनुष्यों द्वारा पेड़-पौधों और जीव-जंतुओं का घरेलूकरण किए बिना जीवन निर्वाह के लिए पशुओं का शिकार जंगली पेड़-पौधों से भोजन एकत्र करना और मछली पकड़ना *चरवाही जीवन* कहा जाता है।

भोजन बनाने तथा गर्म करने के लिए आग का प्रयोग, पशुओं का घरेलूकरण, फसलों की खेती और स्थाई गाँवों में निवास ने कृषि क्रांति की नींव डाली। ये सभी विकास न तो एक साथ हुए न ही एकाकी। वे आपस में एक-दूसरे के साथ कार्य-कारण संबंध द्वारा जुड़े हुए थे।

कृषि क्रांति कब आई ? इस प्रश्न का उत्तर कठिन है, यद्यपि यह स्पष्ट कहा जा सकता है कि संसार के विभिन्न प्रदेशों में इसके घटित होने का समय भिन्न-भिन्न था। उपलब्ध पुरातात्विक साक्ष्यों के अनुसार नदी घाटियों में ही कृषि क्रांति का अनुभव किया गया, जहाँ प्राचीन सभ्यता का विकास हुआ था।

कृषि क्रांति ने लोगों के जीवन को काफी परिवर्तित किया क्योंकि उनके पास अन्य कार्यों के लिए काफी समय रहता था। कृषि एवं दूसरी मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक दस्तकारी कार्यों में वृद्धि हुई तथा सौंदर्य-बोध का विकास हुआ। कृषि तथा दस्तकारी उत्पादों के व्यापार से नए परिवहन मार्ग खुले। गाँवों के आकार में वृद्धि के साथ वे पहले छोटे तथा बाद में बड़े नगरों में बदले। लगभग 5 हजार वर्ष पहले, मिस्र में नील नदी के डेल्टा, मेसोपोटामिया में दजला एवं फरात की घाटियों एवं भारत में सिंधु घाटी में सुविकसित नगर एवं शहरों का विकास हुआ। किंतु इन सभी नगरों के आधार कृषि तथा उससे जुड़े क्रियाकलाप ही थे।

कई शताब्दियों के बाद यूरोप में अठारहवीं शताब्दी में मानव सभ्यता में एक क्रांतिकारी परिवर्तन आया। उस समय प्रतिकूल जलवायु दशाओं के कारण यूरोप कृषि की दृष्टि से कम विकसित था। भाप के इंजन के आविष्कार से प्रारंभ हुई औद्योगिक क्रांति ने विकास के स्वरूप को बिलकुल बदल दिया। जहाँ कृषि क्रांति प्रकृति में उपलब्ध जैविक उत्पादों के अधिक संगठित तरीके से उपयोग करने से प्रारंभ हुई, वहाँ औद्योगिक क्रांति प्रकृति में कोयला एवं पेट्रोल के रूप में संचित ऊर्जा शक्ति के प्रयोग पर आश्रित थी। इसने लोगों को शारीरिक श्रम की पीड़ा से मुक्ति दिलाई तथा गैरकृषि सामग्रियों के बड़े पैमाने पर उत्पादन करने में सहायता की। इसका शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन तथा व्यापार पर भी प्रभाव पड़ा।

औद्योगिक क्रांति के प्रतिकूल प्रभाव भी थे। यूरोपीय देशों ने इसकी शक्ति का उपयोग अपनी जनसंख्या के

जीवन में सुधार लाने के लिए किया। उनके पास प्राकृतिक संसाधन सीमित थे। अतः विकास की संभावनाएँ भी सीमित थीं। अपने देश से बाहर दूसरे महाद्वीपों में जाकर उन्होंने उपनिवेश बनाना शुरू किया। समुद्र-पार के उपनिवेशों ने उन्हें न सिर्फ समुचित प्राकृतिक संसाधन प्रदान किया अपितु उनके औद्योगिक उत्पादों को बेचने के लिए बहुत बड़ा बाजार भी प्रस्तुत किया। इस बात की झलक इन उपनिवेशों में उस अवधि में विकसित परिवहन मार्गों को देखने से मिलती है। इस डिज़ाइन की व्याख्या अनेक उपनिवेशों में पत्तन नगरों के विकास और उन्हें पृष्ठ प्रदेश से जोड़ने के मार्गों को देखने से हो जाती है। धीरे-धीरे परिस्थिति में बदलाव आया। यूरोप जो अभी तक विकासशील अवस्था में था, विकसित हो गया तथा अन्य महाद्वीप, विशेषतः एशिया, जो उस समय अधिक विकसित थे, अल्प विकसित अवस्था में आ गए।

बीसवीं शताब्दी के मध्य तक, संसार के औद्योगिक ढाँचे के पुराने होने के स्पष्ट संकेत मिलने लगे। दो विश्व युद्धों तथा अनेक स्थानीय झगड़ों के कारण हथियार एवं गोला-बारूद के उत्पादन से संबंधित बेलगाम औद्योगीकरण के विरोध में मानव विवेक जगा। पर्यावरणीय संकट ने मनुष्य को एक वैकल्पिक सतत विकास के मॉडल पर सोचने के लिए मजबूर किया। औद्योगिक विश्व में बढ़ती आय के बीच तीन महाद्वीपों- एशिया, अफ्रीका तथा दक्षिण अमेरिका में बढ़ती हुई निर्धनता ने, औद्योगीकरण में लोगों की आस्था को झकझोर दिया, क्योंकि इसे पहले सभी समस्याओं का मुक्तिदाता समझा गया था।

मानवोचित विकास मॉडल का कोई मूर्त स्वरूप विकसित होता उससे पहले ही औद्योगिक विश्व को अपने भीतर की ही चुनौतियों का सामना करना पड़ा। सूचना तंत्र की भूमिका बढ़ी तथा 1980 के दशक तक पश्चिमी देशों में ज्ञान का उत्पादन एवं प्रसारण ही महत्त्वपूर्ण व्यवसाय बन गया। मानवीय सभ्यता में यह तृतीय महत्त्वपूर्ण परिवर्तन, *सूचना क्रांति* के नाम से विख्यात हुआ। बीसवीं शताब्दी के अंत तक यह एक वास्तविकता में परिणत हो गया। औद्योगिक युग अभी भी चल रहा है, किंतु इसके शीघ्र अवसान के लक्षण स्पष्ट हैं।

सूचना क्रांति में संपूर्ण विश्व (विकसित तथा विकासशील) को एक समूह में जोड़ने की संभाव्यता है, क्योंकि मानवीय संभावनाएँ, प्राकृतिक संसाधनों की भाँति असमान वितरित नहीं हैं। इसके साथ ही हमारे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में सूचना प्रौद्योगिकी के प्रयोग ने विकास के नए तथा अधिक अच्छे अवसर प्रदान किए हैं। यदि उनका विवेकपूर्ण संचालन किया गया तो धनी एवं निर्धन के बीच की खाई घटेगी।

आर्थिक क्रियाकलापों के प्रकार

उपरोक्त भूमिका के साथ, अब हम विभिन्न प्रकार के आर्थिक क्रियाकलापों जैसे आखेट एवं संग्रहण, पशुचारण, खनन, मछली पकड़ना, कृषि, निर्माण उद्योगों तथा विभिन्न प्रकार की सेवाओं-व्यापार, परिवहन, शिक्षा, स्वास्थ्य, रक्षा तथा प्रशासन की पहचान कर सकते हैं। इन्हें मुख्य रूप से प्राथमिक, द्वितीयक, तृतीयक एवं चतुर्थक क्रियाकलापों में वर्गीकृत करते हैं।

प्राथमिक क्रियाकलापों में धरातल से कच्चे पदार्थों को निकालने या उत्खनन के कार्य, जैसे आखेट एवं संग्रहण, पशुचारण, मछली पकड़ना, वानिकी, खनन तथा कृषि सम्मिलित हैं ।

द्वितीयक क्रियाकलापों में उद्योगों को सम्मिलित किया जाता है जो कच्ची सामग्री को उच्च मूल्य के तैयार माल में परिवर्तित करते हैं। उदाहरणार्थ, कपास द्वारा सूती वस्त्र, लौह अयस्क से लोहे एवं इस्पात का निर्माण द्वितीयक क्रियाकलाप के अंतर्गत आता है।

तृतीयक क्रियाकलाप के अंतर्गत लोगों को प्रदान की जाने वाली सभी प्रकार की सेवाएँ जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, व्यापार तथा परिवहन सम्मिलित की जाती हैं।

चतुर्थक क्रियाकलाप एक विशेष प्रकार की सेवा को प्रदर्शित करते हैं, जो उच्च बौद्धिक कार्यों जैसे अनुसंधान एवं विकास, उच्च स्तर की पेशेवर तथा प्रशासनिक सेवाएँ, सूचनाओं के उत्पादन, संसाधन एवं प्रसारण से संबंधित हैं।

मानव क्रियाकलापों को प्राथमिक, द्वितीयक, तृतीयक तथा चतुर्थक वर्गों में रखते समय हमें यह नहीं सोचना चाहिए कि वे एक-दूसरे से पृथक हैं। इनकी सीमाएँ परस्पर व्याप्त होती हैं। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में उन्नति के साथ सभी क्षेत्रों में उत्पादन की प्रकृति इतनी बदल गई है कि ये सभी खंड एक-दूसरे पर आश्रित हो गए हैं।

प्राथमिक क्रियाकलाप

आर्थिक रूप से विकसित राष्ट्रों में 5 प्रतिशत से कम ही लोग प्राथमिक कार्यों में लगे हैं, परंतु संसार के अधिकांश

विकासशील देशों में यह खंड अभी भी श्रम शक्ति के अधिकांश भाग को रोजगार देता है। इन क्रियाकलापों के अंतर्गत कुछ अति आदिम कार्यों जैसे आखेट एवं संग्रहण को सम्मिलित किया जाता है जिसने पृथ्वी पर मानव जाति का, उसके अस्तित्व के 95 प्रतिशत से अधिक समय तक पोषण किया है।

आखेट एवं संग्रहण

12,000 वर्ष पहले तक सभी मानव आखेटक एवं संग्राहक का जीवन व्यतीत कर रहे थे। वे धरातल के सभी रहने योग्य स्थानों पर फैले थे। वर्तमान समय में एक लाख की जनसंख्या में लगभग एक व्यक्ति ही (0.0001 प्रतिशत से कम) इस तरीके से रह रहा है। संभवत: आधुनिक विश्व से बिना किसी संपर्क के शायद ही कोई ऐसी जिंदगी जी रहा हो।

ऐतिहासिक दृष्टि से इस अर्थव्यवस्था में लोग भोजन की तलाश में बराबर एक स्थान से दूसरे स्थान तक घूमते रहते थे। लोग बिना किसी निजी संपत्ति के छोटे सूमहों में जीवन-यापन करते थे। आखेट में साधारण शस्त्र जैसे भाला, धनुष और बाण का ही प्रयोग किया जाता था। उनके वस्त्र तथा निवास में स्थानीय सामग्रियों का ही प्रयोग होता था। विभिन्न जलवायु तथा जैविक संसाधनों वाले विविध प्रकार के क्षेत्रों में रहने में चरवाहे बहुत ही सफल थे। ध्रुवीय तटों के कठोर परिवेश में निवास करने वाले लोगों का भरण-पोषण समुद्र से प्राप्त मछलियों तथा अन्य समुद्री जीवों से होता था। इसके विपरीत, आखेट एवं संग्रह करने वाले लोगों ने उष्ण वर्षा वनों का सफलतापूर्वक उपनिवेशन किया। सामान्यत: घुमक्कड़ प्रकृति के कारण ये लोग प्राकृतिक पारिस्थितिकी में कोई बड़ा परिवर्तन किए बिना ही वहाँ रहते थे।

आखेटक-संग्राहक लोगों में अत्यधिक प्रतिरोधी क्षमता देखी जाती है। कुछ सौ वर्षों पहले भी यानि 1500 ई. में भूमंडल के एक तिहाई भाग पर इनका निवास था, जिसमें संपूर्ण आस्ट्रेलिया, अधिकांश उत्तर अमेरिका तथा दक्षिण अमेरिका, अफ्रीका व उत्तर-पूर्व के बड़े भाग सम्मिलित थे।

तत्पश्चात् इनकी संख्या में कमी हुई है (चित्र 4.1)। बीसवीं शताब्दी में इनके जीवनयापन के तरीके में अत्यधिक परिवर्तन हुआ है। औद्योगीकरण तथा नगरीकरण में वृद्धि के साथ ही इनकी भूमि तथा संसाधन सिकुड़ से गए। वर्तमान काल के आखेटक तथा संग्राहक, आस्ट्रेलिया, अफ्रीका, उत्तर
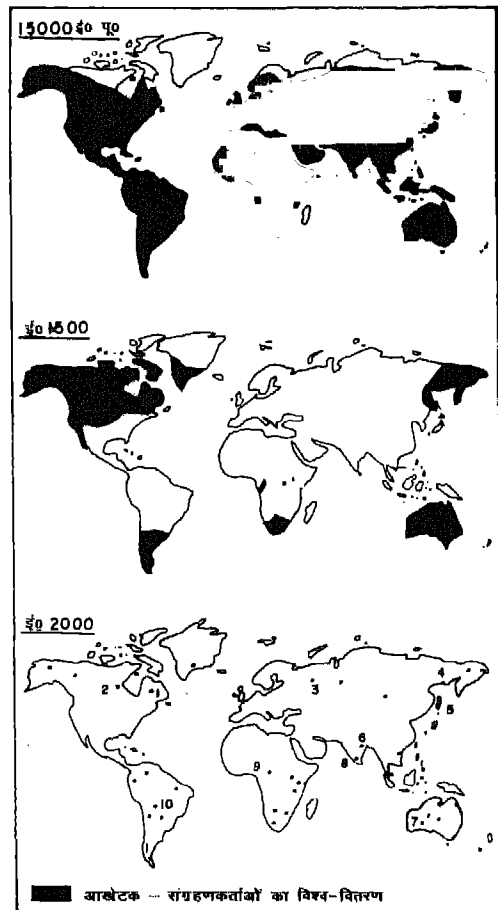
चित्र 4.1 : विश्व : आखेटकों एवं संग्राहकों का वितरण (1) इन्नू ; (2) इनुइट ; (3) खांटी ; (4) इवेंकी ; (5) ऐनु ; (6) बिरहोर ; (7) पिंटुपी ; (8) पालियान ; (9) पिग्मी ; (10) टोबा

स्रोत : स्कार, सी. (संपादक), 1988, **पास्ट वर्ल्ड्स** : द टाइम्स एटलस ऑफ आर्कियोलोजी, लंदन, टाइम्स बुक

अमेरिका तथा दक्षिण अमेरिका के कुछ ही भागों तक सीमित हैं। आर्कटिक के इनुइट; अफ्रीका के पिग्मी तथा कालाहारी सान; आस्ट्रेलिया के पिंटुपी दक्षिणी भारत के पालियान एवं मलेशिया के सेमांग इनके उदाहरण हैं, जो मानव द्वारा पर्यावरण अनुकूलन के प्राचीनतम स्वरूप को प्रकट करते हैं।

पशुचारण

सभ्यता के विकास में पशुओं को पालतू बनाना प्रारंभिक कदमों में से एक था (चित्र 4.2)। विभिन्न जलवायु दशाओं में रहने वाले लोगों ने उन प्रदेशों में पाए जाने वाले जानवरों को पालतू बनाने के लिए चुना, जैसे घास के मैदानों में गाय-बैल एवं घोड़े, टुंड्रा प्रदेश में भेड़ें तथा रेंडियर, उष्ण मरुस्थलों में
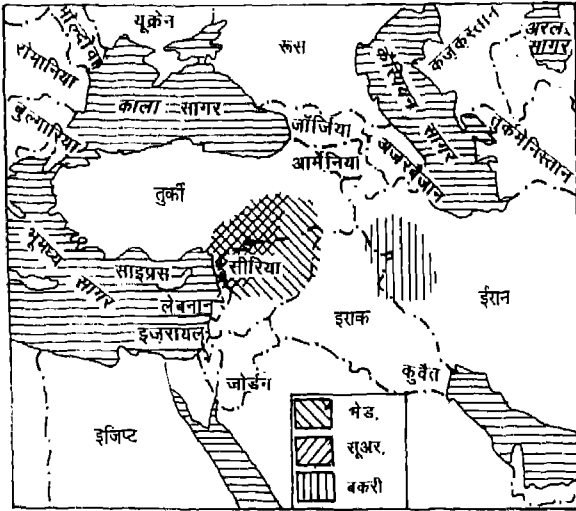
चित्र 4.2 : पालतू पशुओं के पूर्वजों का संभावित वितरण

ऊँट तथा एंडीज एवं हिमालय के उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में क्रमशः लामा तथा याक। ये जानवर ही दूध, मांस, ऊन तथा खालों के प्रमुख स्रोत थे। संसार के उष्ण तथा उपोष्ण घास के मैदानों के पशुचारण तथा पशुपालन आज भी परंपरागत चलवासी पशुचारण अथवा व्यापारिक पशुपालन के रूप में प्रचलित हैं।

चलवासी पशुचारण : यह पशुओं पर आधारित जीवन-निर्वाह करने की क्रिया है। चूँकि ये लोग स्थाई जीवन नहीं जीते अतः इन्हें *चलवासी* कहा जाता है। प्रत्येक चलवासी समुदाय एक सुस्पष्ट सीमा-क्षेत्र में विचरण करता है। इनके द्वारा अधिग्रहीत क्षेत्र में चारागाह की उपलब्धता तथा जल की आपूर्ति में मौसम के अनुसार परिवर्तनों की पूर्ण जानकारी होती है। यहाँ पशु पूर्णतः प्राकृतिक वनस्पति पर ही निर्भर होते हैं।

अधिक वर्षा वाली घास भूमियों में जहाँ लंबी तथा मुलायम घास पाई जाती है, गाय-बैल पाले जाते हैं। कम वर्षा तथा छोटी घास वाले क्षेत्रों में भेड़ें पाली जाती हैं। ऊबड़-खाबड़ धरातल जहाँ घास की मात्रा बहुत कम होती है, वहाँ बकरियाँ अधिक पाली जाती हैं। चलवासी पशुचारण के अंतर्गत मुख्यतः छः पशु प्रजातियों का पालन अधिक होता है जिनमें भेड़ें, बकरियाँ, ऊँट, गाय-बैल, घोड़े तथा गधे आते हैं।

संसार के कुछ भागों में चरवाहे अपने पशुओं के साथ ऋतु परिवर्तन के अनुसार एक स्थान से दूसरे स्थान को प्रवास करते हैं। उदाहरण के लिए पर्वतीय प्रदेशों जैसे हिमालय में गुज्जर, बकरवाल गद्दी एवं भोटिया गर्मी में मैदानों से पहाड़ों
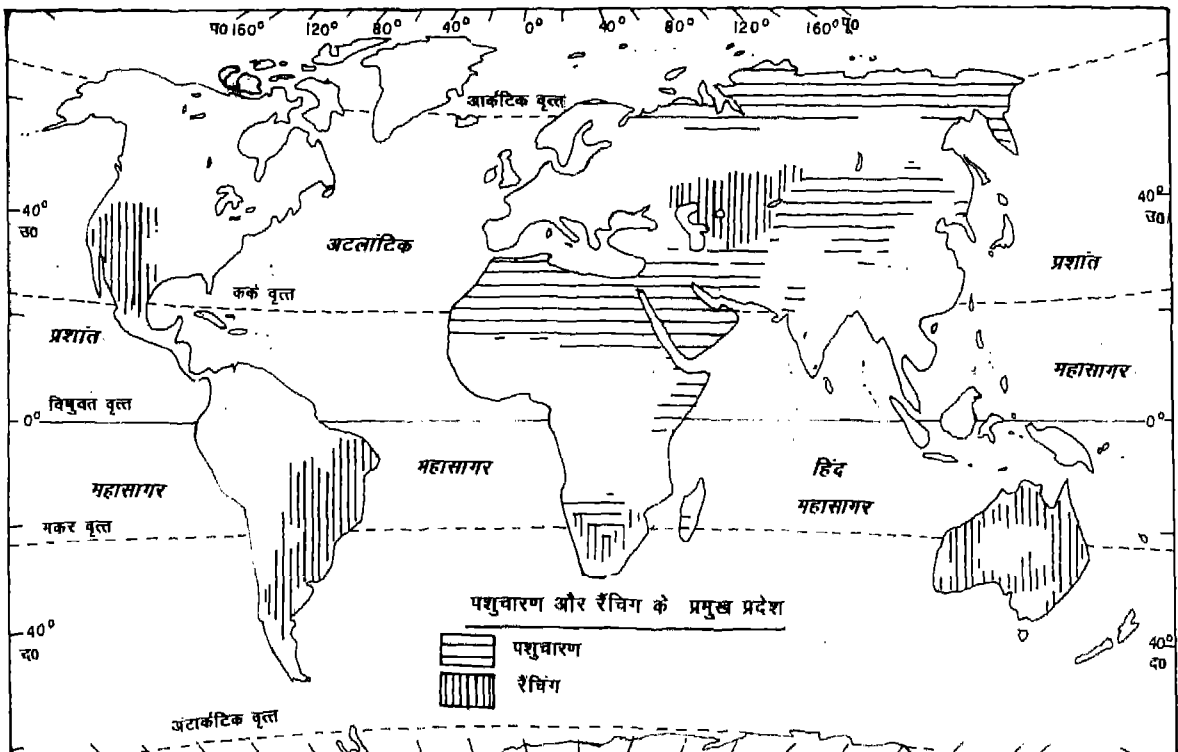
चित्र 4.3 : चलवासी पशुचारण तथा व्यापारिक पशुपालन के क्षेत्र

की ओर एवं सर्दी में पहाड़ों से मैदानों की ओर प्रवास करते हैं। इसी प्रकार, टुंड्रा प्रदेश में चलवासी पशुपालक ग्रीष्म ऋतु में दक्षिण से उत्तर एवं शीतकाल में उत्तर से दक्षिण की ओर प्रवास करते हैं। लोगों का अपने पशुओं के साथ ऋतुओं के अनुसार एक स्थान से दूसरे स्थान जाना *ऋतु-प्रवास* कहलाता है।

चलवासी पशुचारण के सात स्पष्ट क्षेत्र हैं : उच्च अक्षांशीय उप-आर्कटिक; यूरेशिया का स्टेपी क्षेत्र; दक्षिण-पश्चिम एशिया; सहारा और अरब के मरुस्थल; उप-सहारा के सवाना प्रदेश; एंडीज तथा एशियाई उच्च पठारी क्षेत्र। इन्हें तीन प्रमुख प्रदेशों में समूहित किया जा सकता है। प्रथम, सबसे बड़ा प्रदेश लगभग 13,000 वर्ग कि.मी. का क्षेत्र है जो अफ्रीका में साहेल एवं सहारा से मंगोलिया तथा मध्य चीन तक फैला हुआ है। द्वितीय प्रदेश यूरेशिया में टुंड्रा प्रदेश की दक्षिणी सीमा तक विस्तृत है। तृतीय प्रदेश में दक्षिण-पश्चिम अफ्रीका और मेडागास्कर का पश्चिमी भाग सम्मिलित है। इन क्षेत्रों की जलवायु अत्यधिक कठोर है अर्थात् ये क्षेत्र या तो अत्यधिक गर्म तथा शुष्क हैं अथवा अत्यधिक ठंडे हैं। इन प्रदेशों में एक व्यक्ति का सामाजिक स्तर उसके पशुओं की संख्या से निर्धारित होता है। अंतर्राष्ट्रीय सीमा के प्रतिबंधों तथा अन्य विकास कार्यों के कारण ये चलवासी अब परंपरागत प्रवास मार्गों एवं चरागाह भूमि को छोड़ने के लिए बाध्य हो रहे हैं। आज चलवासी पशुपालन द्वारा संसार में लगभग डेढ़ से दो करोड़ लोगों का ही भरण-पोषण हो रहा है।

पशुचारण कुछ प्रकार के पारिस्थितिक तंत्र के अनुरूप पारिस्थितिकीय एवं सांस्कृतिक अनुकूलन का एक विशिष्ट स्वरूप है। इसमें मनुष्य और पशु परस्पर आश्रित एक समुदाय के रूप में रहते हैं जिसमें स्वतंत्रता और आत्म निर्णय की जबर्दस्त भावना परिलक्षित होती है।

व्यापारिक पशुपालन : आधुनिक समय में पशुओं का वैज्ञानिक ढंग से पालन किया जाता है। प्राकृतिक चारागाहों पर निर्भर होने के स्थान पर अब उनके लिए विस्तृत क्षेत्रों पर चारे की फसलें तथा घास उगाई जाती है। यहाँ विशेष नस्ल के पशुओं का पालन अधिक से अधिक दूध या मांस उत्पादन के लिए हो रहा है। पशुओं के नस्ल-सुधार, रोगों की रोकथाम तथा बीमार पशुओं के इलाज पर विशेष ध्यान दिया जाता है। चारा-फसलों की खेती, दूध तथा मांस का संसाधन तथा पशु-उत्पादों की डिब्बा बंदी का कार्य मशीनों द्वारा एवं वैज्ञानिक पद्धति से किया जाता है।

व्यापारिक आधार पर किया जाने वाला बड़े पैमाने का पशुपालन (रेंचिंग) विकसित देशों की विशिष्टता है।

खनन

शैलों तथा खनिजों का खनन तथा उत्खनन एक प्राचीन आर्थिक कार्य है, यद्यपि इसके प्रकृति तथा स्वरूप में अनेक परिवर्तन हुए हैं। प्रारंभिक मानव द्वारा खनिजों का प्रयोग संभवतः किसी पत्थर को लेकर इसे बीजों को तोड़ने अथवा पशुओं का शिकार के लिए एक औजार के रूप में प्रयोग करने तक ही सीमित था। धीरे-धीरे मनुष्यों ने खनिजों का प्रयोग औजारों के रूप में करने के बजाय उनसे औजार-निर्माण की ओर कदम बढ़ाया। खनिज संसाधनों के प्रगतिशील तथा बढ़ते विशिष्ट प्रयोग के साथ मानव सभ्यता की विभिन्न अवस्थाएँ जुड़ी हैं। नुकीले पत्थर से भाला बनाने से लेकर मिट्टी से बर्तन, तांबे से कटार, कांसे से बर्तन और लोहे से जंजीर आदि बनाने की प्रक्रिया में मनुष्य नए खनिजों की खोज तथा प्रयोग करते हुए आगे बढ़ा है। खनिज प्रयोगों के आधार पर मानव सभ्यता को सामान्यतः आठ युगों में बाँटा जा सकता है (सारणी 4.1)।

पत्थर के औजारों का प्रयोग

खनन संभवतः लगभग 100,000 वर्ष ईसा पूर्व प्रारंभ हुआ। सरल शब्दों में, इसका अर्थ पृथ्वी की सतह पर से चट्टानी पदार्थों को, अधिक लाभकारी बनाने के उद्देश्य से संसाधित करने के लिए हटाया जाना है। यह कार्य बालू हटाने जैसे सरल कार्य से लेकर सुरंगों की खुदाई (ड्रिलिंग), चट्टानों को बारूद से तोड़ना तथा जमीन से हजारों मीटर नीचे की

सारणी 4.1 खनिज एवं मानव सभ्यता

युग	*प्रारंभ होने की अनुमानित तिथि*
पूर्व पाषाण काल (प्राचीन पाषाण)	500,000 वर्ष ईसा पूर्व
नव पाषाण	8,000 वर्ष ईसा पूर्व
ताम्र	5,000 वर्ष ईसा पूर्व
कांस्य	3,000 वर्ष ईसा पूर्व
लौह	14,00 वर्ष ईसा पूर्व
पेट्रोल	1600 ई.
कोयला	1800 ई.
आणविक	1951 ई.

गहराई से अयस्क को निकालने जैसा कठिन कार्य हो सकता है।

विगत कई वर्षों से खनन की प्रकृति में अनेक प्रकार के परिवर्तन हुए हैं। सामंत काल के प्रारंभिक दिनों में, खनन मुख्यतया कैदियों तथा दासों का कार्य था। प्राचीन समय में यूनानी तथा रोमन खदानों का संचालन बंधक बनायी गई सेनाओं अथवा अपने अधीन स्थानीय मूल निवासियों द्वारा होता था। मध्य युग में खनन एक अच्छा पेशा माना जाता था। इंग्लैंड तथा जर्मनी में खनिक संघ अति शक्तिशाली संगठनों में से थे, क्योंकि उनका नियंत्रण हथियारों तथा सिक्कों के लिए आवश्यक धातुओं के उत्पादन पर था। आधुनिक समय में खनन कोई महत्त्वपूर्ण रोजगार देने वाला कार्य क्षेत्र नहीं रह गया है। यंत्रीकरण से दक्षता और उत्पादकता दोनों ही में वृद्धि हो गई है और इसीलिए इन क्रियाकलापों में अब पुराने समय की तुलना में कम कामगारों की आवश्यकता पड़ती है।

विश्वस्तर पर, समय के साथ-साथ खनिजों के प्रयोग में वृद्धि हुई है। औद्योगिक क्रांति के बाद से इनसे संबद्ध प्रौद्योगिकी के विकास और बढ़ती जनसंख्या के फलस्वरूप खनिजों के उपयोग में अति उच्च दर से वृद्धि हुई है। विगत शताब्दी में खनिज पदार्थों के उपयोग में 13 गुने से अधिक की वृद्धि हुई है।

खनिजों के प्रकार तथा महत्त्व

जैसा हमने पढ़ा है कि खनन से तात्पर्य खनिज पदार्थों के उत्खनन से है। खनिज पदार्थ क्या हैं? ये क्यों महत्त्वपूर्ण हैं? वे कहाँ पाए जाते हैं? खनिज एक या एक से अधिक तत्त्वों से मिलकर बनते हैं तथा इनका एक विशिष्ट रासायनिक संघटन होता है। खनिज के विभिन्न उपयोगों के कारण उन्हें पृथ्वी के सबसे मूल्यवान संसाधनों में से एक माना जाता है। ये समाप्त होने वाले या अनवीकरण संसाधन हैं। इसके अलावा पृथ्वी पर इनका वितरण असमान है। ये खनिज सामान्यत: खनिज अयस्कों के रूप में मिलते हैं, जिनमें कई अशुद्धियाँ पाई जाती हैं। अत: धातु को अयस्कों से कई विशिष्ट प्रक्रियाओं द्वारा अलग किया जाता है।

खनिज विभिन्न प्रकार के निक्षेपों से प्राप्त होते हैं, उदाहरण के लिए, आग्नेय अंतर्वेधन अवसादी अयस्क निक्षेप, जलोढ़ निक्षेप और सामुद्रिक निक्षेप। बहुत से महत्त्वपूर्ण खनिज अयस्क आग्नेय-अंतर्वेधनों में विभिन्न गहराइयों पर मिलते हैं क्योंकि वे अलग-अलग तापमानों पर जमते हैं। इसलिए कुछ अयस्क एकदूसरे के साथ पाए जाते हैं, जैसे, चाँदी के साथ सीसा और जस्ता क्योंकि ये तीनों एक ही तापमान पर ठोस होते हैं। दूसरे खनिज विभिन्न परतों में प्राप्त हो सकते हैं जैसे टिन, तांबे की तुलना में अधिक गहराई पर पाया जाता है।

खनिजों को दो प्रमुख वर्गों में बाँटा जाता है : धात्विक और अधात्विक। *धात्विक* खनिज़ वे हैं जिनसे हमें धातुएँ प्राप्त होती हैं जैसे लोहा, ताँबा, चाँदी, सोना आदि। ये समकालीन समाज के लिए अति आवश्यक हैं। अन्य सभी खनिज जैसे नमक, गंधक, कोयला एवं पेट्रोलियम अधात्विक खनिजों में सम्मिलित हैं। अधिकांश खनिज अजैव संसाधन होते हैं। कोयला और पेट्रोलियम या खनिज तेल की उत्पत्ति पौधों एवं पशुओं के जीवाश्म (नीचे दबे वनस्पतियों एवं जानवरों के अवशेष) से होती है। अत: ये जैव संसाधन हैं। चूंकि इनका प्रयोग ईंधन के रूप में होता है, अत: इन्हें *जीवाश्म ईंधन* या *खनिज ईंधन* भी कहा जाता है।

खनिजों का वितरण असमान है। वाणिज्यिक महत्त्व के खनिजों के निक्षेप कुछ चुने हुए स्थानों पर ही हैं। तथापि, इनके अत्यधिक उपयोग के कारण संसार के अनेक मूल्यवान खनिज निक्षेप समाप्त हो गए हैं अथवा समाप्ति पर हैं। अल्प संकेंद्रण वाले खनिजों का समुचित उत्खनन अत्यधिक उत्पादन लागत के कारण नहीं हुआ है। आर्थिक महत्त्व के प्रमुख खनिज लोहा, मैंगनीज, सीसा, एल्युमिनियम, तांबा, निकिल, टिन तथा जिंक हैं।

कुछ खनिजों का वितरण एवं उत्पादन

अब हम कुछ महत्त्वपूर्ण खनिज संसाधनों के वितरण तथा उत्पादन के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे (सारणी 4.2)। लोहा, ताँबा और बाक्साइट धात्विक खनिज हैं जबकि कोयला तथा खनिज तेल जीवाश्म ईंधन हैं।

लोहा

लोहा एक अति महत्त्वपूर्ण धातु है। संसार के सभी भागों में लोहे का सर्वाधिक उपयोग इसके कुछ विशिष्ट गुणों के कारण होता है। ये गुण हैं- इसकी कठोरता, मजबूती, टिकाऊपन, आघातवर्धनीयता (पीटकर पत्तर बनाया जा सकता है) और सबसे बढ़कर सर्वोत्तम गुण यह है कि इसे विभिन्न रूपों में ढाला जा सकता है।

सारणी 4.2 खनिज : विश्व भंडार, उपयोग और प्रमुख उत्पादक

खनिज	*संसाधन उपयोग*	*विश्व भंडार मीट्रिक टनों में*	*प्रमुख उत्पादक*
बॉक्साइट	एल्युमिनियम का अयस्क	21,59,000	आस्ट्रेलिया, गिनी, जमाइका, ब्राजील
क्रोमियम	विद्युत लेपन, मिश्र धातु	418,900	द. अफ्रीका, सी.आई.एस.** भारत, टर्की, जिम्बाब्वे
ताँबा	मिश्र धातु, बिजली के तार	3,21,00	चिली, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, सी.आई.एस.
सोना	आभूषण, कंप्यूटर, संचार	42	द. अफ्रीका, स.रा.अ., सी.आई. एस. आस्ट्रेलिया, कनाडा
लौह अयस्क	लोहा और इस्पात उत्पादन	64,648,00	सी.आई.एस., ब्राजील, आस्ट्रेलिया, चीन, कनाडा, वेनेजुएला/मौरीटानिया
सीसा	बैटरी जुड़ाई, पाइप	70,440	सी.आई.एस. सं.रा.अ., मैक्सिको, कनाडा, पेरू
मैंगनीज	लोहा और इस्पात	812,800	सी.आई.एस., द. अफ्रीका, गेबन, आस्ट्रेलिया, ब्राजील, फ्रांस
निकिल	स्टेनलेस के स्टील	48,600	सी.आई.एस., कनाडा, न्यू डोलीडोनिया, नार्वे, डोमिनिकन रिपब्लिक,
चाँदी	आभूषण, फोटोग्राफी, दंत चिकित्सा, मुद्रा	780	मैक्सिको, सं.रा.अमेरिका,पेरू, सी. आई.एस., कनाडा
टिन	धातुओं पर लेपन, टीन के डिब्बे, जुड़ाई, मिश्रधातु	5,930	चीन, ब्राजील, इंडोनेशिया, मलेशिया
टाइटेनियम	मिश्र धातु, पेंट में प्रयुक्त कागज, प्लास्टिक सफेद वर्णक	288,600	आस्ट्रेलिया, नार्वे, सी.आई.एस.
जस्ता	लोहा-इस्पात, मिश्र धातु, रबर की वस्तुएँ, दवाइयाँ	143,910	कनाडा, आस्ट्रेलिया, सी.आई.एस., चीन, पेरू, मैक्सिको, स्पेन

* एक मीट्रिक लगभग 1.102 ब्रिटिश टन के बराबर होता है।
* सी.आई.एस.- स्वतंत्र देशों का राष्ट्रकुल (पूर्व सोवियत संघ)।

लोहा, लौह-अयस्क के रूप में पाया जाता है। लौह-अयस्क कई प्रकार के होते हैं: हैमेटाइट, मैग्नेटाइट, लिमोनाइट तथा सिडेराइट। परंतु इन सभी में धातु की मात्रा में पर्याप्त विभिन्नता पाई जाती है। किसी स्थान पर यदि धातु की मात्रा लौह-अयस्क में 30 प्रतिशत से अधिक होती है तो वहाँ खनन करना सस्ता पड़ता है।

अन्य कई धातुओं की भाँति लौह-अयस्क के निक्षेप भी मुख्यतया आग्नेय अंतर्वेधनों में ही पाए जाते हैं। अच्छे किस्म के लौह-अयस्क रूस, यूक्रेन, चीन, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, स्वीडन, फ्रांस, जर्मनी, स्पेन, यूनाइटेड किंगडम, लाइबेरिया, दक्षिण अफ्रीका, ब्राजील, भारत एवं आस्ट्रेलिया में पाए जाते हैं। रूस में, अनुमानतः संसार का सबसे बड़ा लौह-अयस्क का भंडार है। वर्ष 1999 में चीन संसार का सबसे बड़ा लौह-अयस्क उत्पादक देश था। इसके बाद ब्राजील, आस्ट्रेलिया, भारत तथा रूस का स्थान था। चित्र 4.4 देखकर लौह-अयस्क के उत्पादन की प्रवृत्ति बताइए।

ताँबा

एक धातु के रूप में ताँबे का प्रयोग प्राचीन समय से ही होता रहा है। यह आघातवर्धनीय है और संक्षारण के लिए प्रतिरोधी

है। अपनी विद्युत चालकता के कारण विद्युत उद्योग में इसका बड़ा उपयोग है। तथापि, हाल के वर्षों में ग्लास-फाइबर के बढ़ते प्रयोग के कारण ताँबे की माँग घटी है।

ताँबे का प्रयोग विभिन्न प्रकार के मिश्र धातु बनाने में किया जाता है, जैसे ताँबा तथा टिन के मिश्रण से कांसा एवं ताँबा तथा जस्ते के मिश्रण से पीतल बनता है।

चिली, पेरू, मैक्सिको, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, रूस, पोलैंड, कांगो लोकतंत्रीय गणराज्य, जांबिया, आस्ट्रेलिया, इंडोनेशिया तथा भारत ताँबे के मुख्य उत्पादक देश हैं। विश्व में चिली ताँबे का सबसे बड़ा उत्पादक देश है। ताँबा उत्पादन में भारत का योगदान नगण्य है। चित्र 4.5 और 4.6 देखकर ताँबे और बॉक्साइट के उत्पादनों की तुलना कीजिए।
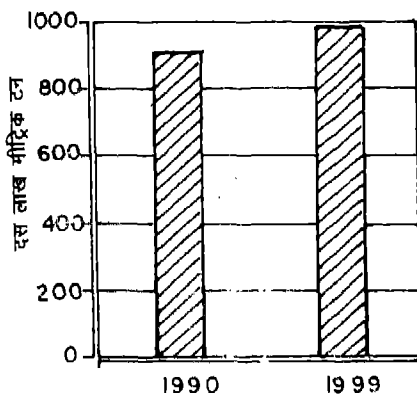
चित्र 4.4 विश्व : लौह-अयस्क उत्पादन
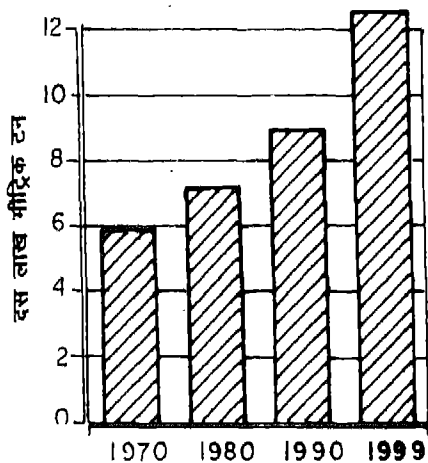
चित्र 4.5 विश्व : ताँबा उत्पादन
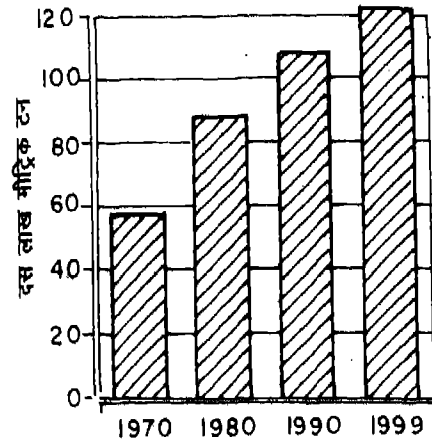
चित्र 4.6 विश्व : बॉक्साइट उत्पादन

बॉक्साइट

बॉक्साइट अयस्क से एल्युमिनियम प्राप्त किया जाता है। लोहे की भाँति एल्युमिनियम के भी अनेक प्रयोग हैं। इसे मशीनी उपकरण, बिजली के तार व घरेलू बर्तन, वायुयान, भवन निर्माण तथा पैकिंग सामग्री बनाने में उपयोग करते हैं। बाक्साइट से एल्युमिनियम बनाने में बहुत अधिक मात्रा में विद्युत ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। इसलिए इसे ऊर्जा गहन उद्योग कहते हैं। संसार के बहुत से बड़े बाँधों का निर्माण, एल्युमिनियम गलाने के लिए सस्ती जलविद्युत की आपूर्ति हेतु किया गया है। संयुक्त राज्य अमेरिका में कोलोरेडो नदी पर बना हूवर बाँध तथा घाना में अकोसोंबो बाँध इसके उदाहरण हैं। बॉक्साइट के बड़े-बड़े निक्षेप अधिकतर उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों जैसे आस्ट्रेलिया, सूरीनाम, जमाइका, वेनेजुएला, गायना, मलेशिया, इंडोनेशिया तथा भारत में पाए जाते हैं। यह चीन, यूगोस्लाविया, संयुक्त राज्य अमेरिका, ग्रीस तथा हंगरी में भी पाया जाता है। परंतु एल्युमिनियम उत्पादन का कार्य मुख्यत: विकसित देशों में ही किया जाता है क्योंकि यहाँ पर सस्ती तथा समुचित मात्रा में बिजली उपलब्ध है। यदि इन देशों में बॉक्साइट उपलब्ध नहीं है तब उसे बाहर के देशों से आयात किया जाता है।

कोयला

कोयला, ऊर्जा का एक अति महत्त्वपूर्ण स्रोत है। कोयला औद्योगिक क्रांति का मुख्य आधार रहा है, यद्यपि
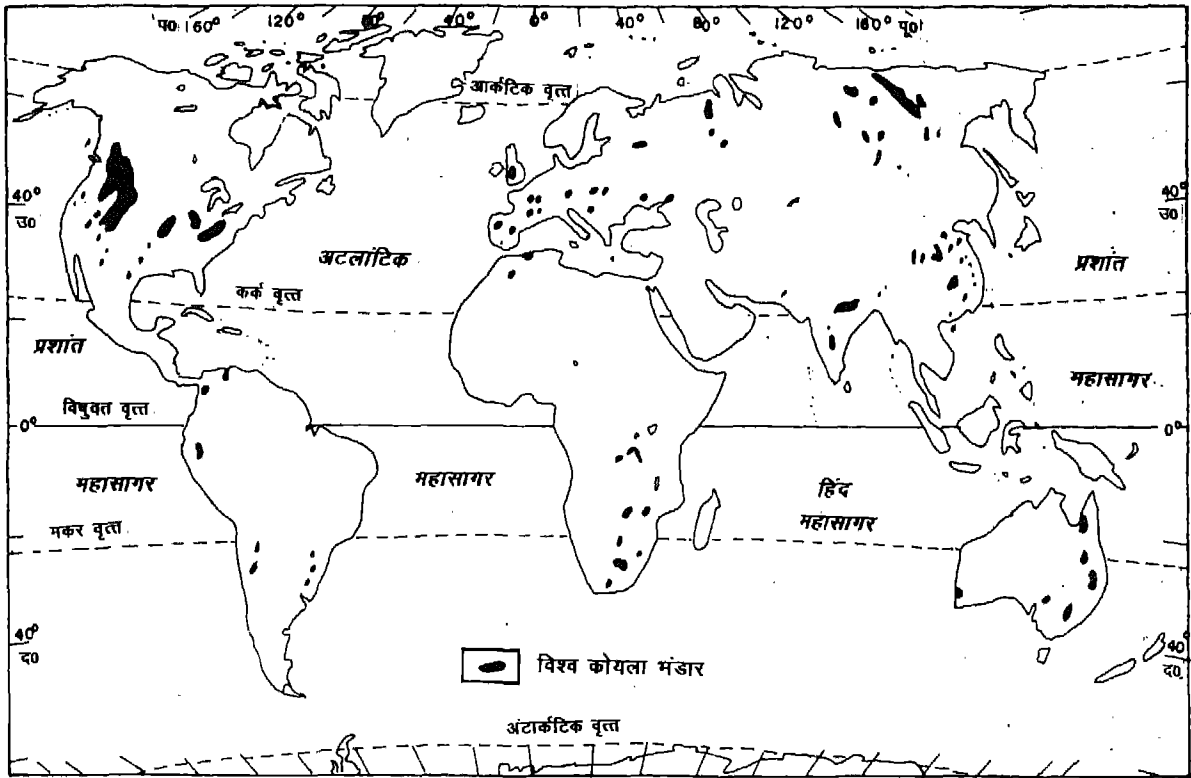
चित्र 4.7 विश्व : प्रमुख कोयला भंडार

आजकल खनिज तेल एवं प्राकृतिक गैस के आविर्भाव से इसका महत्त्व कम हो गया है फिर भी यह संसार का सबसे अधिक मात्रा में प्रयुक्त ऊर्जा-स्रोत है।

कोयला अवसादी चट्टानों की परतों में पाया जाता है। यह अधिकतर पृथ्वी के इतिहास के कार्बन काल में बना है। कोयले की गुणवत्ता कार्बन के अंश के आधार पर आंकी जाती है। समय बीतने के साथ कोयले की परतों में कार्बन का अंश बढ़ता जाता है, जबकि नमी की मात्रा कम होती जाती है। इसी कारण नए बने कोयले सर्वाधिक निम्न कोटि के हैं।

कार्बन की मात्रा के आधार पर कोयला तीन किस्मों में बाँटा जाता है। *एंथ्रासाइट,* (90 प्रतिशत में अधिक कार्बन) सबसे अच्छा कोयला है। यह बहुत कठोर, चमकदार तथा गंदगी रहित होता है एवं जलते समय इससे धुआँ कम निकलता है। जल जाने के बाद राख की मात्रा कम होती है। एंथ्रासाइट कोयले के भंडार बहुत सीमित हैं। बिटुमिनस किस्म के कोयले में कार्बन का अंश 70 से 90 प्रतिशत तक होता है। यह गहरे रंग का चमकीला काला होता है। जलते समय यह धुआँ अधिक देता है तथा जलने के बाद अधिक मात्रा में राख बचती है। इस किस्म के कोयले को बिटुमिनस इसलिए कहा जाता है क्योंकि गर्म करने पर इससे बिटुमेन या तारकोल निकलता है। संसार में इस किस्म के कोयले के भंडार अधिक हैं। *लिग्नाइट* या भूरे कोयले में कार्बन का अंश 45 से 70 प्रतिशत तक होता हैं। एंथ्रासाइट एवं बिटुमिनस की तुलना में इस कोयले में आर्द्रता का अंश बहुत अधिक होने के कारण जलते समय इससे धुएँवाली लंबी लपटें निकलती हैं। अतएव, यह एक सबसे निम्न कोटि का कोयला है।

संसार में सबसे अधिक मात्रा में कोयला यूनाइटेड किंगडम, फ्रांस, जर्मनी, बेल्जियम, पोलैंड, यूक्रेन, कजाखस्तान, रूस, चीन, दक्षिण अफ्रीका, भारत और आस्ट्रेलिया में पाया जाता है (चित्र 4.7)।

चीन तथा संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा संयुक्त रूप से संसार का 60 प्रतिशत कोयले का उत्पादन किया जाता है। कोयला उत्पादन में लगातार उतार-चढ़ाव आता रहा है (चित्र 4.8)।
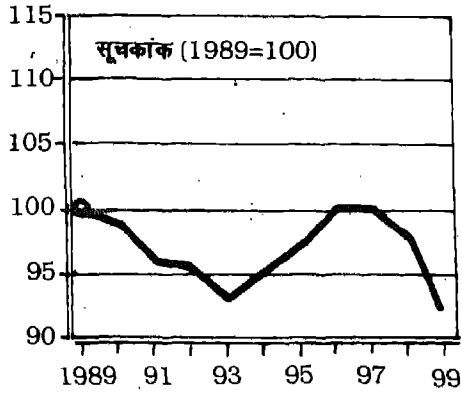
चित्र 4.8 विश्व : कोयला उत्पादन

खनिज तेल

खनिज तेल का आर्थिक महत्त्व इसकी कार्य क्षमता तथा बहुमुखी उपयोग के कारण अधिक है। प्रति इकाई भार में कोयले की अपेक्षा तेल की ऊर्जा प्रदान करने की क्षमता अधिक होती है।

तेल अधिकांशत: अवसादी चट्टानों के गुंबदाकार संरचना क्षेत्र में पाया जाता है। सामान्यत: खनिज तेल तथा प्राकृतिक गैस एक ही क्षेत्र में साथ-साथ पाए जाते हैं (चित्र 4.9 और 4.10)। यद्यपि संसार में अवसादी चट्टानों का वितरण क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत है लेकिन उनमें से सभी क्षेत्रों में तेल नहीं पाया जाता। संसार के कुछ क्षेत्र ही खनिज-तेल संसाधन में काफी समृद्ध हैं।

ईराक, सऊदी अरब, कुवैत, ईरान, संयुक्त अरब अमीरात, कतार तथा बहरीन, पश्चिम एशिया के मुख्य तेल उत्पादक देश हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका, वेनेजुएला, मेक्सिको, रूस, जार्जिया, आर्मेनिया, अज़रबैजान, उत्तर सागर (यू. के., नार्वे, डेनमार्क, जर्मनी और नीदरलैंड के साझे में), चीन और भारत में तेल के विस्तृत निक्षेप पाए जाते हैं। सऊदी अरब खनिज तेल का सबसे बड़ा उत्पादक देश है। इसके बाद संयुक्त राज्य अमेरिका तथा रूस का स्थान है। विश्व में खनिज तेल के उत्पादन में क्रमिक वृद्धि हुई है (चित्र 4.11)।

खनन के प्रकार

खनिज अयस्कों (धातुओं) की स्थिति के आधार पर खनन दो प्रकार का होता है। *सतही खनन* और *भूमिगत खनन*। *सतही खनन* को खुले गर्तवाली खान से उत्खनन करना या खदान से खनिज खोदना भी कहा जाता है। इस प्रकार का खनन आसान है। इस समय सभी खानों के लगभग 90 प्रतिशत में और अधात्विक खनिजों के 99 प्रतिशत खानों में सतही खनन होता है। अयस्कों के जमीन में पाए जाने के ढंग तथा उनकी प्रकृति के आधार पर खनन विधि अपनाई जाती है। सतह के निकट अवसादी परतों में प्राप्त अयस्क वाली खानों को खुले गर्त वाली खान कहते हैं।
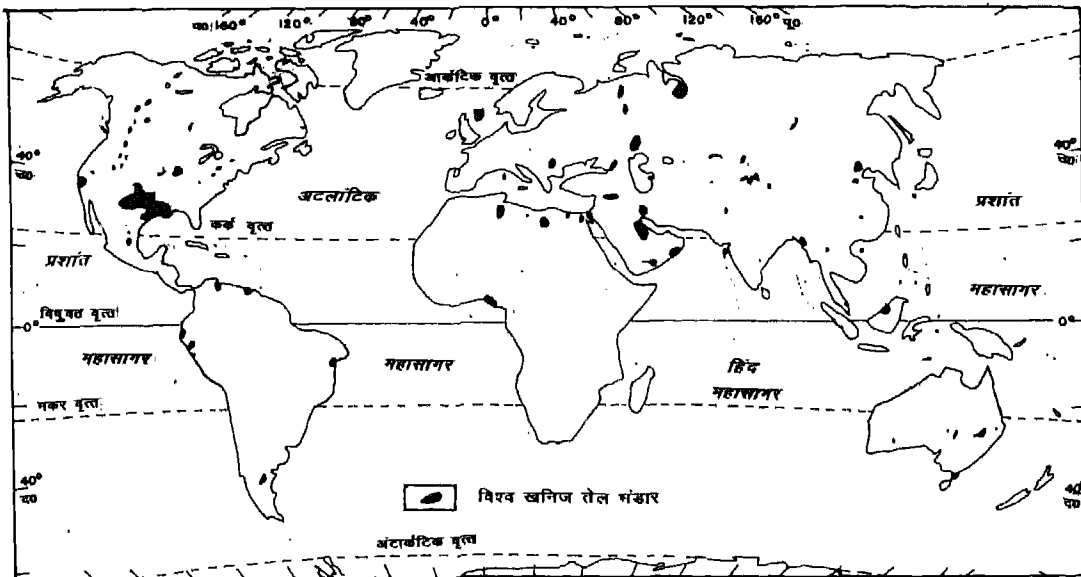
चित्र 4.9 विश्व : प्रमुख खनिज तेल भंडार
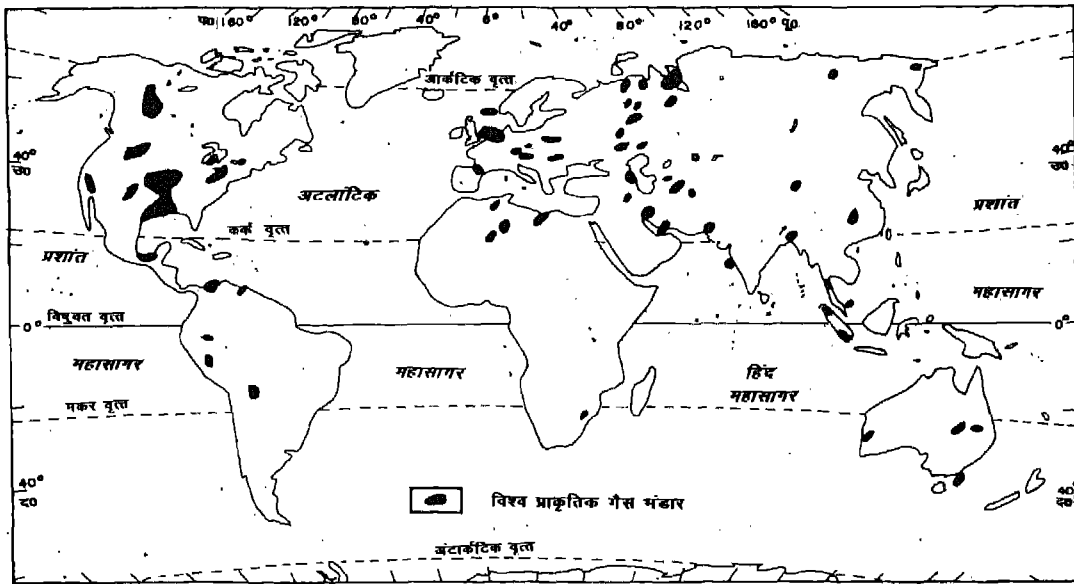
चित्र 4.10 विश्व : प्रमुख प्राकृतिक गैस भंडार

भूमिगत खनन, खुले गर्त वाले खनन की तुलना में अधिक जोखिमपूर्ण होता है। जहरीली गैसों, आग, बाढ़ तथा सुरंग या गुफाओं की स्थिति के कारण जानलेवा दुर्घटनाएँ होती हैं। इस प्रकार की खनन प्रक्रिया में ऊर्ध्वाधर या तिरछे खनिकूप होते हैं जो भूमिगत क्षैतिज सुरंगों या गलियारों से जुड़े होते हैं। खोदी-गई चट्टानें या खनिज इन्हीं मार्गों द्वारा ऊपर सतह पर लाए जाते हैं। इस प्रकार के खनन में खनिकों के सुरक्षित रूप से आने जाने और सामान ढोने के लिए विशेष प्रकार के लिफ़्ट, बरमा (छेद करने वाला यंत्र), सामान ढोने वाले वाहन, हवा के बेरोकटोक आने-जाने के लिए पंखों, प्रकाश आदि का विशेष प्रबंध किया जाता है।

विश्व खनिज तेल उत्पादन

चित्र 4.11 विश्व : खनिज तेल उत्पादन

खनन-कार्य को प्रभावित करने वाले कारक

खनन क्रियाकलाप भौतिक एवं आर्थिक दोनों ही कारकों द्वारा प्रभावित होता है। पृथ्वी के नीचे खनिज की उपस्थिति मात्र ही खनन कार्य के लिए समुचित कारण नहीं होता। खनिज अयस्क के निक्षेप की भौतिक विशेषताएँ जैसे आकार, गहराई तथा गुणवत्ता आदि वे महत्वपूर्ण कारक हैं जिनसे खनन क्रिया का लागत मूल्य निश्चित होता है। खनिजों के प्रयोग हेतु आवश्यक ज्ञान एवं उपलब्ध प्रौद्योगिकी, धातु की समुचित माँग, श्रमिकों की भरपूर आपूर्ति एवं आवश्यक अवस्थापना तत्वों तथा खदानों को विकसित करने के लिए आवश्यक पूँजी आदि प्रमुख आर्थिक कारक हैं।

अनेक विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था में खनिजों का उत्पादन अति महत्वपूर्ण है। अफ्रीका के बहुत से देशों तथा दक्षिण अमेरिका और एशिया के कुछ देशों में उनकी निर्यात आय का 50 प्रतिशत से अधिक केवल खनिजों के निर्यात से ही प्राप्त होता है।

पूरे संसार में लाखों खनिकों को खनन कार्य में रोजगार प्राप्त होता है। लैटिन अमेरिका में लगभग 10 लाख खनिक
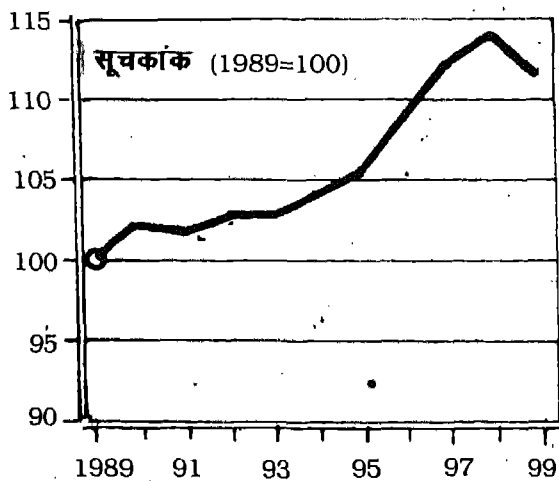
स्वर्ण खनन में कार्यरत हैं। खनन 'दौड़' में चाहे श्रमिक हों अथवा निगम, यह प्राय: सामाजिक मतभेदों और झड़पों का कारण बनती है। आज संसार में अधिकांश खनन कार्यों पर अंतर्राष्ट्रीय निगमों का प्रभाव है। वे खनिज क्षेत्रों के सघन शोषण द्वारा वैश्विक बाजार की सेवा करते हैं तथापि उनका यह कार्य पर्यावरण तथा स्थानीय लोगों के मूल्य पर ही होता है। घाना के ओकोसोंबो बाँध का निर्माण 1960 में एक अमेरिकी कंपनी को बॉक्साइट गलाने के लिए जल विद्युत प्रदान करने हेतु किया गया था। इसने देश के 5 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र को जलमग्न कर दिया। संसार की सबसे बड़ी मानवनिर्मित झील बनाने की इस प्रक्रिया से 80,000 लोग विस्थापित हुए।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए :
   (i) चरवाही जीवन क्या है ?
   (ii) कृषि क्रांति ने लोगों के जीवन को कैसे परिवर्तित किया ?
   (iii) कृषि क्रांति की नींव डालने वाले चार प्रमुख घटक कौन से थे ?
   (iv) मानव क्रियाकलापों के चार प्रमुख वर्गों के नाम बताइए।
   (v) खनन क्या है ?
   (vi) बॉक्साइट के प्रमुख उपयोग क्या हैं ?
   (vii) पृथ्वी पर संसार की सबसे बड़ी मानव निर्मित झील कौन सी है और इसे क्यों बनाया गया ?
   (viii) कोयले की गुणवत्ता के निर्धारण का आधार क्या है ?
   (ix) लोहे का उपयोग सर्वाधिक क्यों किया जाता है ?
2. अंतर स्पष्ट कीजिए :
   (i) औद्योगिक क्रांति तथा सूचना क्रांति
   (ii) प्राथमिक क्रियाकलाप और द्वितीयक क्रियाकलाप
   (iii) चलवासी तथा व्यापारिक पशुपालन
   (iv) धात्विक खनिज एवं अधात्विक खनिज
3. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :
   (i) आखेट एवं संग्रहण
   (ii) खनन कार्य को प्रभावित करने वाले कारक
4. औद्योगिक क्रांति के धनात्मक तथा ऋणात्मक प्रभावों की विवेचन कीजिए।
5. चलवासी पशुचारण की प्रमुख विशेषताएँ तथा इससे संबंधित क्षेत्र का वर्णन कीजिए।
6. खनन आज भी एक प्रमुख मानव क्रियाकलाप के रूप में क्यों जारी है तथा इसमें विगत वर्षों में किस प्रकार के परिवर्तन आए हैं, समझाइए।

भौगोलिक कुशलताएँ

7. संसार के रेखामानचित्र में निम्नलिखित दर्शाइए :
   (i) आर्कटिक इनुइट, आस्ट्रेलियाई पिंटुपी, दक्षिणी भारत के पालियान एवं मलेशिया के सेमांग के निवास–क्षेत्र।
   (ii) लौह–अयस्क उत्पादन के दो क्षेत्र– एक यूरोप में तथा दूसरा एशिया में।
   (iii) चीन, यूक्रेन और संयुक्त राज्य अमेरिका, प्रत्येक से एक कोयला क्षेत्र।

5 अध्याय कृषि

सभी प्राथमिक क्रियाओं में कृषि सबसे महत्त्वपूर्ण है। संसार की लगभग आधी जनसंख्या आज कृषि पर आश्रित है। विकासशील देशों में, लगभग 65 प्रतिशत से अधिक लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि है।

लगभग 12 हजार वर्ष पहले, प्रथम कृषकों ने संसार के विभिन्न जीवोमों में उस समय पाए जाने वाले वनस्पतियों तथा पशुओं में से कुछ फसलों तथा पशुओं को पालतू बनाने के लिए चुना और पौधे उगाना प्रारंभ किया। संसार के विभिन्न भागों में विभिन्न फसलों तथा पशुओं को पालतू बनाना (घरेलूकरण) प्रारंभ हुआ और इनमें से कुछ का घरेलूकरण एक से अधिक स्थानों पर एक साथ हुआ।

उस समय से आजतक अनेक विकासों के बावजूद मानव आज भी हजारों वर्ष पहले के निश्चित जलवायु प्रदेशों में, लोगों द्वारा किए गए चुनावों पर ही मूलत: आश्रित है। हजारों जंगली पौधों की प्रजातियों में से लगभग 20 फसलें ही आज संसार में प्रमुख खाद्य-स्रोत के रूप में उगाई जाती हैं। ऊपर के संक्षिप्त विवरण से स्पष्ट है कि फसलों के प्रारंभिक चुनाव, जलवायु तथा प्राकृतिक वनस्पति द्वारा प्रभावित थे। जीवोम का वितरण सौर्य-विकिरण, तापमान एवं वर्षा के वितरण को प्रतिबिंबित करता है। इसके परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार की वनस्पतियाँ विषुवतीय वनों से लेकर उपध्रुवीय तथा उच्च पर्वतों के टुंड्रा क्षेत्रों तक पाई जाती हैं। जलवायु का यह सामान्य ढाँचा अभी भी कृषि-प्रतिरूप को प्रमुख रूप से प्रभावित करता है, यद्यपि किसी निश्चित फसल के उत्पादन करने की सीमा में, अब मानवीय प्रभाव से परिवर्तन हो गया है।

कृषि के प्रारंभ के साथ चलवासी पशुचारण के स्थान पर अपेक्षाकृत स्थाई जीवन की शुरुआत हुई। कृषि के सबसे आदिम स्वरूप को *स्थानांतरी कृषि* कहते हैं, जो अभी भी संसार के कुछ भागों में प्रचलित है। यह मुख्यत: उष्ण कटिबंधीय वनों में अपनाई जाती है। इस प्रकार की कृषि में, वनों में स्थान बनाने के लिए वृक्षों को काटकर उन्हें जला दिया जाता है। साधारण औजारों की मदद से फसल उगाने के लिए खेत तैयार किए जाते हैं। कुछ वर्षों तक फसलों का उत्पादन करने के पश्चात् इनकी मृदा अनुपजाऊ हो जाती है, तब इन खेतों को परती छोड़ दिया जाता है तथा वन में नए स्थानों की सफाई की जाती है। ऐसी खेती को संसार के विभिन्न भागों में भिन्न-भिन्न नामों से जाना जाता है, जैसे उत्तर-पूर्वी भारत में *झूमिंग,* फिलिपींस में *चैंजिन,* ब्राजील में *रोका* तथा कांगो लोकतांत्रिक गणराज्य में *मसोले* कहते हैं। यद्यपि स्थानांतरी

यद्यपि पृथ्वी पर पौधों एवं पशुओं को पालतू बनाने की प्रक्रिया कई स्थानों पर संपन्न हुई, कुछ स्थान विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हैं:

- **दक्षिण-पश्चिम एशिया तथा पूर्वी भूमध्यसागरीय प्रदेश :** गेहूँ, जौ, मटर, अंजीर, जैतून, खजूर, लहसुन, बादाम ; गाय-बैल, भेंड़ और बकरियाँ।
- **दक्षिण-पूर्वी एशिया :** आम, वनस्पति संवर्धन अर्थात रतालू, साबूदाना और केला जैसे उगे हुए पौधों को काटना एवं उनका रोपण करना; सूअर, मुर्गी, बत्तख।
- **चीन :** चावल, ज्वार-बाजरा, सोयाबीन, चाय, प्याज, पालक तथा शहतूत ; सूअर, मुर्गियाँ तथा बत्तख।
- **भारत :** चावल, चना, बैंगन, मिर्च, नींबू, जूट और नील ; गाय-बैल, भैंसें, मुर्गियाँ।
- **अफ्रीका :** रतालू, तैल-ताड़, कहवा, सोरघम।
- **उत्तर व दक्षिण अमेरिका :** मक्का तथा सेम मध्य अमेरिका में, कसावा और कोको अमेजन बेसिन में तथा एंडीज में आलू ; लामा।

कृषि की प्रकृति प्रवासी होती है, इसने लोगों को एक स्थान पर अधिक समय तक स्थाई रूप से रहने के लिए प्रेरित किया।

तत्पश्चात् अनुकूल जलवायु एवं उपजाऊ मिट्टी वाले क्षेत्रों में स्थाई खेतों तथा गाँवों के साथ *स्थाई कृषि प्रणाली* का उदय हुआ। उपजाऊ नदी घाटियों जैसे दजला-फरात, नील, सिंधु, हुआंग ही तथा चांग जिआंग में लगभग 6 हजार वर्ष पूर्व स्थाई कृषि के आधार पर महान सभ्यताओं का निर्माण हुआ। धीरे-धीरे इस स्थाई कृषि प्रणाली का संसार के अधिकांश भागों में विस्तार हुआ।

अठारहवीं शताब्दी में यूरोप में जन्मी औद्योगिक क्रांति ने एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया। इसने यूरोप में कृषि उत्पादन को प्रोत्साहित किया तथा एशियाई, अफ्रीकी एवं लैटिन अमेरिकी उपनिवेशों में फसल प्रतिरूप को परिवर्तित कर दिया। इन उपनिवेशों में एक फसली कृषि का विशिष्टीकरण किया गया। इनमें से प्रमुख हैं- कपास, गन्ना, चावल, चाय, कहवा तथा रबर, जिनको यूरोपीय कारखानों में संसाधित किया जाता था। जब यूरोप में इन फसलों की माँग में तेजी आई तो इनमें से कुछ फसलों की बड़े पैमाने पर व्यापारिक कृषि प्रारंभ हुई, जिसे सामान्य शब्दों में *रोपण कृषि* कहते हैं। रोपण कृषि में एक फसल के उत्पादन के लिए बड़े-बड़े बागान बनाए गए। इन का वैज्ञानिक विधि से प्रबंधन किया गया और इन का मुख्य उद्देश्य निर्यात अथवा व्यापार द्वारा धन अर्जित करना था।

उपनिवेशवाद का एक प्रभाव पौधों तथा पशुओं की बहुत सी प्रजातियों का संसार भर में विसरण तथा विनिमय था। उदाहरण के लिए, आलू का मूल स्थान एंडीज था, परंतु यह उत्तरी यूरोप के ठंडे एवं नम पर्यावरण में फली-फूली तथा शीघ्र ही यह विश्व की फसल बन गई। इसी प्रकार, मक्का का मध्य अमेरिका से पूरे संसार में विस्तार हुआ तथा वह भी चावल तथा गेहूँ के बाद सबसे अधिक बोया जाने वाला तीसरा खाद्यान्न बन गया।

यूरोप में औद्योगिक क्रांति के विकास के फलस्वरूप अनेक विशिष्ट कृषि उपकरणों जैसे हल, ट्रैक्टर, बोने व गहाने की मशीन, फसलों को काटने की मशीन तथा दूध दुहने वाली मशीनों का निर्माण हुआ। इन्होंने कृषि उत्पादन के स्वरूप, पैमाने तथा वितरण को परिवर्तित कर दिया। उत्तर अमेरिका में यंत्रीकरण ने कृषकों को उन वस्तुओं के उत्पादन को बढ़ाने तथा विशिष्टीकरण के योग्य बनाया जिन्हें अधिकतम लाभ के साथ बेचा जा सके। इस प्रकार यहाँ *विशिष्ट व्यापारिक कृषि प्रणाली* प्रारंभ हुई, जिसके फलस्वरूप विभिन्न फसल प्रदेशों-गेहूँ पेटी, कपास पेटी, मक्का पेटी, डेयरी कृषि तथा ट्रक कृषि (फलों व सब्जियों) आदि का सीमांकन हुआ। संसार के दूसरे भागों में भी, ऐसी ही प्रौद्योगिकी क्रांति के फलस्वरूप शक्ति-चालित मशीनों का निर्माण हुआ। इसके अतिरिक्त, संकर बीजों के अपनाए जाने, रसायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशी दवाओं के प्रयोग होने से बहुत से क्षेत्रों में फसलों के प्रति एकड़ उत्पादन में अलग-अलग दर से आश्चर्यजनक वृद्धि हुई।

पौधों के विसरण तथा कृषि के औद्योगीकरण से कृषि उत्पादन में अत्यधिक सुधार हुआ। बड़ी संख्या में लोग दूसरी आर्थिक क्रियाएँ करने के लिए स्वतंत्र थे क्योंकि कम लोगों की मदद से वैज्ञानिक और तकनीकी नवाचारों का उपयोग करते हुए अधिक उत्पादन प्राप्त करना संभव था। इसलिए संसार के औद्योगिक देशों में जनसंख्या का क्रमिक स्थानांतरण प्राथमिक कार्यों से द्वितीयक और उससे तृतीयक कार्यों की ओर स्पष्ट रूप से देखा गया, परंतु विकासशील देशों में रोजगार संरचना प्राथमिक से सीधे तृतीयक क्षेत्र में बदल गई है।

फसलों का वितरण-विश्व प्रतिरूप

भौतिक पर्यावरण, जिसमें जलवायु, मृदा तथा उच्चावच सम्मिलित हैं, कुछ विस्तृत सीमाएँ निर्धारित करता है, जिनके भीतर किसी खास फसल को सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है अथवा कुछ प्रकार के पशुओं का लाभप्रद पालन हो सकता है। इसके अतिरिक्त सामाजिक-आर्थिक संस्थाएँ भी फसल उत्पादन में महत्त्वपूर्ण कारक होते हैं।

जलवायु

किसी निश्चित फसल के उत्पादन के क्षेत्र को सीमित करने में तापमान तथा वर्षा, जलवायु के दो महत्त्वपूर्ण कारक होते हैं।

तापमान : यह फसलों के वितरण को प्रभावित करने वाला एक महत्त्वपूर्ण नियंत्रक है क्योंकि उपयुक्त तापमान की दशाएँ बीजों के सफलतापूर्वक अंकुरण तथा पौधों की वृद्धि हेतु आवश्यक हैं। तापमान की आवश्यकता के आधार पर फसलों को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है : उष्णकटिबंध के उच्च तापमान की दशा में उगने वाली फसलें तथा उपोष्ण एवं शीतोष्ण क्षेत्रों के निम्न तापमान वाली दशाओं में उगने वाली फसलें।
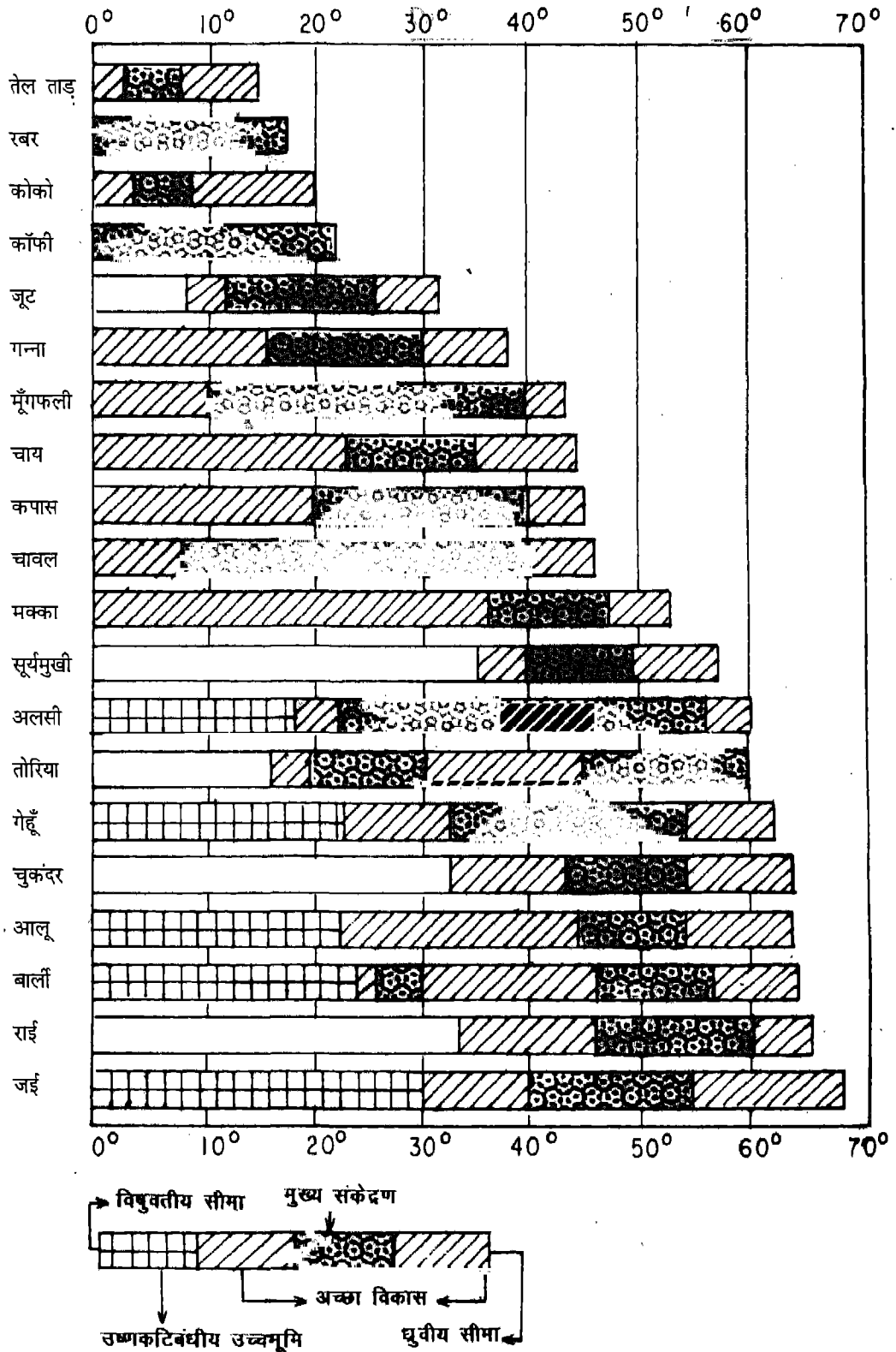
चित्र 5.1 प्रमुख फसलों का अक्षांशीय विस्तार

उष्णकटिबंधीय फसलें, जो उच्च तापमान (31^0 सेल्सियस से 37^0 सेल्सियस तक) की दशाओं में अनुकूलित हैं, तापमान के शून्य से नीचे गिरने तथा पाला पड़ने पर नष्ट हो सकती हैं। उनमें में कुछ शीत से इतनी अधिक प्रभावित होती हैं कि वे 10^0 से0 से कम तापमान पर नष्ट हो जाती हैं। तथापि कुछ शीतोष्ण फसलें जैसे सेब, गेहूँ तथा जई उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के अधिक उँचाई वाले भागों में पैदा की जा सकती हैं।

उपोष्ण और शीतोष्ण प्रदेशों में पैदा की जाने वाली फसलें निम्न तापमान में अनुकूलित हुई फसलें हैं। इन प्रदेशों में पौधों के बढ़ने के लिए वर्धन काल शीत ऋतु में अंतिम पाले और शरद ऋतु में पहले पाले के बीच का समय बहुत ही महत्त्वपूर्ण होता है। हम ज्यों-ज्यों ध्रुवों की ओर बढ़ते हैं, यह अवधि छोटी होती जाती है। अत: ध्रुवीय क्षेत्रों की ओर उत्पन्न की जाने वाली फसलों की संख्या भी कम होती जाती है। उत्तरी ध्रुव वृत्त के उत्तर में केवल राई तथा जई उग सकते हैं।

इसी प्रकार अनेक फसलों की विषुवत वृत्त की ओर भी सीमा होती है। उनमें से कुछ को शीघ्र बढ़ने के लिए शीतकाल की एक छोटी अवधि की आवश्यकता होती है तथा ये भारी वर्षा को सह नहीं पाती हैं। उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में पाई जाने वाली बीमारियों से भी ये रोगग्रस्त होती रहती हैं। ऐसी जलवायविक नियंत्रण के कारण सनई एवं जैतून जैसी कुछ फसलें अत्यंत सीमित क्षेत्रों में ही पैदा की जाती हैं। भिन्न तापमान की आवश्यकताओं के बावजूद अधिकांश फसलों को बीज अंकुरण की अवधि में 5^0 से 7^0 सेल्सियस तापमान की आवश्यकता पड़ती है।

वर्षा : इससे मिट्टी को नमी प्राप्त होती है जो फसलों की वृद्धि के लिए आवश्यक होती है। प्रत्येक पौधे की एक जड़-प्रणाली होती है, जो एक बड़े सतह क्षेत्र पर फैलती है तथा नीचे की मिट्टी से जल सोखती रहती है। फसलों के लिए जल की आवश्यकता में अंतर पाया जाता है। एक किलो गेहूँ को उत्पन्न करने के लिए लगभग 1500 कि.ग्रा. जल की आवश्यकता होती है, जबकि इतनी ही मात्रा में चावल के उत्पादन में 10,000 कि.ग्रा. पानी आवश्यक होता है।

समुचित जल की मात्रा के अभाव में पौधों का विकास संभव नहीं है। तथापि इसका तात्पर्य यह नहीं है कि जल आपूर्ति की मात्रा में वृद्धि के अनुपात में फसलों के उत्पादन में भी वृद्धि होगी। इसके विपरीत, यदि पौधों की आवश्यकता से अधिक जल की आपूर्ति होती है, तो फसल के उत्पादन में कमी होगी। प्रत्येक फसल के लिए जल की एक आदर्श मात्रा की आवश्यकता होती है तथा इसमें एक फसल से दूसरी फसल में महत्त्वपूर्ण अंतर पाया जाता है। उदाहरण के लिए, रबर तथा चाय हेतु 150 सेंटीमीटर वार्षिक वर्षा चाहिए। दूसरी ओर, 25 से 100 सेंमी वार्षिक वर्षा वाले प्रदेशों में, गेहूँ उत्पन्न किया जा सकता है। चूँकि पृथ्वी के 50 प्रतिशत से अधिक भूभाग, 25 से 100 सेंमी वार्षिक वर्षा प्राप्त करते हैं, इसलिए गेहूँ सबसे अधिक क्षेत्र पर पैदा की जाने वाली फसल है। लगभग 10 प्रतिशत भूभाग पर 178 सेंमी. से अधिक वार्षिक वर्षा होती है तथा 5 प्रतिशत भूभाग पर 254 सेंमी वर्षा होती है। अत: चाय तथा रबर का वितरण क्षेत्र अधिक सीमित है।

वर्षा की कमी को भूमिगत जल, नदी अथवा तालाबों में एकत्रित किए गए वर्षा जल से सिंचाई द्वारा पूरा किया जा सकता है। फसलों के लिए मिट्टी में उपलब्ध जल की मात्रा भी वाष्पीकरण की दर पर निर्भर करती है, जो तापमान के साथ बढ़ती है। अत: उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों की फसलों के लिए शीतोष्ण कटिबंध की तुलना में अधिक वर्षा की आवश्यकता पड़ती है।

मृदा

यह एक ऐसा आवश्यक पदार्थ है जिस पर सभी प्रकार की कृषि आधारित होती है। मृदा की विशेषताएँ मुख्य रूप से जलवायु द्वारा ही सुनिश्चित होती हैं। तापमान तथा वर्षा के अतिरिक्त पौधों को पोषक तत्त्वों की भी आवश्यकता पड़ती है, जो मिट्टी से ही प्राप्त होता है। हम ने पिछली कक्षाओं में मृदा निर्माण की प्रक्रिया के बारे में पढ़ा है। जैसा हम जानते हैं अपक्षयित शैलों के साथ जैविक पदार्थों एवं भौम जल (पौधों एवं पशुओं) की अंतर्क्रिया एवं मिश्रण के द्वारा मृदा का निर्माण होता है, जिसमें पौधे पैदा होते हैं। इसमें खनिज तत्त्व भी होते हैं, जो पौधों की वृद्धि के लिए अनिवार्य हैं। मृदा निर्माण की *प्रक्रिया* शैलों के मूल तत्त्वों को अधिक गतिशील बनाती है ताकि पौधे उन्हें पोषक तत्त्वों के रूप में उपयोग कर सकें।

प्रमुख पोषक तत्त्व छ: हैं: *नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाशियम, कैल्सियम, मैग्नीशियम* तथा *सल्फर।* इनके अतिरिक्त लोहा तथा अल्प मात्रा में बोरोन व आयोडिन जैसे तत्त्वों की

आवश्यकता भी पौधों को पड़ती है। विभिन्न प्रकार की मिट्टी में पोषण–क्षमता अत्यधिक भिन्न होती है। यह मूल शैल के संघटन तथा प्रदेश के जलवायविक कारकों- तापमान व वर्षा पर निर्भर करती है। उष्णकटिबंधीय प्रदेशों में उच्च वर्षा के कारण पोषक तत्त्व सरलतापूर्वक घुलकर बह जाते हैं। शीतोष्ण प्रदेशों में मृदा में पोषक तत्त्वों की मात्रा अधिक होती है। मरुस्थलीय मृदा में भी पोषक तत्त्वों का संकेंद्रण अधिक होता है, किंतु जलाभाव के कारण ये गतिशील नहीं हो पाते और पौधों को अनुपलब्ध रहते हैं।

पौधों तथा पशुओं के विघटन से मृदा में पोषक तत्त्वों का प्राकृतिक रूप में पुन: स्थापन होता रहता है। लेकिन यह एक धीमी प्रक्रिया है। अतएव पोषकों के तीव्र पुनर्स्थापना के लिए मृदा में रसायनिक उर्वरकों मुख्यत: नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा पोटाशियम को मिलाया जाता है।

दोमट मृदा कृषि के लिए आदर्श मानी जाती है क्योंकि इसमें समुचित वनस्पति पोषक तत्त्व तथा अच्छा अपवाह होने के साथ ही कृषि कार्य करना सरल होता है। पर्याप्त अपवाह वाली भारी चिकनी मृदा कुछ फसलों के लिए अधिक उपयुक्त होती है। बलुई मृदा सामान्यत: अनुपजाऊ होती है यद्यपि अधिक मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग करके उसको कृषि के लिए उपयोग में लाया जा सकता है।

उच्चावच

उच्चावच के तीन तत्त्व – ऊँचाई, सूर्य प्रकाश के संदर्भ में ढाल की अवस्थिति तथा प्रवणता, कृषि क्रियाओं के प्रतिरूप को प्रभावित करते हैं। मध्य अक्षांशीय क्षेत्रों में, अधिक ऊँचाई वाले भागों में सीमित प्रकार की फसलें ही पैदा की जाती हैं। दूसरी ओर, उष्णकटिबंधों में अधिक ऊँचाई पर निचले मैदानी भागों के अति उच्च तापमान तथा आर्द्रता से राहत मिलती है।

स्थानीय स्तर पर, ढाल की दिशा, उच्चावच का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व होता है। उत्तरी गोलार्द्ध में दक्षिणवर्ती ढाल, उत्तरवर्ती ढाल की तुलना में अधिक समय तक तेज धूप प्राप्त करते हैं। ढाल की प्रवणता कृषि के प्रकार तथा कृषि विधि दोनों को ही प्रभावित करता है। तीव्र प्रवणता भारी मशीनों के प्रयोग को रोकती है। इसके अतिरिक्त, वहाँ मृदा अपरदन का जोखिम भी अधिक होता है।

सामाजिक-आर्थिक संस्थाएँ

कृषि उत्पादन पर भौतिक पर्यावरण के कारकों का प्राथमिक नियंत्रण होता है, वे कारक अकेले ही कृषि–भूमि उपयोग के प्रतिरूपों को अच्छी तरह स्पष्ट करने में असमर्थ हैं। भौतिक सीमाओं के भीतर, उत्पादन की मात्रा, गहनता तथा उत्पादन का स्तर *सामाजिक तथा आर्थिक* दशाओं जैसे खेत का आकार, स्वामित्व के प्रकार - स्वतंत्र या मुक्त स्वामित्व–बटाई के विविध रूप तथा राज्य–स्वामित्व, उपभोक्ता की माँग, परिवहन तथा विपणन या बाजार की सुविधाएँ, पूँजी की उपलब्धता एवं सरकारी–छूट तथा उसकी समर्थन नीतियों पर निर्भर करता है। उत्पादन की भौतिक सीमाएँ लगभग स्थिर होती हैं और उनका विस्तार सीमा के भीतर ही किया जा सकता है, परंतु उत्पादन की आर्थिक सीमा माँग के अनुसार घटती–बढ़ती रहती है। अत: कृषक के लिए किसी निश्चित पर्यावरण के भीतर ही, सामान्यत: बहुत से चुनावों और विकल्पों के द्वार खुले होते हैं। खेती का वास्तविक प्रतिरूप, कृषक द्वारा भौतिक पर्यावरण एवं विभिन्न सामाजिक तथा आर्थिक कारकों द्वारा प्रदान की गई संभावनाओं के मूल्यांकन से ही निश्चित होता है।

कृष्य भूमि उपयोग

संसार में कृषि के अंतर्गत क्षेत्र काफी सीमित है। जलवायु, ढाल, मृदा तथा नाशक जीवों के व्यवरोध कृषि योग्य भूमि को

सारणी 5.1 विश्वस्तर पर भू-उपयोग परिवर्तन (क्षेत्रफल दस लाख हेक्टेयर में)

प्रमुख भू-उपयोग	*1700*	*1850*	*1920*	*1950*	*1980*	*2000**
वन	6214	5965	5678	5389	5053	3454
घास भूमि	6860	6837	6748	6780	6788	3427
फसल क्षेत्र	265	537	913	1170	1501	1512

स्रोत: रिचार्डस् जे. एफ 1990: *लैंड ट्रांसफारमेशन,* टर्नर, बी. एल. आदि (संपादन) द अर्थ ट्रांसफार्मड बाई ह्यूमन एक्शन, केंब्रिज, केंब्रिज यूनीवर्सिटी प्रेस

* संयुक्त राष्ट्र
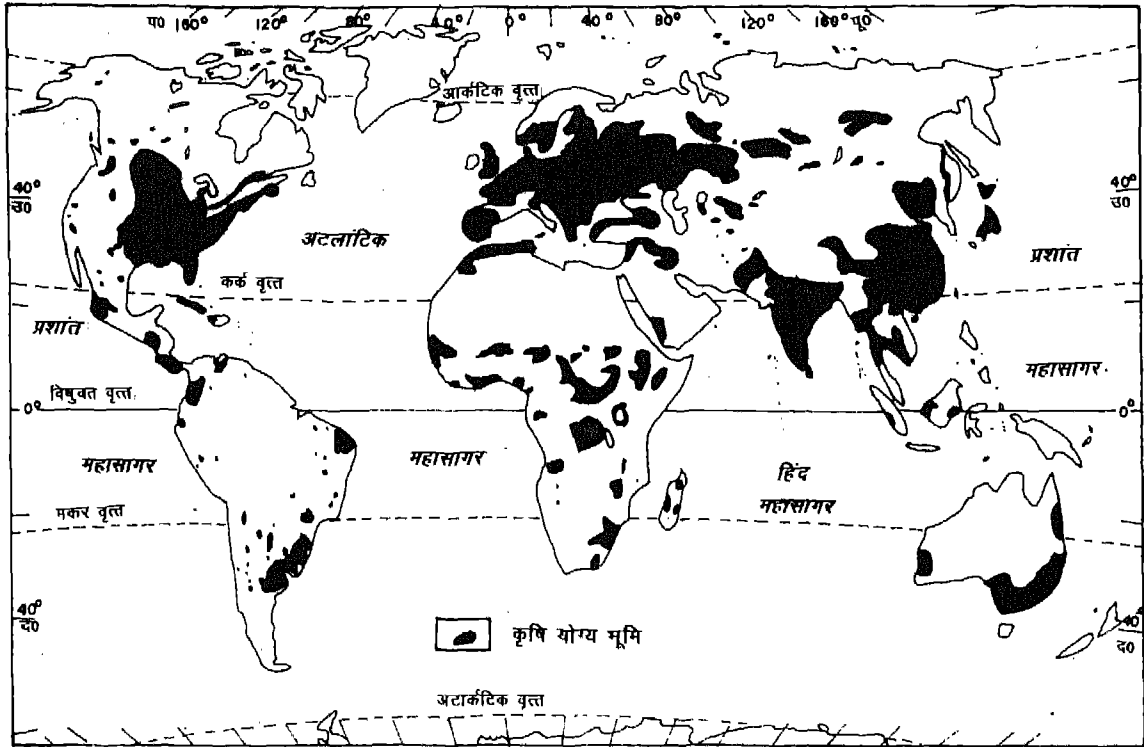
चित्र 5.2 विश्व : कृषि योग्य भूमि का वितरण

सीमित करते हैं, जिससे यह कुल भू-उपयोग का अपेक्षाकृत एक छोटा प्रतिशत है। भू-उपयोग का एक बहुत अधिक बड़ा भाग चारागाह तथा वनों के प्रयोग के योग्य है (चित्र 5.2)।

यदि हम विगत तीन शताब्दियों में भूमंडलीय स्तर पर तीन प्रमुख भू-उपयोगों की तुलना करें (सारणी 5.1) तो यह प्रमाणित होगा कि मानव ने वनों तथा घास भूमियों पर अतिक्रमण करके फसल-क्षेत्र में कितनी बढ़ोत्तरी की है।

वर्तमान में, विश्व के कुल क्षेत्रफल का 32 प्रतिशत वनों के, 26 प्रतिशत चारागाह के, 1 प्रतिशत स्थाई फसलों के, 10 प्रतिशत खेती के तथा 26 प्रतिशत अन्य उपयोगों के अंतर्गत पाया जाता है।

सामान्यत: फसलों को उनके विभिन्न उपयोगों के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है, जैसे खाद्यान्न, दलहन, तिलहन, रेशेदार और पेय। इनके विभाजन की दूसरी विधि इन्हें खाद्य-फसलों तथा अखाद्य-फसलों के वर्गों में रखना है। फसलों के महत्त्व तथा उनके अंतर्गत कृषि क्षेत्रफल को ध्यान में रखकर कुछ फसलों को ही विस्तृत अध्ययन करने के लिए चुना गया है। यहाँ पर मात्र खाद्य-फसलों को ही लिया गया है तथा उनके वितरण-प्रारूप, उत्पादन एवं भरण-पोषण क्षमता को ही दर्शाया जाएगा (सारणी 5.2)।

खाद्य फसलें

संपूर्ण संसार की जनसंख्या के लिए भोजन की प्राप्ति प्रमुखत: पौधों द्वारा ही होती है। पौधों के विविध प्रकारों में से मात्र कुछ का ही हजारों साल पहले घरेलूकरण किया गया था। वे आज भी भोजन के प्रमुख स्रोत हैं। इन किस्मों की तीन सामान्य विशेषताएँ हैं। प्रति इकाई भूमि पर अधिक उत्पादन, उच्च भोजन मूल्य और भंडारण की योग्यता।

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि संसार की खाद्य आपूर्ति में पाँच फसलों का ही प्रभुत्व है। इनमें से तीन खाद्यान्न फसलें हैं- गेहूँ, चावल तथा मक्का। दो अन्य फसलें, आलू तथा कसावा, कंद हैं। इन सभी फसलों में ऊपर बताए गए गुण पाए जाते हैं। संयुक्त रूप से पृथ्वी पर लगभग सभी मनुष्यों के लिए ये ही प्रमुख भोजन प्रदान करते हैं।

इन खाद्य फसलों की उत्पादन विशेषताओं को सारणी 5.2 में दिया गया है। इसमें विकसित तथा विकासशील देशों के संदर्भ में प्रत्येक फसल के अंतर्गत क्षेत्रफल के साथ इनके औसत-उत्पादन का अंतर साफ दिखता है।

इन पाँचों प्रमुख खाद्य फसलों के क्षेत्रफल में अंतर मुख्यत: इन फसलों की जलवायविक आवश्यकताओं के कारण है, जो उनकी कृषि को सीमित करती है। विकासशील

सारणी 5.2 : प्रमुख खाद्य फसलें – उत्पादन विशेषताएँ, 1999

फसल	बोई गई भूमि क्षेत्रफल (दस लाख हे.)	वार्षिक उत्पादन (दस लाख मीट्रिक टनों में)	विश्व औसत उपज (टन प्रति हे.)	विकासशील देशों में औसत उपज (टन. प्रति हे.)	विकसित देशों में औसत उपज (टन. प्रति हे.)
गेहूँ	215.27	583.6	2.71	2.70	2.72
चावल	155.13	596.5	3.85	3.78	6.19
मक्का	139.21	600.4	4.31	2.93	7.08
आलू	17.99	294.3	16.36	16.09	16.57
कसावा	16.58	168.1	10.10	10.01	उपलब्ध नहीं
कुल खाद्यान्न	**679.88**	**2064.2**	**3.04**	**2.76**	**3.55**

स्रोत : एफ. ए. ओ. स्टैटिस्टिक्स, संयुक्त राष्ट्र, खाद्य एवं कृषि संगठन, सांख्यिकी विभाग, 2000

देशों की तुलना में विकसित देशों में प्रति हेक्टेयर उत्पादन इसलिए अधिक है क्योंकि उन्हें कृषि प्रौद्योगिकी जैसे, कीटनाशक दवाएँ, उर्वरक, संकरबीज तथा मशीन अपेक्षाकृत अधिक आसानी से उपलब्ध हैं।

चावल

अनेक मूल प्रजातियों के बृहत संकेंद्रण के आधार पर यह समझा जाता है कि चावल का उद्भव पूर्वोत्तर भारत के पूर्वी हिमालय के गिरिपदों, हिंद-चीन तथा दक्षिण-पश्चिम चीन में हुआ। पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर, ऐसा माना जाता है कि चावल की कृषि सबसे पहले लगभग 7,000 वर्ष पूर्व चांग जियांग डेल्टा में प्रारंभ हुई। अगले 6,000 वर्षों में इसकी खेती का विस्तार शेष दक्षिणी और पूर्वी एशियाई भागों में हुआ। मूलरूप से इसकी कृषि दलदलों में की जाती थी। फिर इसका विस्तार नए क्षेत्रों में हुआ, जिससे यह स्पष्ट होता है कि धान के पौधे का विभिन्न प्रकार के पर्यावरणीय दशाओं जैसे तापमान, दिन की लंबाई, वर्षा एवं विविध प्रकार की मृदाओं से अनुकूलन हुआ। परिणामतः चावल की किस्मों में बहुत विविधता है जो कम आर्द्र उच्च भूमि की दशाओं से लेकर पाँच मीटर गहरे पानी वाले खेतों तक में पैदा की जा सकती है। विश्व में लगभग 65 हजार से अधिक स्थानीय किस्मों के चावल की खेती होती है।

चावल मुख्य रूप से उष्ण आर्द्र जलवायु वाली मानसूनी एशिया की फसल है (चित्र 5.3)। परंपरागत रूप से सुप्रवाहित नदी घाटियों एवं डेल्टा क्षेत्रों में ही चावल पैदा किया जाता था। तथापि, सिंचाई की सहायता से अब चावल की खेती उच्च भूमियों तथा शुष्क क्षेत्रों में भी की जा रही है। धान के पौधे के वर्धन काल में उच्च तापमान (27^0 से 30^0 सेल्सियस) तथा अधिक वर्षा (लगभग 100 सेंटीमीटर) चाहिए। वस्तुतः इन पौधों की प्रारंभिक अवस्था में खेतों में पानी भरा होना चाहिए। इसलिए धान के खेतों में 10 से 25 सेंटीमीटर पानी भरा रहता है। पर्वतीय ढालों पर सीढ़ीनुमा खेतों में चावल उगाया जाता है। चीकायुक्त दोमट मृदा जिसमें जल अवधारण की क्षमता है, इस फसल के लिए सर्वोत्तम है।

चावल की खेती के लिए अधिक संख्या में सस्ते श्रम की आवश्यकता होती है। इसमें अधिकांश कार्य हाथ से करना पड़ता है; जैसे पौधशाला से पौध को निकालना, पानी भरे हुए खेतों में उन्हें रोपना, खेतों से समय-समय पर खर-पतवार निकालना तथा फसल की कटाई आदि।

चावल का पोषक मूल्य अधिक होता है, विशेषतः उस समय जब चावल के बाहरी पर्त पर पाए जाने वाले महत्त्वपूर्ण विटामिन तत्त्व को धान की कुटाई के समय हटाया नहीं जाए। संसार की लगभग आधी जनसंख्या का मुख्य भोजन चावल है।

गेहूँ

गेहूँ मुख्यतः शीतोष्ण कटिबंधीय प्रदेश की फसल है, परंतु अपनी अनुकूलनशीलता के कारण आज सभी खाद्यान्न फसलों में गेहूँ का उत्पादन क्षेत्र सबसे अधिक विस्तृत है। संसार का कोई विरला ही देश होगा जो गेहूँ का उत्पादन
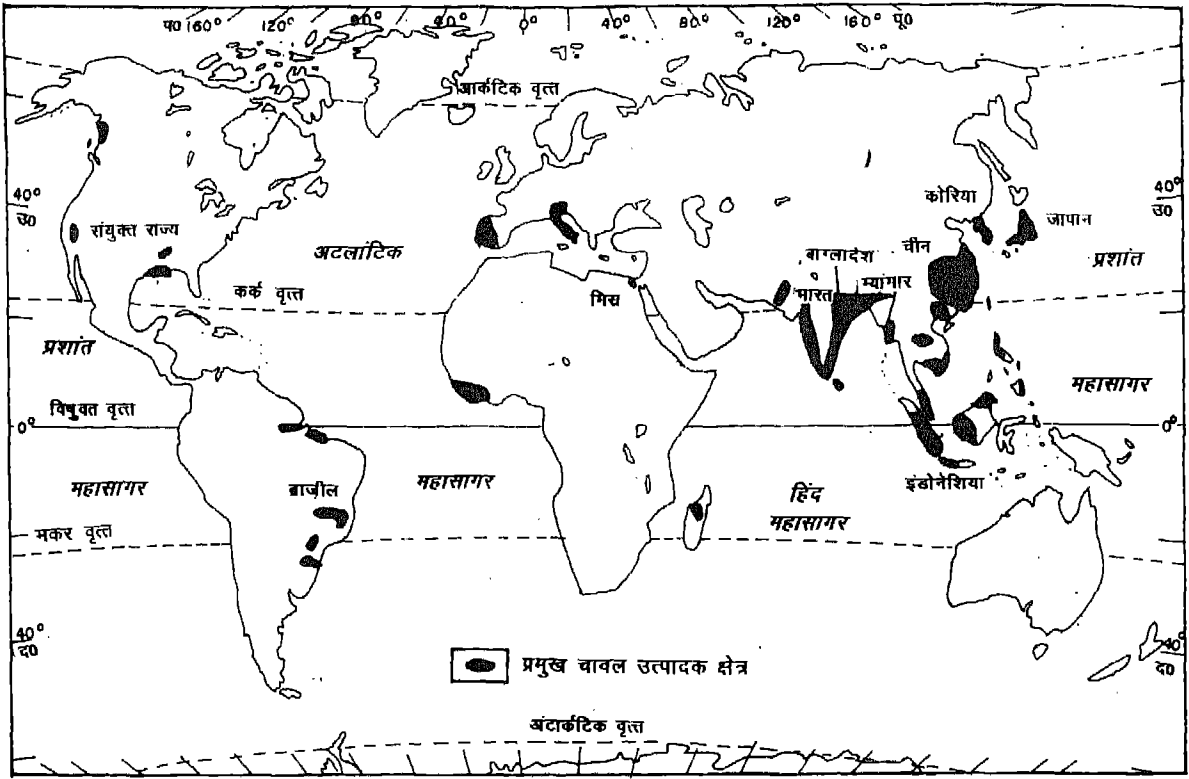
चित्र 5.3 विश्व : चावल उत्पादन के मुख्य क्षेत्र

कुछ मात्रा में न करता हो। प्रोटीन तथा कार्बोहाइड्रेट की समुचित मात्रा के कारण गेहूँ सर्वाधिक पौष्टिक अन्नों में से एक है। विश्व के अधिकांश भागों में लोगों के भोजन का यह एक प्रमुख खाद्यान्न है। यद्यपि गेहूँ एक कठोर फसल है, किंतु अधिक गर्मी तथा आर्द्रता वाली जलवायु की दशाओं में इसका उत्पादन सफलतापूर्वक नहीं है। इसके लिए बीज अंकुरण के समय ठंडा मौसम तथा मृदा में आर्द्रता की उपयुक्त मात्रा आवश्यक है। औसत वार्षिक वर्षा 40 से 75 सेंटीमीटर के बीच होनी चाहिए। फसल पकने के समय तापमान लगभग 16^0 सेल्सियस तथा आकाश साफ होना चाहिए। गेहूँ के लिए दोमट तथा चर्नोजम मृदाएँ अधिक उपयुक्त होती हैं।

जलवायु के आधार पर गेहूँ की दो फसलें हैं : शीत ऋतु का गेहूँ तथा वसंत ऋतु का गेहूँ।

शीत ऋतु का गेहूँ उन क्षेत्रों में बोया जाता है, जहाँ शीत ऋतु बहुत कठोर नहीं होती है, जबकि वसंत ऋतु का गेहूँ उन क्षेत्रों में बोया जाता है, जहाँ शीत ऋतु में अत्यधिक सर्दी पड़ती है। गेहूँ को गुणों के आधार पर भी दो किस्मों में विभाजित किया जाता है- *मुलायम* तथा *कठोर* गेहूँ। इनका उत्पादन क्रमशः अधिक आर्द्र क्षेत्रों एवं शुष्क क्षेत्रों में किया जाता है।

यद्यपि गेहूँ की प्रति एकड़ अधिकतम उपज आर्द्र मध्य अक्षांशीय क्षेत्रों में होती है, इसके उत्पादन की प्रमुख पेटियाँ सूखे अद्र्ध शुष्क जलवायु क्षेत्रों में ही स्थित हैं (चित्र 5.4)। सर्वाधिक गेहूँ उत्पादन के प्रमुख क्षेत्र हैं- संयुक्त राज्य अमेरिका तथा कनाडा के बृहत् मैदान, स्वतंत्र देशों के राष्ट्रकुल (पूर्व सोवियत संघ के देश) का स्टेपी प्रदेश तथा उत्तरी चीन का मैदान। गेहूँ की खेती गहन तथा विस्तृत दोनों कृषि पद्धतियों के अंतर्गत की जाती है। व्यापारिक दृष्टिकोण से बृहत् स्तर पर उत्पादन आस्ट्रेलिया तथा दक्षिण अमेरिका के पंपास में भी किया जाता है। यूरोप के लगभग सभी देशों में गेहूँ उत्पन्न किया जाता है किंतु इसके अधिकांश भाग का उपयोग स्थानीय रूप से कर लिया जाता है। इन

सारणी 5.3: चावल, गेहूँ, मक्का तथा आलू उत्पादन के मुख्य क्षेत्र

चावल	(%)	गेहूँ	(%)	मक्का	(%)	आलू	(%)
एशिया	91	एशिया	38	उ. अमेरिका	48	यूरोप	31
अफ्रीका	3	यूरोप	24	एशिया	25	एशिया	26
द. अमेरिका	3	उ. अमेरिका	17	द. अमेरिका	11	द. अमेरिका	4
उ. अमेरिका	1.5	सी.आइ.एस.	16	यूरोप	10	सी.आइ.एस.	27
यूरोप	<1	द. अमेरिका	2	अफ्रीका	5	उ. अमेरिका	9
ओशनिया	<1	ओशनिया	2	सी.आइ.एस.	1	अफ्रीका	3
		अफ्रीका	1	ओशनिया	<1		
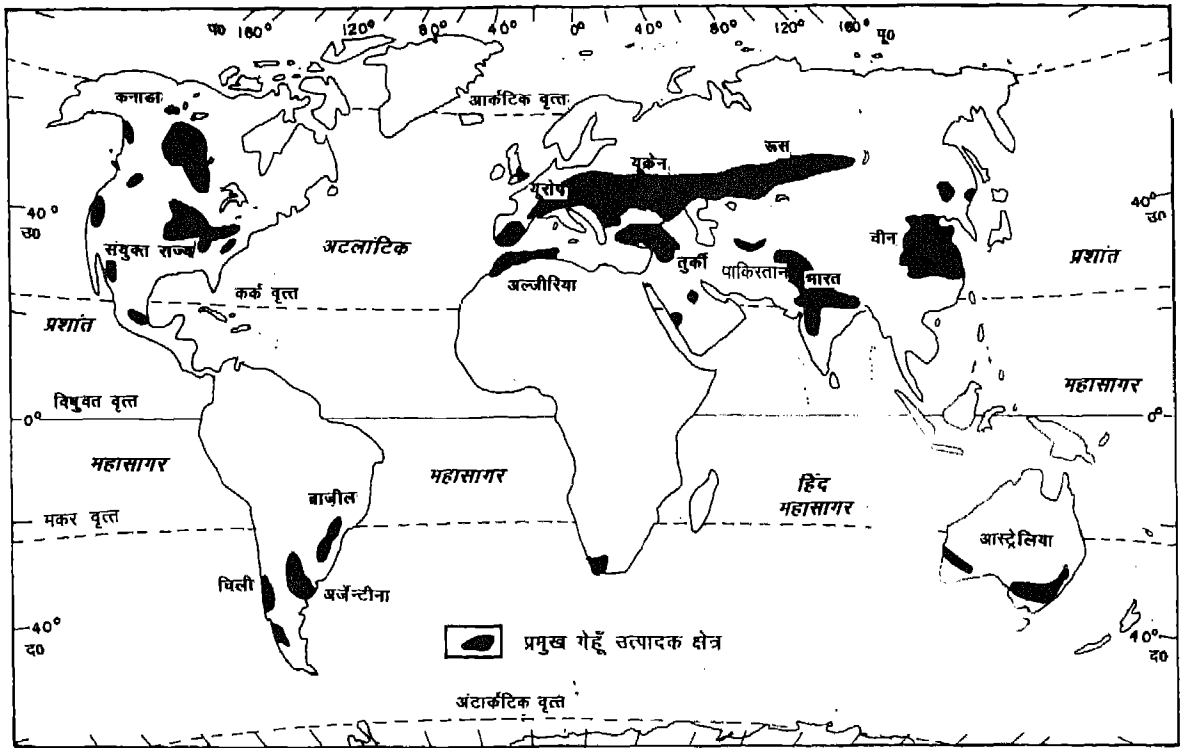
चित्र 5.4 विश्व: गेहूँ उत्पादन के मुख्य क्षेत्र

सभी देशों में फ्रांस सबसे बड़ा उत्पादक तथा एक मात्र निर्यातक देश भी है।

मक्का

मक्का नए विश्व की एक अन्य फसल है जिसका उद्भव मध्य अमेरिका में हुआ तथा जहाँ से यह आज विश्व के सभी भागों में फैल गई है। यह एक अति उच्च उत्पादन देने वाली फसल है। मक्के का सर्वोत्तम उत्पादन उन भागों में होता है जहाँ ग्रीष्म ऋतु गर्म और आर्द्र होती है। इसकी पोषण क्षमता गेहूँ तथा चावल की अपेक्षा कम होती है क्योंकि इसमें प्रोटीन उनके जैसा नहीं है। यह मध्य अमेरिका, दक्षिण अमेरिका और अफ्रीका की एक महत्त्वपूर्ण खाद्य फसल है तथा भारत एवं चीन में यह कुछ कम महत्त्व की है (चित्र 5.5)। संसार के मक्का उत्पादन का लगभग आधा संयुक्त राज्य अमेरिका में होता है। लेकिन इसका 80 प्रतिशत पशुओं के चारे तथा मक्के के तेल के रूप में उपयोग किया जाता है, न कि मानव के प्रत्यक्ष उपभोग के लिए।

आलू

यह एक महत्त्वपूर्ण खाद्य-फसल है जिसका सर्वोत्तम उत्पादन मृदु तथा आर्द्र जलवायु में होता है। आज इसका उत्पादन संपूर्ण मध्य अक्षांशीय क्षेत्रों के आर्द्र भागों में किया जा रहा
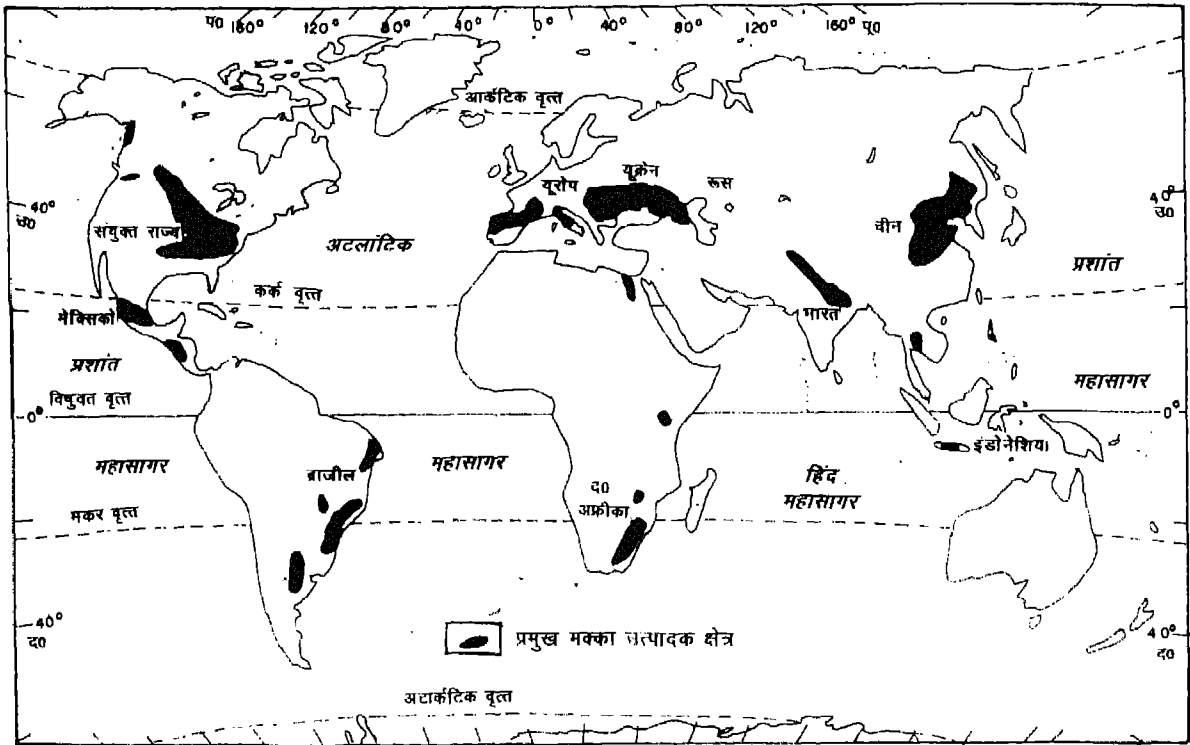
चित्र 5.5 विश्व : मक्का उत्पादन के मुख्य क्षेत्र

है। पूर्वी यूरोपीय देशों तथा सी.आइ.एस. में विश्व का आधे से अधिक (35 प्रतिशत) आलू उत्पन्न किया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका, पेरू, भारत और जापान अन्य प्रमुख उत्पादक देश हैं।

कसावा

यह मूल रूप में उष्णकटिबंधीय प्रदेश की फसल है जिसका उद्भव दक्षिण अमेरिका में हुआ। अन्य चार खाद्य फसलों की तुलना में इसमें प्रोटीन तथा खनिज की कमी पाई जाती है, तो भी इसके बहुत से संपूरक लाभ भी हैं। यह विभिन्न उष्णकटिबंधीय दशाओं में पैदा की जाती है, जहाँ पर अन्य फसलों का उत्पादन नहीं हो सकता है। इसके अतिरिक्त खाद्य फसलों को प्रभावित करने वाले अधिकांश नाशक कीटों के प्रति इसमें अपेक्षाकृत अधिक रोधक्षमता है। पके कंदों को जमीन में खराब हुए बिना लंबे समय तक रखा जा सकता है। उष्णकटिबंधीय प्रदेश के लिए यह गुण अत्यंत लाभदायक है।

सूखे कंदों को पीसकर आटा बनाया जाता है। इन्हीं कारणों से, यह दक्षिण-पूर्व एशिया, मध्य अफ्रीका तथा उष्णकटिबंधीय दक्षिण अमेरिका की बृहत् जनसंख्या के लिए एक प्रमुख खाद्य फसल है।

उपरोक्त पाँच प्रमुख खाद्य-फसलों के अतिरिक्त भी कई और खाद्य-फसलें जैसे, अनाज (जौ, राई), दलहन, तिलहन, गन्ना एवं चुकंदर, पेय फसलें (चाय तथा कहवा) सब्जियाँ एवं फल भी इसी वर्ग के अंतर्गत आती हैं। दलहनों में दालें, काला चना, मटर, सोयाबीन और अन्य कई प्रकार की फलियाँ सम्मिलित की जाती हैं।

इनमें से अधिकांश फसलें स्थानीय एवं प्रादेशिक महत्त्व की ही हैं। तिलहन के अंतर्गत बीजों की बहुत सी किस्में हैं जो खाद्य-तेलों के स्रोत होते हैं, जैसे तिल, सरसों, रेपसीड, मूँगफली, नारियल, सूरजमुखी, जैतून तथा मक्का। दलहनों की भाँति ही तिलहनों के उत्पादन में भी संसार में बृहत् प्रादेशिक विभिन्नताएँ दृष्टिगत होती हैं।

गन्ना

गन्ना उष्णकटिबंध की फसल है, जो चीनी का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। लेकिन शीतोष्ण कटिबंधीय देशों में चीनी का मुख्य स्रोत चुकंदर है।
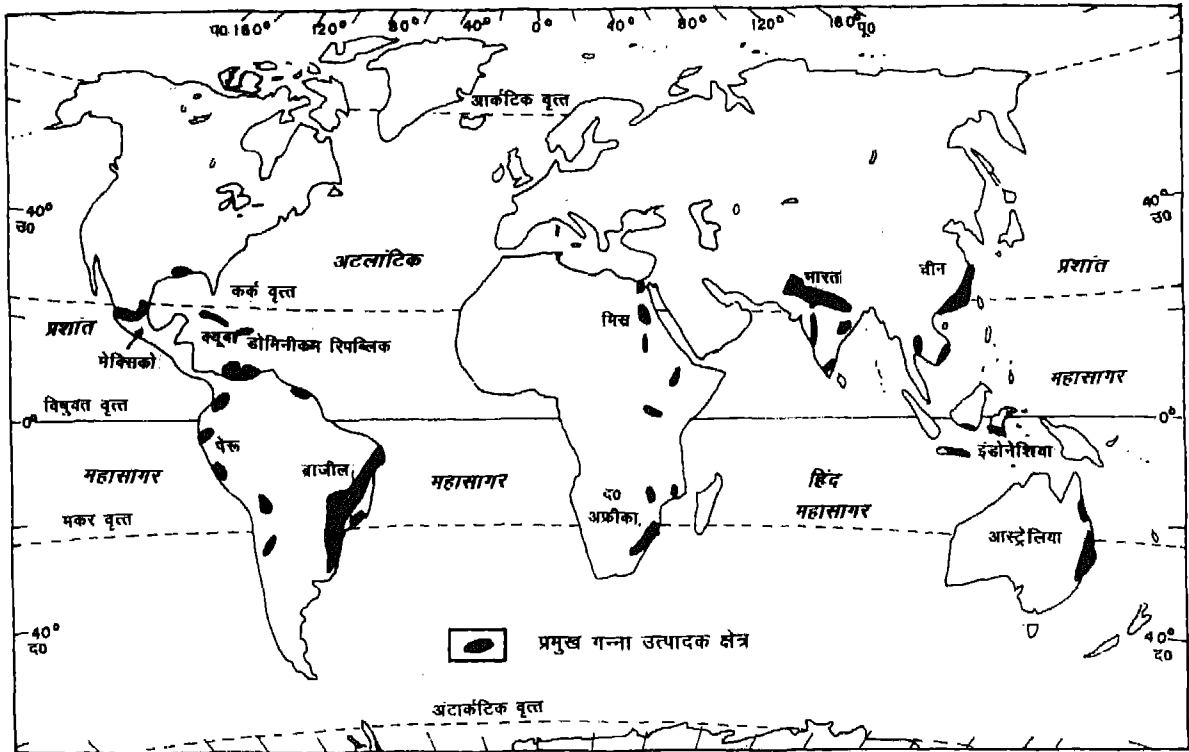
चित्र 5.6 विश्व : गन्ना उत्पादन के मुख्य क्षेत्र

गन्ने के लिए गर्म तथा आर्द्र जलवायु की आवश्यकता पड़ती है। इसके उत्पादन के लिए 20^0 से 27^0 सेल्सियस के बीच तापमान एवं 75 से 120 सेंटीमीटर वर्षा आदर्श है। गन्ने की फसल तैयार होते समय कम तापमान, जो 20^0 सेल्सियस से कम न हो एवं शुष्क ऋतु होने से फसल में सुक्रोस की मात्रा बढ़ जाती है। एक बार बोने के पश्चात्, गन्ने की फसल से कम से कम तीन साल तक उपज प्राप्त की जा सकती है।

गन्ने के लिए गहरी मृदा, जिसमें आर्द्रता धारण करने की क्षमता अधिक हो, सर्वाधिक उपयुक्त होती है। दोमट,जलोढ़ एवं काली मृदाएँ भी इसके फसल के लिए अच्छी हैं। मृदा की उर्वरा शक्ति को बनाए रखने के लिए कंपोस्ट खाद एवं रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता होती है।

ब्राजील, क्यूबा, मैक्सिको, भारत, पाकिस्तान, चीन, थाइलैंड, इंडोनेशिया तथा आस्ट्रेलिया मुख्य गन्ना उत्पादक देश हैं (चित्र 5.6)।

चाय

चाय एक अत्यधिक प्रचलित पेय है जो एक सदाबहार झाड़ी की कोमल पत्तियों से तैयार किया जाता है। इसके लिए गर्म तथा आर्द्र जलवायु की आवश्यकता पड़ती है, किंतु इसकी जड़ों में वर्षा का पानी एकत्रित नहीं होना चाहिए। इसलिए यह मुख्यत: 27^0 दक्षिण से 43^0 उत्तर अक्षांशों के मध्य पहाड़ी ढलानों पर 125 सेंमी. से 750 सेंटीमीटर वर्षा पाने वाले क्षेत्रों में उगाया जाता है। चाय के पौधों के लिए अधिक ह्यूमस वाली उपजाऊ मृदा आवश्यक है।

चाय एक बागानी फसल है। इसे बड़े चाय-बागानों में उगाया जाता है। चाय की झाड़ी को 40-50 सेंटीमीटर से अधिक नहीं बढ़ने दिया जाता है। इन पौधों की आयु 40 से 50 वर्ष है। मृदा की उर्वरता बनाए रखने के लिए नाइट्रोजन युक्त उर्वरक डालने की आवश्यकता पड़ती है। चाय की पत्तियाँ हाथों से तोड़ी जाती हैं। अत: सस्ते मजदूरों की उपलब्धता एक आवश्यक कारक होता है।

विश्व में चाय के मुख्य उत्पादक देश भारत, चीन, श्रीलंका, बांग्लादेश, जापान, इंडोनेशिया, अर्जेंटाइना और कीनिया हैं (चित्र 5.7)।

कहवा

यह भी एक रोपण फसल है जो उष्ण कटिबंध के उच्च भागों में समुद्र तल से 500 से 1500 मीटर की ऊँचाई तक पैदा होती
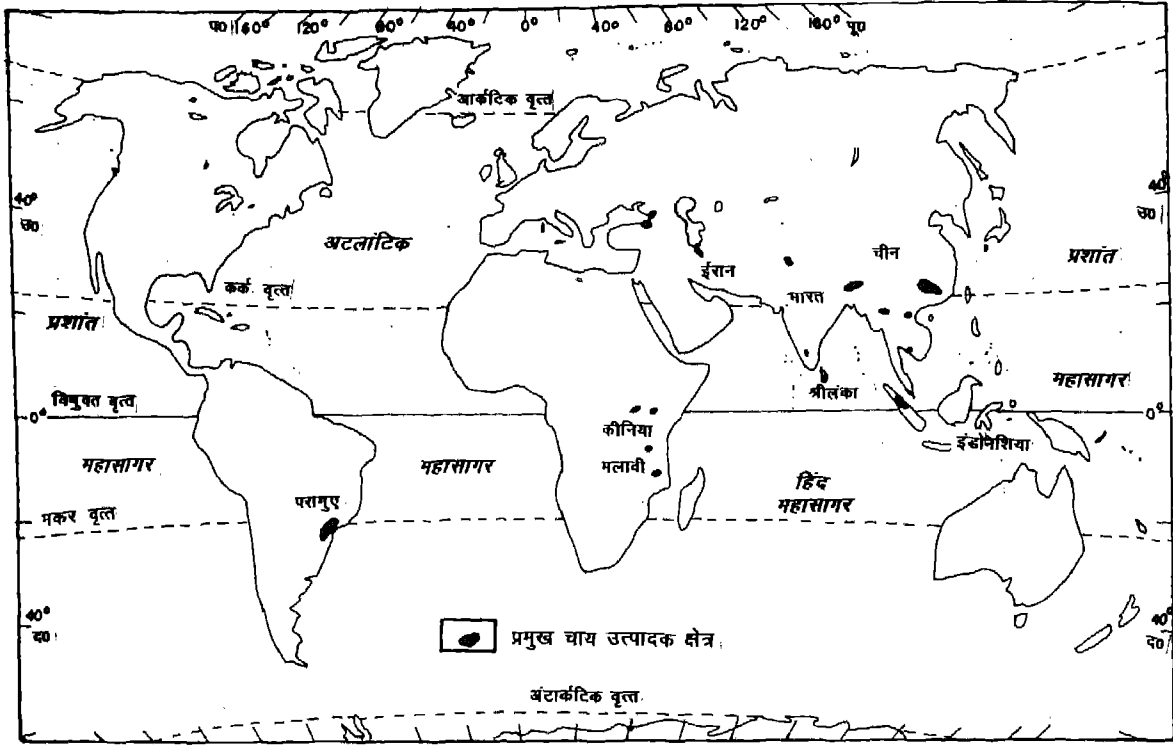
चित्र 5.7 विश्व : चाय उत्पादन के मुख्य क्षेत्र
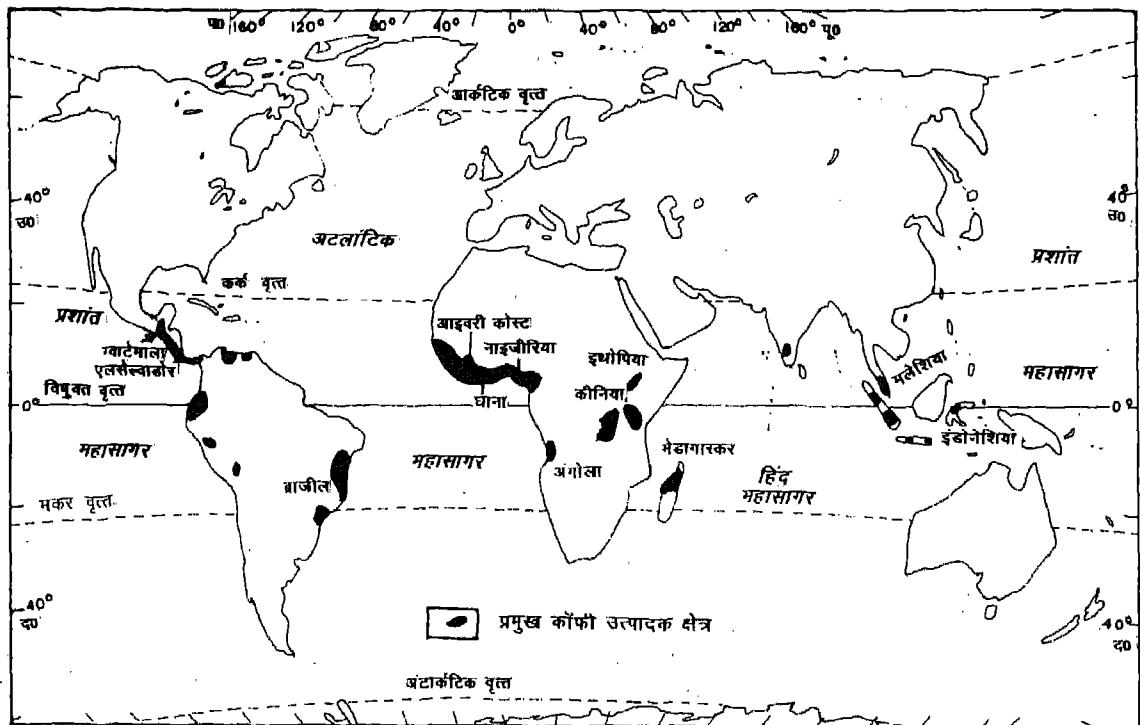
चित्र 5.8 विश्व : कहवा उत्पादन के मुख्य क्षेत्र

है। कहवा की झाड़ी को पाला बहुत हानि पहुँचाता है। इसीलिए इसे छायादार पेड़ों के नीचे उगाया जाता है। इसके पौधे के लिए उच्च आर्द्रता की आवश्यकता होती है। अत: 160 सेंमी से 250 सेंमी वर्षा वाले क्षेत्रों में यह भली-भाँति उगता है। गहरी, सरंध्र तथा ह्यूमस युक्त आर्द्रता धारण करने वाली मृदा इसके लिए अच्छी है।

ब्राजील, कोलंबिया, वेनेजुएला, गुवाटेमाला, हैटी, जमाइका, इथोपिया तथा इंडोनेशिया इसके मुख्य उत्पादक देश हैं। भारत में कहवा केवल कर्नाटक में ही उगाया जाता है (चित्र 5.8)।

अखाद्य फसलें

रेशेदार फसलें जैसे कपास तथा जूट, रबर एवं तंबाकू महत्त्वपूर्ण अखाद्य फसलें हैं। कपास तथा जूट उष्ण कटिबंधीय प्रदेशों की फसलें हैं। तथापि इनको उगाने के लिए जलवायु दशाएँ जैसे, तापमान तथा वर्षा पूर्णत: अलग होती हैं। रबर के वृक्ष आमेजन तथा कांगो घाटियों में बहुतायत से पाए जाते हैं। दक्षिण पूर्व एशिया, भारत, चीन, श्रीलंका तथा कीनिया में भी इनका रोपण सफलतापूर्वक किया गया है।

कपास

यह सबसे महत्त्वपूर्ण रेशेदार फसलों में से एक है। कपास की उत्कृष्टता का आधार इसके रेशों की लंबाई होती है। सर्वोत्तम कपास के रेशे की लंबाई 5 सेंटीमीटर से अधिक होती है। यह किस्म संयुक्त राज्य अमेरिका के दक्षिण-पूर्वी तट तथा वेस्ट इंडीज में उगाई जाती है। मध्यम किस्म के कपास के रेशों की लंबाई 3.75 सेंटीमीटर से 5 सेंटीमीटर तक होती है। इसका उत्पादन नील नदी की घाटी, मध्य एशियाई गणराज्यों- ताजिकिस्तान, कजाखस्तान, तुर्कमेनिस्तान एवं उजबेकिस्तान तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में होता है। छोटे रेशे वाली कपास के रेशे की लम्बाई 2.5 सेंटीमीटर से कम होती है तथा इसके मुख्य उत्पादक देश भारत तथा ब्राजील हैं।

कपास एक उष्णकटिबंधीय फसल है, जो उच्च तापमान सहन कर सकती है परंतु इसके वर्धन काल में 21^0 से 27^0 सेल्सियस तापमान उत्तम है। कपास का पौधा 21^0 सेल्सियस से कम तापमान तथा पाला सहन नहीं कर सकता है। 50 सेंटीमीटर वर्षा की मात्रा इसकी फसल के लिए पर्याप्त होती है, परंतु यह इसके संपूर्ण वर्धन काल में समान रूप से वितरित होनी चाहिए। कपास की पोंडी के पकते समय आकाश
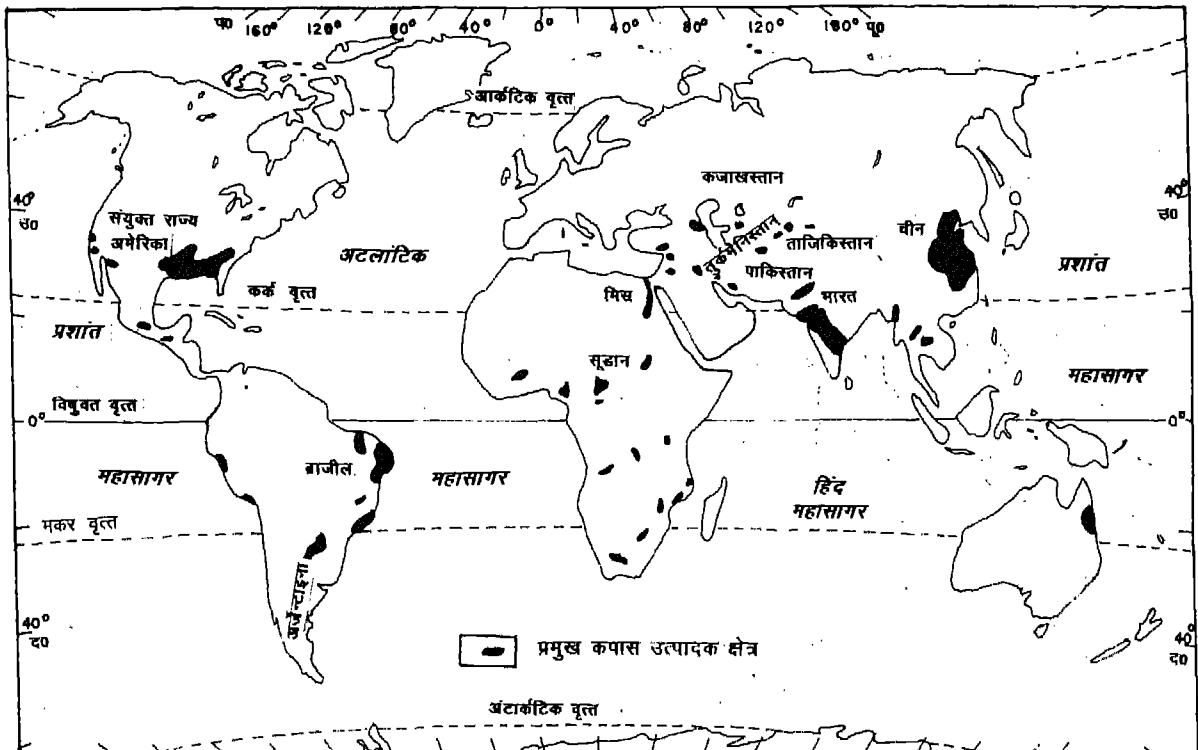
चित्र 5.9 विश्व : कपास उत्पादन के मुख्य क्षेत्र

स्वच्छ होना चाहिए। कपास की खेती के लिए अच्छे अपवाह वाली मृदा उपयुक्त होती है। लावा निर्मित, काली एवं जलोढ़ मृदाएँ इसके लिए अच्छी हैं।

पहले चर्चित देशों के अतिरिक्त चीन, पाकिस्तान, सूडान तथा तुर्की में भी कपास की खेती होती है (चित्र 5.9)।

कृषि प्रदेश

डी. ह्विटेलसी द्वारा 1939 में प्रस्तुत किया गया वर्गीकरण सबसे पहले किए गए वर्गीकरणों में से एक है, परंतु यह सर्वाधिक संतोषजनक भी है। उन्होंने संसार के कृषि प्रदेशों को विभाजित करने के लिए 5 आधारों को अपनाया था : फसल तथा पशु साहचर्य भू-उपयोग की गहनता; कृषि उत्पाद का संसाधन तथा विपणन; मशीनीकरण का स्तर तथा कृषि संबद्ध भवनों तथा अन्य संरचनाओं के प्रकार एवं संयोजन। इस योजना में 13 मुख्य प्रकार के कृषि प्रदेश पहचाने गए थे जो निम्न हैं :

(i) चलवासी पशुचारण
(ii) पशुपालन (रैंचिंग)
(iii) स्थानांतरी कृषि
(iv) प्रारंभिक स्थानबद्ध कृषि
(v) गहन जीविकोपार्जी, चावल प्रधान
(vi) गहन जीविकोपार्जी या जीविका कृषि, चावल विहीन
(vii) वाणिज्यिक रोपण कृषि
(viii) भूमध्यसागरीय कृषि
(ix) वाणिज्यिक अन्न कृषि
(x) वाणिज्यिक पशु एवं फसल कृषि
(xi) जीविकोपार्जी फसल एवं पशु कृषि
(xii) वाणिज्यिक डेयरी कृषि
(xiii) विशिष्ट उद्यान कृषि

चित्र 5.10 : प्रमुख कृषि प्रदेश

चित्र 5.10 में विश्व के प्रमुख कृषि प्रदेशों को सरल रूप में प्रस्तुत करने के उद्‌देश्य से कुछ कम महत्त्व के प्रदेशों को मिला दिया गया है।

उपरोक्त वर्गीकरण के लिए चयन किए गए कारकों का आकलन मात्रात्मक न होकर व्यक्तिनिष्ठ प्रतीत होता है। फिर भी, ह्विटेलसी का यह वर्गीकरण बाद में किए गए प्रयासों के लिए आधार प्रस्तुत करता है।

कृषि पद्धतियों एवं उत्पादन विशेषताओं के मुख्य अभिलक्षणों के आधार पर संसार की कृषि पद्धतियों को प्रमुखत: दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है : जीविकोपार्जी कृषि एवं वाणिज्यिक कृषि। यद्‌यपि कई बार इन दोनों के बीच अंतर काफी धूमिल होता है।

जीविकोपार्जी कृषि

कृषि उत्पादन का यह अति विस्तृत स्वरूप है। यह संसार की लगभग आधी जनसंख्या (लगभग 2.9 अरब लोगों) के जीवन की एक पद्‌धति है। अधिकांश विकासशील देशों में खाद्‌य उत्पादन के महत्त्वपूर्ण होने के कारण कार्यशील (श्रमजीवी) जनसंख्या का अधिकांश भाग जीवकोपार्जी कृषकों का ही होता है। इनका मुख्य उद्‌देश्य अपने परिवार का भरण-पोषण करना है। यहाँ उत्पादन की इकाईओं (कृषि फार्म, खेत या पशु समूह) की खास विशेषता यह है कि ये आकार में छोटी तथा अपेक्षाकृत आत्म निर्भर होती हैं। इस कारण जिन वर्षों में उत्पादन अच्छा होता है तथा परिवार की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के बाद भी कुछ अधिशेष बच जाता है, उसका भंडारण अथवा व्यापार किया जाता है। जीविकोपार्जी कृषि की तीन परंपरागत जीविका प्रणालियाँ हैं: चलवासी पशुचारण, स्थानांतरी कृषि एवं गहन जीविकोपार्जी कृषि। हम लोगों ने चलवासी पशुचारण तथा स्थानांतरी कृषि का विवेचन पहले ही किया है। अब हम गहन जीविकोपार्जी कृषि की मुख्य विशेषताओं का अध्ययन करेंगे।

गहन जीविकोपार्जी कृषि द्‌वारा 2.4 अरब से अधिक लोगों का भरण-पोषण होता है। मानसून एशिया के भारत तथा चीन जैसे सघन जनसंख्या वाले देशों में यह पद्‌धति आर्थिक आधार प्रदान करती है। इसमें श्रमिक शक्ति के भारी प्रयोग से प्रति इकाई कृषि भूमि पर अपेक्षाकृत अधिक उपज प्राप्त होती है। गर्मी तथा वर्षा युक्त लंबे वर्धन काल वाले क्षेत्रों में चावल प्रमुख फसल है। ठंडे तथा शुष्क जलवायु प्रदेशों की प्रमुख खाद्‌य फसलें गेहूँ, उच्च भूमि पर पैदा होने वाला चावल तथा अन्य अन्न हैं। इसमें फसलों का विशिष्टीकरण नहीं हो सकता क्योंकि कृषक वे सारी फसलें उगाना चाहते हैं जो उनके उपभोग के लिए आवश्यक हैं।

बहुफसली कृषि में एक ही खेत में दो या कभी-कभी तीन फसलें उत्पन्न की जाती हैं। यह उन क्षेत्रों में अधिक प्रचलित है जहाँ मृदा तथा जलवायु (तापमान एवं वर्षा) अत्यधिक अनुकूल हैं। ऐसे गहन खाद्‌य उत्पादन का उदाहरण सब्जियों तथा फलों की अंतर्फसली खेती (धान की मेड़ों या अन्य फसलों के बीच में सब्जियाँ उगाना) तथा पानी भरे चावल के खेतों में मछली का पालन है। घरेलू माँग के आधार पर मुर्गियों, गाय-बैलों व अन्य पशुओं का पालन भी किया जाता है। विगत दो दशकों में उन क्षेत्रों में जहाँ चावल तथा गेहूँ की उन्नत किस्मों के संकर बीजों को अपनाया गया है, कृषि उत्पादकता में महत्त्वपूर्ण वृद्‌धि हुई है। कुछ क्षेत्रों में रासायनिक उर्वरकों, फफूंदी नाशक एवं कीटनाशक दवाओं तथा सिंचाई सुविधाओं का प्रयोग कर परंपरागत जीविकोपार्जी कृषि में वाणिज्यिक कृषि की कुछ विशेषताएँ विकसित हो गई हैं।

वाणिज्यिक कृषि

जीविकोपार्जी कृषि प्रणाली के विपरीत, वाणिज्यिक कृषि प्रणाली में बिक्री हेतु फसलों तथा पशुओं के विशिष्टीकृत उत्पादन पर बल दिया जाता है। अधिकांश वाणिज्यिक कृषि फार्म अपेक्षाकृत बड़े होते हैं। उनमें विशिष्ट मशीनों, बीजों, उर्वरकों तथा अन्य उत्पादों का उपयोग उत्पादन दक्षता में वृद्‌धि के लिए किया जाता है। वाणिज्यिक कृषि में एक कृषक बड़ी मात्रा में लोगों को भोजन प्रदान करने के लिए खाद्‌य पदार्थ उत्पन्न कर सकता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि विकसित देशों की दस प्रतिशत से भी कम जनसंख्या प्रत्यक्ष रूप से कृषि में संलग्न हैं। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका का प्रत्येक कृषक इतना उत्पादन करता है कि 60 से अधिक अतिरिक्त लोगों को भोजन प्रदान किया जा सकता है।

यह उत्पादन दक्षता दो प्रकार से प्राप्त की जाती है। उन्नत-निवेश, जैसे बीज, उर्वरक तथा फफूंदीनाशी अधिक उपज को बढ़ावा देते हैं। विशिष्टीकृत मशीनों के प्रयोग से उत्पादन में तीव्रता आती है तथा फसल बोने, सिंचाई करने, फसल की कटाई एवं अन्य कृषि कार्यों में लगने वाले श्रमिकों की संख्या में कमी होती है। संयुक्त राज्य में, विगत आधी शताब्दी में कृषि का उत्पादन दो गुना हो गया जबकि यहाँ कृषि कार्य में लगे श्रमिकों की संख्या में तीन गुने से

अधिक की कमी हुई। इसी के साथ कृषकों की संख्या 65 लाख से घटकर केवल 20 लाख हो गई है, जिसमें आज केवल 5 लाख से कम पूर्णकालिक कृषक हैं।

खाद्य उत्पादन में वृद्धि तथा फार्मों व श्रमिकों की संख्या में कमी की प्रवृत्ति यह दर्शाती है कि फार्म व खेतों का आकार तथा पशु-समूह बड़े होते चले जा रहे हैं। इससे, श्रमिक तथा उत्पादन लागत में अधिक बचत होती है। विकसित देशों में पूर्णकालिक वाणिज्यिक फार्म का स्वरूप एक व्यवसायिक उद्यम के सदृश है। इस प्रकार यह विकासशील देशों में परंपरागत जीवन पद्धति के रूप में विकसित कृषि से बिलकुल भिन्न है। कृषि क्रियाओं तथा प्रबंधन रणनीति में, उत्पादन लागत तथा बाजार मूल्यों पर अवश्य विचार करना चाहिए, क्योंकि वे राष्ट्रीय एवं भूमंडलीय अर्थव्यवस्थाओं और आर्थिक, राजनीतिक तथा संस्थागत शक्तियों की अंतर्क्रियाओं द्वारा संचालित होती हैं।

विश्व में भूख, कुपोषण एवं खाद्य सुरक्षा

कृषि उत्पादों में महत्त्वपूर्ण वृद्धि होने के बावजूद 1 अरब से अधिक लोग, अर्थात प्रत्येक छः व्यक्तियों में से एक व्यक्ति, अति भूख तथा कुपोषण से ग्रस्त है। *भूख* का तात्पर्य है कि व्यक्ति विशेष को अपने स्वास्थ्य, सामान्य वृद्धि और उत्पादक कार्य क्षमता बनाए रखने के लिए जितनी मात्रा में और जिस प्रकार का भोजन चाहिए वह उसे उसके प्रतिदिन के आहार से नहीं मिल रहा है। भूमंडलीय भूख का प्राप्त अनुमान लगाने के लिए चार सूचकों का प्रयोग किया जाता है : भुखमरी, अल्पपोषण (अपर्याप्त भोजन), सूक्ष्म पोषण तत्त्वों का अभाव एवं पोषण ह्रास करने वाले रोग एवं परजीवी। बहुधा दुर्भिक्ष का परिणाम विस्तृत भुखमरी का होता है। *दुर्भिक्ष* किसी प्रदेश में फसलों के मारे जाने या उनके नुकसान होने अथवा खाद्यों को लाने वाले वाहनों को आने से रोक लगाने पर भोजन की अत्यधिक कमी हो जाने से पड़ता है। यद्यपि दुर्भिक्षों का संबंध विस्तृत प्रदेशों में फसलों के खराब होने से होता है, इनमें से अधिकांश सामाजिक एवं राजनीतिक प्रक्रियाओं के कारण परंपरागत कृषि-उत्पादन की रणनीतियों में आई बाधा के परिणाम हैं। भुखमरी और कुपोषण का सामना देशों द्वारा खाद्य सुरक्षा के लिए आवश्यक कदम उठाए जाने पर किया जा सकता है। *खाद्य सुरक्षा* से तात्पर्य एक स्वास्थ्यप्रद जीवन

चित्र 5.11 विश्व : भूख तथा कुपोषण
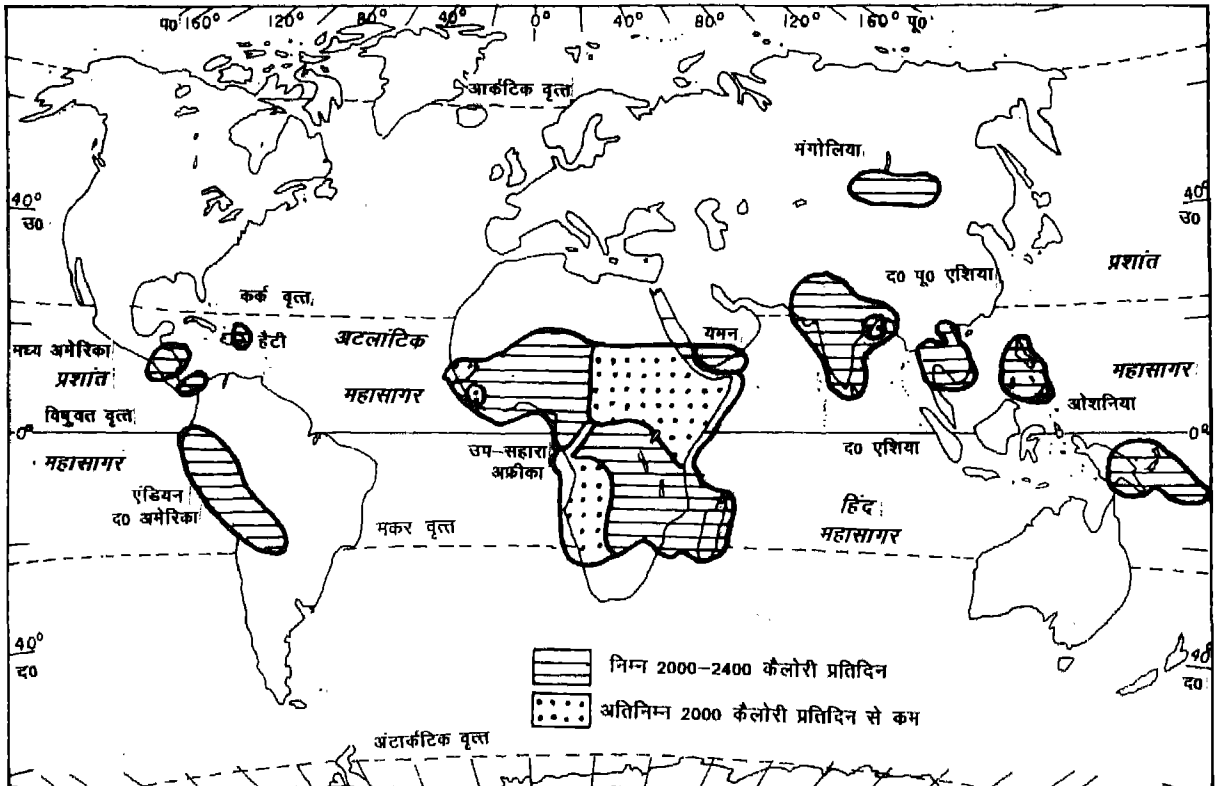
हेतु सभी लोगों के लिए सभी समय आवश्यक खाद्य पदार्थ की उपलब्धता है।

1970 तथा 1980 के दशकों में उपसहारीय अफ्रीका में दुर्भिक्षों के कारण बहुत बड़ी संख्या में लोग शारीरिक अपंगता तथा मृत्यु के शिकार हुए। इन दुर्भिक्षों का संबंध सूखे की पुनरावृत्ति तथा इसके परिणामस्वरूप फसलों के मारे जाने और पशुओं के लिए चारे की कमी से था। सरकारी नीतियों द्वारा प्रोत्साहन दिए जाने से परंपरागत कृषि पद्धति में परिवर्तन करके निर्यात के उद्देश्य से अखाद्य फसलों के उत्पादन में वृद्धि हुई। इससे सूखाग्रस्त वर्षों में स्थानीय जनसंख्या के उपभोग के लिए जीविकोपार्जी खाद्य फसलों में कमी हुई। इसके अतिरिक्त, कुछ भागों में लगातार चल रही सैनिक झड़पों तथा गृह अशांति से दुर्भिक्ष की स्थिति और भी खराब हुई। परिणामस्वरूप, सूडान, इथोपिया, सोमालिया, अंगोला और र्वांडा में सैकड़ों-हजारों लोग भुखमरी के शिकार हुए। आज लगभग 150 से 300 लाख लोग, प्रतिवर्ष, कहीं न कहीं पर भुखमरी के खतरे से ग्रस्त रहते हैं।

चित्र 5.11 में, कुपोषण तथा भूख से प्रभावित क्षेत्रों को दर्शाया गया है। संसार में आज जब प्रतिवर्ष प्रत्येक व्यक्ति के लिए समुचित भोजन प्रदान करने भर का खाद्य उत्पन्न किया जा रहा है तो लाखों लाख लोग क्यों भूख तथा कुपोषण ग्रस्त हैं ? इसके बहुत से सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा पर्यावरणीय कारण हैं। इनमें युद्ध, भूस्वामित्व एवं कृषि की संरचना, वाणिज्यीकरण, गरीबी, खाद्य उत्पादन का भूगोल एवं खाद्य सहायता कुछ महत्त्वपूर्ण कारण हैं। पूरे विश्व में भूखे लोगों की एक ही विशेषता है कि वे गरीब हैं। भूमिहीन तथा बेरोजगारों के पास भोजन प्राप्त करने के लिए न पैसा है और न कोई साधन। वाणिज्यीकरण का मुख्य उद्देश्य निर्यात होता है न कि स्थानीय जनता को जीविकोपार्जी भोजन प्रदान करना। इसका अर्थ परंपरागत खाद्य फसलों के स्थान पर बाजारों में अधिक मूल्यों वाली अखाद्य फसलों का उत्पादन भी है। स्पष्ट है कि गरीब भूमंडलीय बाजार क्षेत्र में भोजन के लिए प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकते हैं।

संसार में खाद्य की आपूर्ति का वितरण असमान है। केवल कुछ ही प्रदेशों, जैसे उत्तर अमेरिका, पश्चिमी यूरोप तथा आस्ट्रेलिया में आवश्यकता से अधिक खाद्यान्न का उत्पादन होता है। ये विकसित प्रदेश अपना खाद्यान्न विश्व बाजार मूल्य पर बेचते हैं। गरीब विकासशील देशों के लिए इस मूल्य पर अन्न खरीदना सामर्थ्य से बाहर है। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में आने वाले खाद्यान्न का एक बहुत छोटा भाग ही खाद्य सहायता के रूप में प्रदान किया जाता है। उदाहरण के लिए, 1980 के दशक में जब उप-सहारीय अफ्रीका अकालग्रस्त था तब संयुक्त राज्य अमेरिका ने अपने राजनीतिक सहयोगी मध्य अमेरिकी देशों को संपूर्ण अकालग्रस्त अफ्रीका की तुलना में चार गुना अधिक खाद्यान्न भेजा था।

खाद्यान्न-भंडारण का प्रयोग बहुधा, खाद्य सुरक्षा के माप के रूप में किया जाता है। आज से लगभग 50 वर्ष पहले जीविकोपार्जी कृषि अर्थ व्यवस्थाओं में चावल तथा गेहूँ की उन्नत किस्मों के प्रयोग के बाद से खाद्य उत्पादन में तीव्र वृद्धि हुई। इसने हरित क्रांति को जन्म दिया। परंतु अब यह गति धीमी हो रही है। 1950 से 1990 के बीच विश्व खाद्यान्न उत्पादन में हो रही 2 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि की तुलना में 1990 के बाद उसमें मात्र लगभग 0.5 प्रतिशत की वृद्धि ही देखी जा रही है। परिणामस्वरूप खाद्यान्न भंडारण में ह्रास हुआ है। इसीलिए, अब खाद्यान्न उत्पादन के सतत पोषण (टिकाऊ) की क्षमता में सुधार और खाद्य सुरक्षा में वृद्धि के लिए नई रणनीतियाँ बनाने की आवश्यकता है।

इस बात की संभावना अधिक है कि खाद्योत्पादन के विस्तार के सबसे बड़े संभाव्य क्षेत्र वही होंगे जो अभी भी 'संसार के अन्न भंडार' और 'रोटी की टोकरी' के नाम से प्रसिद्ध हैं। वर्तमान में पौधों की उन्नत किस्म विकसित करने में लगे वैज्ञानिक लंबे समय से उपेक्षित बीज बैंकों के आनुवांशिक संसाधनों का शोषण कर रहे हैं। इन बीज बैंकों में लगभग 100 फसलों की प्रजातियों तथा उनके जंगली पूर्वजों के 60 लाख से अधिक प्रकार के बीजों का भंडार है। इस प्रकार एक प्रयोग चीन में किया गया, जिसमें चावल की ऐसी किस्में विकसित की गई हैं जो वर्तमान उन्नत बीजों की अपेक्षा 20 से 40 प्रतिशत अधिक उपज प्रदान कर सकती हैं।

नई रणनीतियों में भी सीमित संसाधनों के दक्षतापूर्ण प्रयोग के साथ-साथ परंपरागत अंतर्फसली विधि, जिसने सैकड़ों वर्षों तक भूमि की उत्पादकता को यथावत बनाए रखा, को अपनाए जाने पर विशेष बल दिया गया है। यह एक फसली-कृषि (सिर्फ एक फसल की खेती) की तुलना में पर्यावरणीय तथा आर्थिक दोनों दृष्टियों से लाभकारी है। कुछ निश्चित फसलों को साथ उगाने से मृदा की उर्वरता में वृद्धि, मृदा अपरदन का नियंत्रण तथा फसल की उपज में वृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त संपूर्ण फसल के नुकसान होने का खतरा भी कम होता है। स्थानांतरी कृषि के क्षेत्रों में कृषि-वानिकी तथा

पोषकों के पुनर्चक्रण से मृदा की उत्पादकता में वृद्धि हुई है। उदाहरण के लिए, अफ्रीका के साहेल प्रदेश में स्थानांतरी कृषि प्रणाली को सुधार कर कृषि-वानिकी प्रणाली के रूप में बदला जा रहा है। इसमें नाइट्रोजन प्रगाढ़ी बबूल पेड़ को परंपरागत फसलों- ज्वार, बाजरा, मक्का तथा सोरघम के बीच लगाया गया है। इन पेड़ों ने मृदा की उत्पादकता कई प्रकार से बढ़ाई है। इसी प्रकार, पेरू-अमेजन प्रदेश में इसकी अनुपजाऊ अम्लीय मृदा के लिए उपयुक्त पोषण-पुनर्चक्रण फसल प्रणाली का विकास किया गया है। उच्च उपज प्रदान करने वाली अम्ल सहनीय चावल तथा नाइट्रोजन प्रगाढ़ी कपास की कई किस्मों को उर्वरकों, चूना अथवा जोताई के बिना चक्र के रूप में उगाया जाता है। फसलों के अवशिष्ट कचरे को खेतों में ही छोड़ा जाता है तथा मानव श्रम का प्रयोग खरपतवार के नियंत्रण के लिए किया जा रहा है। फसलों की कई संतोषजनक कटाई के बाद, उष्णकटिबंधीय पौधे-कुडजू (एक स्थानीय पौधा) को लगाया जाता है ताकि खरपतवार की बाढ़ को रोका जा सके। एक वर्ष के बाद, इस पौधे के आवरण को जमीन में गाड़ दिया जाता है जिससे मृदा की पोषकता पुनः प्राप्त हो जाती है।

हाल के वर्षों में, आनुवांशिक अभियांत्रिकी ने पौधों तथा पशुओं की आनुवांशिकी संरचना को क्रमबद्ध रूप से परिवर्तित कर दिया है। यह अभी भी विकास की प्रारंभिक अवस्था में है तथा मानव समाज पर इसके प्रभाव का मूल्यांकन करना कठिन है।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए:
   (i) कृषि सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्राथमिक कार्य क्यों है ?
   (ii) कौन से कारक फसल उत्पादन की सीमा निश्चित करते हैं ?
   (iii) विश्व की पाँच खाद्य फसलों के नाम बताइए। इनमें से किस खाद्य फसल की उपज सर्वाधिक है ?
   (iv) चाय के पौधे पहाड़ी ढलानों पर ही क्यों लगाए जाते हैं ?
   (v) संसार के कृषि प्रदेशों के वर्गीकरण में ह्विटेलसी द्वारा किन आधारों का प्रयोग किया गया था ?
   (vi) खाद्य-सुरक्षा क्या है ?
2. अंतर स्पष्ट कीजिए :
   (i) स्थानांतरी कृषि तथा स्थानबद्ध कृषि
   (ii) जीविकोपार्जी तथा वाणिज्यिक कृषि
   (iii) भूख तथा कुपोषण
3. कारण बताइए :
   (i) चावल एक श्रम-प्रधान फसल है।
   (ii) गेहूँ सबसे अधिक विस्तृत क्षेत्र में उगाया जाने वाला खाद्यान्न है।
   (iii) यद्यपि संयुक्त राज्य अमेरिका संसार की लगभग आधी मक्का का उत्पादन करता है, इसका 80 प्रतिशत प्रत्यक्ष रूप से मानव द्वारा उपयोग नहीं किया जाता है।
   (iv) कसावा में प्रोटीन तथा खनिजों की मात्रा कम होते हुए भी यह दक्षिण पूर्व एशिया, मध्य अफ्रीका तथा दक्षिण अमेरिका की बहुत बड़ी जनसंख्या के लिए खाद्यान्न के रूप में प्रयुक्त होता है।
   (v) कपास के पौधों को फसल तैयार होते समय बादल रहित आकाश आवश्यक है।
   (vi) विश्व में खाद्य का उत्पादन सभी को भोजन प्रदान करने के लिए काफी है तथापि लाखों लोग भूख तथा कुपोषण के शिकार हैं।
4. कृषि विकास की प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण दिशाओं तथा परिवर्तनों की विवेचना कीजिए।
5. संसार में फसलों के वितरण प्रतिरूप को भौतिक पर्यावरण कैसे प्रभावित करता है ? व्याख्या कीजिए।
6. फसलों को उनके प्रयोग के आधार पर वर्गीकृत करें। हजारों वर्ष पहले क्यों कुछ ही प्रकार की फसलों का घरेलूकरण किया गया तथा वे आज भी प्रमुख खाद्य स्रोत बनी हुई हैं ? इसकी व्याख्या कीजिए।

7. विश्व में गेहूँ तथा चावल की खेती तथा उनके वितरण प्रतिरूप के लिए आवश्यक भौगोलिक दशाओं का वर्णन कीजिए।
8. चाय तथा कहवा की खेती तथा उनके वितरण प्रतिरूप को प्रभावित करने वाले भौगोलिक दशाओं का विश्लेषण कीजिए।
9. संसार के प्रमुख कृषि प्रदेशों का वर्णन कीजिए।
10. विश्व में भूख तथा कुपोषण की समस्या का वर्णन कीजिए तथा बताइए कि इनसे सुरक्षा कैसे सुनिश्चित की जा सकती है?

भौगोलिक कुशलताएँ

11. चित्र 5.1 का अध्ययन कीजिए तथा निम्न का उत्तर दीजिए :
    (i) कौन-सी फसलें केवल एक पतली पट्टी में उगायी जा सकती हैं और क्यों ?
    (ii) कौन-सी फसलें विस्तृत क्षेत्र पर उत्पन्न की जा सकती हैं और क्यों ?
    (iii) उन फसलों के नाम बताइए जो मुख्य रूप से उष्ण कटिबंधीय प्रदेशों में ही उगाई जा सकती हैं।
    (iv) उन फसलों के नाम बताइए जो मुख्य रूप से शीतोष्ण प्रदेशों में ही उत्पन्न की जाती हैं।

6 अध्याय

द्वितीयक क्रियाकलाप-विनिर्माण उद्योग

औद्योगिक क्रांति के साथ जल, कोयला तथा पेट्रोलियम जैसी अजैव ऊर्जा के उपयोग से प्राथमिक क्षेत्र में अत्यधिक परिवर्तन हुए। इसने बड़े पैमाने पर विनिर्माण प्रणाली के विकास में सहायता की, जिसमें इसने प्राथमिक क्षेत्र के उत्पादों का उपयोग किया। अत: इसे द्वितीयक कहते हैं। कच्चे माल का उत्पादन घरेलू और औद्योगिक, दोनों ही उपयोगों के लिए बढ़ा। फलस्वरूप प्राथमिक कार्यों में संलग्न लोगों की क्रयशक्ति में वृद्धि के कारण विनिर्माण उत्पादों की माँग भी बढ़ी। इस प्रकार इससे द्वितीयक क्रियाकलापों में वृद्धि हुई।

प्रारंभ में 'उद्योग' तथा 'विनिर्माण' शब्दों के अर्थ को स्पष्ट करना उपयोगी होगा। हम बहुधा फिल्म उद्योग, मत्स्य उद्योग, इस्पात उद्योग तथा पर्यटन उद्योग शब्द का प्रयोग करते हैं। किंतु इनमें से प्रत्येक भिन्न प्रकार के आर्थिक क्रियाकलाप को प्रदर्शित करता है। तथापि, भूगोलवेत्ता उद्योग शब्द का प्रयोग उन क्रियाओं का वर्णन करने के लिए करते हैं जो कृषि, वानिकी, मत्स्यन तथा खनन से प्राप्त प्राथमिक उत्पादों के प्रसंस्करण, और नई वस्तुओं के निर्माण से संबंधित होता है। प्राथमिक क्रियाकलापों से अलग करने के लिए, उद्योग को 'द्वितीयक क्रियाकलाप' भी कहा जाता है।

विनिर्माण का शाब्दिक अर्थ 'हाथ से बनाना' है। किंतु अब इसमें मशीन द्वारा निर्मित वस्तुओं को भी सम्मिलित किया जाता है। यह एक प्रक्रम है, जिसके अंतर्गत कच्चे माल को उच्च मूल्य की वस्तुओं में परिवर्तित कर दिया जाता है। उदाहरण के लिए, कपास एक कृषि उत्पाद है। यह सूती वस्त्रोद्योग में कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त होता है। कपास को कपड़े के रूप में परिवर्तित किया जाता है। बाद में उससे पोशाकें बनाई जाती हैं। इस प्रकार सूती कपड़ा और उससे बनी पोशाकें दोनों ही विनिर्माण उद्योग के उत्पाद हैं।

संयुक्त राष्ट्र की परिभाषा के अनुसार विनिर्माण "जैविक अथवा अजैविक पदार्थों का एक नए उत्पाद के रूप में यांत्रिक तथा रासायनिक परिवर्तन है, चाहे यह कार्य शक्ति चालित मशीन द्वारा संपन्न होता है अथवा हाथ द्वारा, चाहे यह कार्य एक कारखाने में किया गया है अथवा कामगारों के घर में, और उत्पाद चाहे थोक में बेचे जाएँ या फुटकर में"। इस प्रकार यह बहुत ही विस्तृत परिभाषा है। सामान्यत: आधुनिक *विनिर्माण उद्योग* की विशेषताएँ हैं: एक जटिल संगठन, विशिष्टीकृत श्रम, मशीनों का उपयोग, अजैव ऊर्जा का प्रयोग तथा बड़े पैमाने पर उत्पादन।

उद्योगों का वर्गीकरण

उद्योगों का कई प्रकार से वर्गीकरण किया जा सकता है : आकार, उत्पाद तथा कच्चे माल की प्रकृति एवं स्वामित्व।

आकार के आधार पर वर्गीकरण

किसी उद्योग के आकार का निश्चय उसमें लगाई गई पूँजी की मात्रा, कार्यरत लोगों की संख्या, उत्पादन की मात्रा आदि के आधार पर किया जाता है। तदनुसार उद्योगों का वर्गीकरण कुटीर उद्योग, लघु पैमाने के उद्योग तथा बड़े पैमाने के उद्योग में किया जा सकता है।

कुटीर या गृह उद्योग विनिर्माण की सबसे छोटी इकाईयाँ हैं। इसके हस्तकार या शिल्पकार अपने परिवार के सदस्यों की सहायता से, स्थानीय कच्चे माल तथा साधारण उपकरणों का उपयोग करके अपने घरों में ही वस्तुओं का निर्माण करते हैं। उत्पादन की दक्षता एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित होती है। इनमें उत्पादन छोटे पैमाने पर होता है। औजार तथा उपकरण साधारण होते हैं। उत्पादित वस्तुओं को सामान्यत: स्थानीय बाजार में बेचा जाता है। इस प्रकार कुम्हार, बढ़ई, बुनकर, लुहार आदि गृह उद्योग क्षेत्र में ही वस्तुएँ बनाते हैं। एशिया एवं अफ्रीका के अनेक देशों में अभी भी कुटीर उद्योगों के उत्पाद बहुत महत्त्वपूर्ण हैं तथा इनमें कुछ वस्तुओं की माँग विकसित देशों में बहुत अधिक है।

छोटे पैमाने के उद्योगों को उत्पादन की तकनीक के आधार पर कुटीर उद्योगों से अलग किया जाता है। इनमें आधुनिक ऊर्जा से चलने वाली मशीनों तथा श्रमिकों की भी सहायता ली जाती है। ये उद्योग कच्चा माल बाहर से भी मँगाते हैं यदि वे स्थानीय बाजार में उपलब्ध नहीं हैं। ये कुटीर उद्योगों की तुलना में आकार में बड़े होते हैं। इन उद्योगों द्वारा उत्पादित माल को व्यापारियों के माध्यम से स्थानीय बाजारों के बाहर बेचा जाता है। छोटे पैमाने के उद्योग विशेष रूप से विकासशील देशों की घनी जनसंख्या को रोजगार उपलब्ध कराने में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। कुछ देशों जैसे भारत तथा चीन में, कपड़े, खिलौने, फर्नीचर, खाद्य-तेल तथा चमड़े के सामान आदि का उत्पादन छोटे पैमाने के उद्योगों में किया जा रहा है।

बड़े पैमाने के उद्योगों में भारी उद्योग तथा पूँजी प्रधान उद्योग सम्मिलित किए जाते हैं, जो भारी मशीनों का प्रयोग करते हैं, बड़ी संख्या में श्रमिकों को लगाते हैं तथा काफी बड़े बाजार के लिए सामानों का उत्पादन करते हैं। इनका प्रबंध पदानुक्रम आधारित तथा जटिल होता है। इन उद्योगों में उत्पाद की गुणवत्ता तथा विशिष्टीकरण पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इन उद्योगों में बहुत बड़े संसाधान आधार की आवश्यकता पड़ती है। अतः कच्चा माल दूर-दूर स्थित विभिन्न स्थानों से मँगाया जाता है। वस्तुओं का उत्पादन भी बड़े पैमाने पर किया जाता है तथा उत्पादों को दूर-दूर बाजारों में भेजा जाता है। इस प्रकार इन उद्योगों को, अनेक सुविधाओं जैसे सड़क, रेल तथा ऊर्जा आपूर्ति की आवश्यकता पड़ती है। लोहा एवं इस्पात उद्योग, पेट्रो रसायन उद्योग, वस्त्र निर्माण उद्योग तथा मोटर कार निर्माण उद्योग आदि इस श्रेणी के अंतर्गत आते हैं।

कुछ भूगोलवेत्ता विनिर्माण उद्योग का विभाजन इनमें कार्य के आकार तथा उत्पादों की प्रकृति दोनों को मिलाकर ही करते हैं। इस प्रकार, उद्योगों के दो वर्ग होते हैं। *भारी उद्योग* बड़े पैमाने के उद्योग हैं। इनके कच्चे माल व तैयार माल दोनों ही भारी होते हैं। अतः इन्हें कच्चे माल के स्रोत के निकट ही स्थापित किया जाता है, जैसे लोहा-इस्पात उद्योग। *हल्के उद्योग* सामान्यतः छोटे पैमाने के उद्योग हैं। ये हल्के तथा संहत वस्तुओं का उत्पादन करते हैं। इन उद्योगों के लिए बाजार की निकटता सबसे महत्त्वपूर्ण कारक होता है। इलेक्ट्रॉनिक उद्योग इसका सर्वोत्तम उदाहरण है।

उत्पादन के आधार पर वर्गीकरण

कुछ उद्योग ऐसे होते हैं जिनके उत्पादों का प्रयोग अन्य प्रकार के उत्पादन प्राप्त करने के लिए किया जाता है। इन्हें *आधारभूत उद्योग* कहा जाता है। लोहा-इस्पात उद्योग एक आधारभूत उद्योग है क्योंकि इसमें उत्पादित इस्पात का उपयोग अन्य उद्योगों में कच्चे माल के रूप में किया जाता है। कुछ आधारभूत उद्योगों में मशीनें बनाई जाती हैं, जो अन्य उत्पादों को बनाने के लिए प्रयोग की जाती हैं।

कुछ उद्योग उन उत्पादों का निर्माण करते हैं, जिन्हें सीधे उपभोग के लिए प्रयोग किया जाता है, जैसे चाय, डबल रोटी, साबुन तथा टेलीविज़न। इन्हें उपभोक्ता *वस्तु निर्माण उद्योग* कहते हैं।

कच्चे माल के आधार पर वर्गीकरण

उद्योगों का वर्गीकरण उनके द्वारा प्रयुक्त कच्चे माल के आधार पर किया जा सकता है। इस प्रकार इन्हें कृषि आधारित उद्योग, वन आधारित उद्योग, धातु उद्योग तथा रासायनिक उद्योग के रूप में भी विभाजित किया जा सकता है।

कृषि पर आधारित उद्योगों में कृषि से प्राप्त उत्पादों को कच्चे माल के रूप में प्रयोग करते हैं। सूती वस्त्र, चाय, चीनी एवं वनस्पति तेल उद्योग इसके उदाहरण हैं। जिन उद्योगों में वनों से प्राप्त उत्पादों का कच्चे माल के रूप में प्रयोग किया जाता है उन्हें *वन आधारित उद्योग* कहते हैं, जैसे कागज एवं फर्नीचर उद्योग।

जिन उद्योगों में खनिज पदार्थों का उपयोग कच्चे माल के रूप में होता है, उन्हें *खनिज उद्योग* कहते हैं। धातुओं पर आधारित उद्योगों को *धातु उद्योग* कहते हैं। इन्हें पुनः लौह धात्विक उद्योगों एवं अलौह धातु उद्योगों में बाँटते हैं। ऐसी धातुओं पर आधारित उद्योग जिनमें लौहांश होता है, *लौह धातु उद्योग* कहलाते हैं, जैसे लोहा-इस्पात उद्योगों। दूसरी ओर, ऐसी धातुओं पर आधारित उद्योगों को जिनमें लौहांश नहीं होता है, *अलौह धातु उद्योग* कहते हैं, जैसे ताँबा तथा एल्युमिनियम।

रासायनिक पदार्थों पर आधारित उद्योगों को *रासायनिक उद्योग* की संज्ञा दी जाती है, जैसे, पेट्रोरसायन, प्लास्टिक, कृत्रिम रेशे तथा औषधि निर्माण उद्योग आदि। कुछ रासायनिक उद्योगों में प्रकृति से प्राप्त वस्तुओं को कच्चे माल के रूप में प्रयोग करते हैं, जैसे खनिज तेल, नमक, गंधक, पोटाश तथा वनस्पति उत्पाद आदि। कुछ रसायनिक उद्योगों में अन्य उद्योगों के उत्पादों का प्रयोग किया जाता है।

स्वामित्व के आधार पर वर्गीकरण

उद्योगों को स्वामित्व तथा प्रबंधन के आधार पर सरकारी या सार्वजनिक, निजी और संयुक्त क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है। जब किसी उद्योग का स्वामित्व तथा प्रबंधन राज्य सरकार के हाथ में हो तो इसे *सार्वजनिक क्षेत्र* के उद्योग की संज्ञा दी जाती है। राज्य सरकारें ही ऐसी इकाइयों की स्थापना तथा संचालन करती हैं। किसी एक व्यक्ति या कुछ व्यक्तियों के समूह (निगम) के स्वामित्व तथा प्रबंधन में संचालित उद्योग *निजी क्षेत्र के उद्योग* कहलाते हैं। जब एक व्यक्ति अपनी पूँजी लगाकर उद्योग स्थापित करता है, वह उस उद्योग का प्रबंधन निजी उद्योगपति के रूप में करता है। कभी-कभी कुछ व्यक्ति मिलकर साझेदारी के आधार पर उद्योग स्थापित करते हैं। वे भी निजी उद्योग हैं। ऐसे उद्योगों में पूँजी तथा काम के हिस्से का समझौता पहले ही कर लिया जाता है। उद्योगों की स्थापना निगमों द्वारा भी की जाती है। निगम कई व्यक्तियों अथवा संगठनों द्वारा बनाया हुआ ऐसा संघ होता है, जो पूर्व निर्धारित उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कार्य करता है। निगम जनता में शेयर बेचकर पूँजी जुटाता है। बड़े बहुराष्ट्रीय निगमों, जैसे पेप्सी, हिंदुस्तान लीवर तथा जेनरल इलेक्ट्रिक ने भूमंडलीय स्तर पर अनेक देशों में अपने उद्योग स्थापित किए हैं।

उद्योगों की अवस्थिति

एक स्थान विशेष पर किसी उद्योग की अवस्थिति विभिन्न कारकों द्वारा नियंत्रित होती है। परंपरागत रूप से इन्हें भौगोलिक तथा अभौगोलिक कारकों में बाँटा जाता था। जबकि भौगोलिक कारकों में उच्चावच, जलवायु, कच्चा माल, ऊर्जा स्रोत, श्रम, बाजार तथा परिवहन के साधन सम्मिलित हैं, अभौगोलिक कारकों में सरकारी नीतियाँ, पूँजी, बाजार तथा प्रबंध-व्यवस्था है।

यह विचार अत्यंत ही निश्चयवादी है क्योंकि अवस्थिति को निरपेक्ष रूप में समझाया नहीं जा सकता है। उदाहरण के लिए, लंकाशायर (यू. के.) में सूती वस्त्रोद्योग की अवस्थिति को केवल वहाँ पर विद्यमान आर्द्र जलवायु, स्वच्छ पानी, कोयले की प्रचुर मात्रा तथा अटलांटिक व्यापारिक मार्ग पर लिवरपूल की स्थिति, के संदर्भ में नहीं समझाया जा सकता है। ऐसी दशाएँ साउथ वेल्स सहित बहुत से दूसरे स्थानों पर भी उपलब्ध थीं। इसलिए लंकाशायर को समय तथा स्थान का आपेक्षिक लाभ प्राप्त था न कि निरपेक्ष लाभ। इन कमियों से छुटकारा पाने के लिए औद्योगिक अवस्थिति की विवेचना अब संसाधनों के समाहार (एक स्थान पर जमा करना) प्रक्रमण तथा वितरण, सरकारी नीतियों, पर्यावरण, औद्योगिक जड़त्व तथा मानवीय कारकों के संदर्भ में की जाती है। ये सभी कारक एकाकी नहीं अपितु अंतर्संबंधों के एक जटिल तंत्र के रूप में कार्य करते हैं। इन कारकों का आपेक्षिक महत्त्व समय, स्थान, उद्योगों तथा *अर्थव्यवस्था* के प्रकार के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। स्मरण रहे कि, एक निश्चित समय पर सभी कारक उद्योगों की स्थापना के लिए अनुकूल नहीं होते और अधिकांश उपयुक्त अवस्थितियाँ वे ही रहती हैं, जहाँ अनुकूल कारक प्रतिकूल कारकों से अधिक प्रभावी हैं। एक अनुकूलतम अवस्थिति वास्तव में एक सापेक्ष शब्द है।

समाहार, प्रक्रमण तथा वितरण के कारक

किसी उद्योग विशेष की अवस्थिति में कई कारकों जैसे, कच्चे माल का समाहार व प्रक्रमण तथा उससे विनिर्मित उत्पादों का वितरण आदि, संबंधित बहुत से कारक अधिक महत्वपूर्ण होते हैं।

दूरी

उद्योगों की अवस्थिति बताने के लिए *दूरी* एक अति महत्वपूर्ण कारक है। यह सिर्फ किलोमीटर के रूप में दिखाए जाने वाली भौतिक दूरी का ही प्रश्न नहीं है, यद्यपि यह महत्वहीन भी नहीं है। यह मालों के स्थानांतरण में लगने वाले परिवहन लागत तथा समय से संबंधित प्रश्न है। इस प्रकार, यहाँ *आर्थिक दूरी* के संदर्भ में बात करना अधिक युक्तिसंगत लगता है, जो परिवहन के साधन, मालों के प्रकार तथा माल भाड़ा द्वारा निर्धारित होता है। एक विनिर्माण कर्त्ता का प्राथमिक कार्य इसी आर्थिक दूरी को कम करना होता है और इसीलिए, परिवहन के साधन उद्योगों की अवस्थिति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

कच्चा माल

सभी उद्योगों में *कच्चे माल* का प्रयोग होता है, जिसे सस्ते दर पर उपलब्ध होना चाहिए। प्रारंभिक काल में, उद्योगों की अवस्थिति, कच्चे माल प्राप्त होने के स्थानों से जुड़ी हुई थी। परिवहन के साधनों तथा उतारने-चढ़ाने की सुविधा में प्रगति के कारण अब कच्चे माल का लाना-ले जाना सरल हो गया है। साथ ही उद्योगों में विशिष्टीकरण तथा जटिलता अधिक आ रही है। फलस्वरूप अशोधित तथा स्थूल कच्चे

मालों पर प्रत्यक्ष रूप से आधारित उद्योगों की संख्या कम होती जा रही है। संयुक्त राज्य अमेरिका और जापान जैसे देशों में अधिकांश विनिर्माण उद्योगों में अर्द्ध संसाधित उत्पादों का अधिकाधिक प्रयोग करते हैं। प्रौद्योगिकी के विकास ने कच्चे माल के गहन उपयोग को बढ़ावा दिया है। ऐसे विनिर्माण में कच्चे माल की हानि को कम करके तथा स्रोत पर ही उसमें अधिक सुधार करके किया गया है, जिससे उसका परिवहन आसानी से किया जा सके। तो भी, कुछ उद्योगों में कच्चे माल की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। उदाहरण के लिए, विनिर्माण की प्रक्रिया में कुछ कच्चे मालों का भार या उनकी स्थूलता कम हो जाती है। उदाहरण के लिए, ताँबा गलाने अथवा वैसे उद्योग जिनमें कच्चा माल शीघ्र नष्ट होने वाला होता है, जैसे फल-डिब्बा बंदी उद्योग, संसाधन की प्रक्रिया कच्चे माल के स्रोत के निकट ही की जाती है।

ऊर्जा के स्रोत

ऐतिहासिक दृष्टि से ऊर्जा के स्रोतों का उद्योगों की अवस्थिति पर अधिक प्रभाव होता था। आज भी उद्योग तथा कोयला क्षेत्र के बीच गहरा सहसंबंध पाया जाता है। अधिक मात्रा में ऊर्जा की खपत करने वाले उद्योगों, जैसे इलेक्ट्रो-रासायनिक और इलेक्ट्रो-धात्विक उद्योगों को आज भी विद्युत उत्पादक स्रोतों के निकट स्थापित किया जाता है। किंतु अवस्थिति कारक के रूप में आज इनका महत्त्व कम हो रहा है, क्योंकि ऊर्जा-दक्षता में समुचित सुधार हुआ है। अठारहवीं शताब्दी में जहाँ 1 टन कच्चा लोहा गलाने में 8 से 10 टन कोयले की आवश्यकता पड़ती थी, आजकल यह मात्रा 1 टन ही रह गई है। इसके अतिरिक्त विद्युत-ग्रिडों तथा तेल एवं प्राकृतिक गैस की पाइप लाइनों के विकास ने आज एक अवस्थिति कारक के रूप में ऊर्जा स्रोत के महत्त्व को कम कर दिया है।

जल

जल का उपयोग अधिकांश औद्योगिक संयंत्रों में प्रक्रमण, भाप निर्माण या मशीनों को ठंडा करने के लिए होता है। अतएव उद्योगों की अवस्थिति का निर्णय करते समय मात्रा तथा गुणवत्ता के रूप में जल आपूर्ति महत्त्वपूर्ण कारक है। उद्योगों के लिए जल की आवश्यकता में समुचित विभिन्नता पाई जाती है। कुछ उद्योगों में अधिक जल की आवश्यकता होती है, जैसे लोहा-इस्पात उद्योग में एक टन इस्पात उत्पादन में 2 लाख लीटर जल लगता है। इसके विपरीत इलेक्ट्रॉनिक उद्योग में बहुत ही कम पानी चाहिए। तथापि, किसी क्षेत्र में एक उद्योग की अवस्थिति के लिए जल की कमी महत्त्वपूर्ण अवरोधक हो सकता है।

श्रमिक बाजार की उपलब्धता

यह भी एक महत्त्वपूर्ण अवस्थितिक कारक है। न केवल उपलब्ध श्रमिकों की संख्या बल्कि उनकी गुणवत्ता में भी बहुत अंतर पाया जाता है। उदाहरण के लिए, हीरे तराशने तथा पॉलिश करने के लिए दक्ष श्रमिकों की आवश्यकता होती है। भारत के सूरत नगर में हीरे की कटाई तथा पॉलिश करने का कार्य इसीलिए होता है क्योंकि इस कार्य में दक्ष श्रमिक वहाँ उपलब्ध हैं।

सुप्रबंध की उपलब्धता

यह भी उद्योगों की अवस्थिति के लिए एक महत्त्वपूर्ण कारक होता है। उदाहरण के लिए, आज यह जानना महत्त्वपूर्ण है कि उद्योग के लिए चुने गए स्थल क्या अच्छे प्रबंधकों को आकर्षित करने योग्य हैं अथवा नहीं ?

पूँजी

यह एक अन्य महत्त्वपूर्ण अवस्थितिक कारक है क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इसमें कम गतिशीलता पाई जाती है। अशांत क्षेत्र, जहाँ अधिक खतरे हैं तथा उत्पादन अनिश्चित है, पूँजी के लिए सामान्यत: कम आकर्षक होते हैं। तथापि बैंकिंग सेवाओं के विकास से एक देश के भीतर पूँजी अब अधिक गतिशील हो गई है।

सरकारी नीतियाँ

सरकारें कुछ निश्चित क्षेत्रों में विकास को प्रोत्साहित अथवा नियंत्रित करती हैं। आर्थिक तथा सामाजिक अनुचिंतन (विचार) सरकारी-निर्णयों को प्रभावित करने वाले महत्त्वपूर्ण कारक होते हैं। एक सरकार का यह भी कर्त्तव्य होता है कि देश के संसाधनों का प्रयोग सर्वोत्तम लाभ के लिए हो तथा राष्ट्रीय संपत्ति के वितरण में असमानता न हो। इसी भाँति राजनीतिक एवं रणनीतिक विचारों का भी औद्योगिक अवस्थिति पर सशक्त प्रभाव पड़ता है। प्रादेशिक विषमताओं को कम करने के लिए बहुत से देशों द्वारा औद्योगिक अवस्थिति हेतु कुछ निश्चित क्षेत्रों का सीमांकन कर दिया गया है।

पर्यावरण

किसी क्षेत्र का भौतिक आकर्षण एक महत्त्वपूर्ण कारक है। उद्योगों की स्थापना करते समय रहन-सहन की समुचित सुविधाओं को भी वरीयता दी जाती है। उदाहरणार्थ, संयुक्त राज्य अमेरिका में, अनुकूल जलवायु के कारण वायुयान उद्योग को देश के दक्षिणी पश्चिमी भाग पर स्थानांतरित कर दिया गया है। गर्म जलवायु के कारण इस प्रदेश में हैंगर (विमान शालाओं) के तापन का खर्च कम है।

औद्योगिक जड़त्व

बहुत से उद्योग आरंभिक सुविधाओं के समाप्त हो जाने पर भी एक निश्चित अवस्थिति पर बने रहते हैं। आधारी संरचना की सुविधाओं, जैसे परिवहन और सेवाएँ, गतिहीन भौतिक पूँजी जैसे भवन आदि की उपलब्धता औद्योगिक जड़त्व को प्रोत्साहित करता है तथा इससे नए उद्योग आकर्षित होते हैं। कुछ उद्योग अवस्थिति के अगुआ होते हैं, क्योंकि वे या तो दूसरे उद्योगों को कच्चा माल प्रदान करते हैं अथवा इन्हें कलपुर्जों की आपूर्ति हेतु विशिष्ट फर्मों की आवश्यकता होती है।

मानव कारक

अनेकों अनुचिंतनों या विचारों में से अंतिम निर्णय मानव द्वारा ही लिया जाता है। इस प्रकार उनके व्यक्तिगत चयन अवस्थितिक निर्णयों को प्रभावित करते हैं।

संसार के कुछ महत्त्वपूर्ण उद्योग

विनिर्माण का विश्व अर्थव्यवस्था में महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। संसार के कुल औद्योगिक उत्पादों में 50 प्रतिशत से अधिक की भागीदारी सम्मिलित रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान तथा जर्मनी की है (चित्र 6.1)। संसार के कुछ अति महत्त्वपूर्ण विनिर्माण उद्योगों में लोहा इस्पात उद्योग, वस्त्र निर्माण, मोटर कार उद्योग, पेट्रोरसायन एवं इलेक्ट्रॉनिक्स हैं। यहाँ पर हम लोहा तथा इस्पात एवं पेट्रोरसायन के वितरण प्रतिरूप का अध्ययन करेंगे।

लोहा एवं इस्पात उद्योग

लोहा विशिष्ट चुंबकीय गुण वाला एक अपेक्षाकृत सघन धातु है। यह पृथ्वी पर सबसे अधिक मात्रा में पाई जाने वाली धातुओं में से एक है। किंतु यह प्रकृति में स्वतंत्र (शुद्ध) रूप में नहीं पाई जाती बल्कि अयस्क या यौगिक रूप में मिलती हैं। लौह अयस्क को कोक (कार्बन) और चूना पत्थर के साथ मिलाकर झोंका भट्टी में पिघलाने पर लोहा प्राप्त होता है।

अयस्क से अलग किए गए पिघले लोहे को ठंडा करके पिग आयरन या कच्चा लोहा बनाया जाता है अथवा इसे इस्पात बनाने में प्रयोग करते हैं। लोहा अपने शुद्ध रूप में मुलायम होता है तथा सामान्यत: अभियांत्रिकी पदार्थ के रूप में उपयोगी नहीं होता है। इसमें कार्बन की कुछ मात्रा लगभग
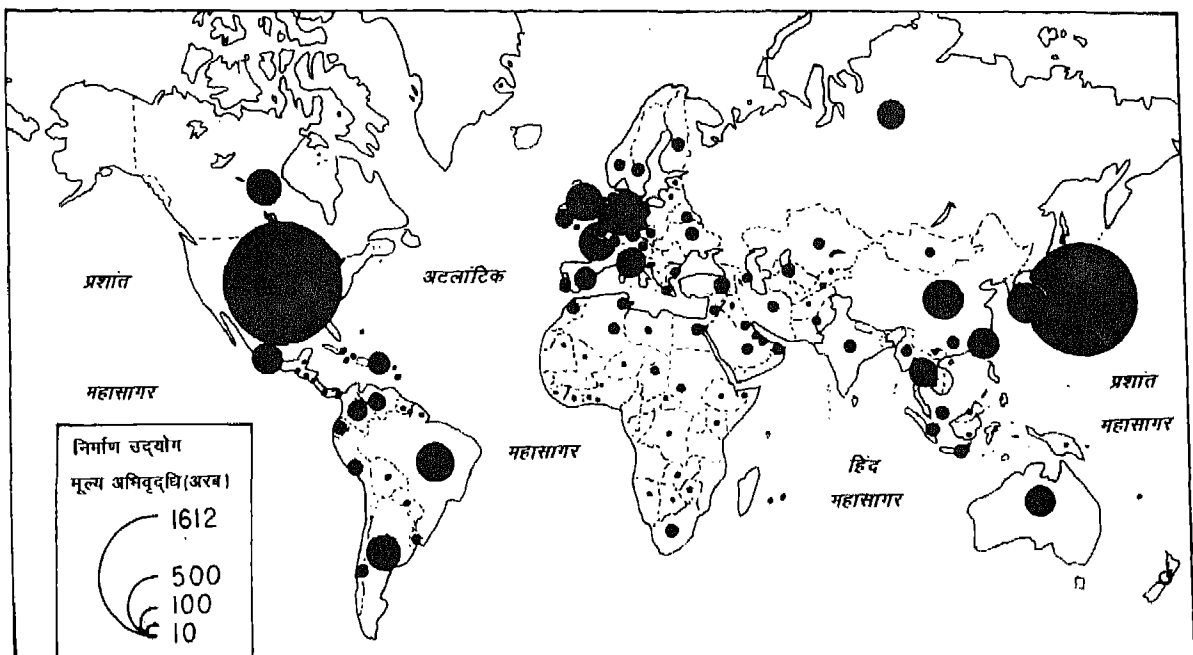
चित्र 6.1 विश्व : विनिर्माण उद्योग का वितरण।

2 प्रतिशत तक एवं अन्य सशक्तिकरण धातुएँ जैसे निकिल या मैंगनीज मिलाकर इसे इस्पात में बदला जाता है, जो बहुत मजबूत होता है। इसे पीटकर विभिन्न आकार दिया जा सकता है। इससे इसकी उपयोगिता बढ़ जाती है। यह पूरे संसार में आधारी संरचना एवं उद्योगों के निर्माण में सर्वाधिक विस्तृत रूप में प्रयोग की जाने वाली धातु है। लोहे का उपयोग सुई से लेकर रेल की पटरी तक, ट्यूब, तार, भारी मशीनें तथा टैंकर आदि लगभग सभी प्रकार की वस्तुओं के निर्माण में किया जाता है। इसके महत्त्व का अनुमान इसके उत्पादन से लगाया जा सकता है, जो लगभग 80 करोड़ टन है, जबकि द्वितीय महत्त्वपूर्ण अभियांत्रिक धातु एल्युमिनियम का उत्पादन, केवल 2 करोड़ टन ही है।

लोहा इस्पात उद्योग अन्य सभी उद्योगों को आधार प्रदान करता है, इसलिए इसे *आधारभूत उद्योग* भी कहा जाता है। इसे भारी उद्योग भी कहा जा सकता है क्योंकि इसमें भारी कच्चे मालों का अधिक मात्रा में प्रयोग होता है तथा इसके उत्पाद भी भारी होते हैं।

औद्योगिक क्रांति से लोहा तथा इस्पात उद्योग में तीव्र विकास आया क्योंकि इस धातु का मूल्य कम था तथा अभियांत्रिक पदार्थ के रूप में इसकी उपयोगिता व्यापक थी। चूँकि यह उद्योग भारी तथा अधिक स्थान घेरने वाले कच्चे मालों जैसे, कोयला, लौह अयस्क, मैंगनीज और चूना पत्थर पर आधारित था, अतः इसका विकास अधिकांशतः खनन क्षेत्रों में और उनके आसपास अथवा उन स्थानों पर हुआ जहाँ इन्हें सरलतापूर्वक लाया जा सके।

संयुक्त राज्य अमेरिका में महान झीलों का क्षेत्र तथा अटलांटिक तट; यूनाईटेड किंगडम का उत्तरी, उत्तरी-पूर्वी एवं मध्यवर्ती क्षेत्र, पश्चिमी यूरोप में फ्रांस, बेल्जियम, लोरेन-लग्ज़मबर्ग-सार तथा रूर; यूक्रेन; रूस का यूराल प्रदेश; एवं भारत में छोटानागपुर आदि संसार के कुछ महत्त्वपूर्ण लोहा तथा इस्पात उत्पादक क्षेत्र हैं। इन क्षेत्रों में उद्योगों की अवस्थिति का प्रमुख कारण महत्त्वपूर्ण खनिज अयस्कों का पाया जाना है।

विकसित अर्थव्यवस्थाओं में परंपरागत उद्योगों जैसे लोहा तथा इस्पात का तेजी से ह्रास हो रहा है। विनिर्माण उद्योगों में लोहा एवं इस्पात से जुड़े रोजगारों में लोगों की संख्या 1956-1982 के बीच लगभग 1,30,000 और कोयला खदानों में 12,000 घटी थी।

पेट्रो रसायन उद्योग

खनिज तेलों के परिष्करण के साथ ही, उन केंद्रों के पास बड़ी संख्या में पेट्रोलियम पर आधारित उद्योगों का विकास हुआ है जो वहाँ उपलब्ध आधारी संरचना की सुविधाओं का उपयोग करते है। सामान्यतः ऐसे संकुल बृहत् हैं तथा बाजार अथवा पत्तनों के समीप अवस्थित हैं। खनिज तेल पर आधारित परिष्करणशालाओं के निकट अवस्थित कुछ सामान्य उद्योगों में उर्वरक, प्लास्टिक और कृत्रिम रेशे जैसे, रेयान मुख्य हैं।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद, उत्तर अमेरिका तथा यूरोप में पेट्रोरसायन उद्योगों का विकास हुआ। लैटिन अमेरिकी देशों तथा पश्चिमी एशिया से आयातित खनिज तेलों पर आधारित अधिकांश ऐसे संकुल संयुक्त राज्य अमेरिका में समुद्र तट पर स्थापित किए गए हैं। खनिज तेलों का परिवहन बड़े-बड़े टैंकरों तथा पाइप लाइनों द्वारा देश के आंतरिक स्थानों तक होता है। शिकागो, टोलेडो, फिलाडेलफिया, डेलावेयर एवं लास एंज़िल्स में बृहत् आकार के पेट्रोरसायनिक संकुल स्थापित किए गए हैं।

यूरोप के पेट्रोरसायन संकुलों की अवस्थिति मुख्य रूप से बाजारों के निकट है। मुख्य संकुलों की अवस्थिति दक्षिणी उत्तर सागर तथा इंग्लिश चैनल के तटीय क्षेत्र में (ऐंटवर्प, रॉटरडम तथा साउथैंपटन), जर्मनी के रूर क्षेत्र, फ्रांस में लीहाव्रे, रोविन तथा मार्सेल्स क्षेत्र हैं। ऐसे अनेक संकुल मध्यवर्ती एशियाई गणराज्यों, रूस, पश्चिमी एशिया (अबादान तथा रास तनूरा सऊदी अरब में तथा मीना-अल-अहमदी कुवैत में) तथा भारत (ट्रांबे, वड़ोदरा तथा बोंगाइगाँव) में स्थित हैं।

परिवर्तनशील प्रवृत्तियाँ

प्रारंभ में वर्णित अवस्थितिक कारकों का सभी उद्योगों के लिए समान महत्त्व नहीं है। विगत वर्षों में विशेषतः औद्योगिक विकसित विश्व में इन कारकों के महत्त्व में निरंतर कमी आई है। हाल के वर्षों में, अवशिष्ट (व्यर्थ पदार्थों) में कमी करके, पुनर्चक्रण, प्रतिस्थापन एवं विकल्पों द्वारा ऊर्जा तथा कच्चे मालों की दक्षता में हुई वृद्धि ने इन क्षेत्रों में पर्यावरण को अधिक टिकाऊ बनाने की प्रक्रिया में सार्थक योगदान किया है। लकड़ी काटने, खनन और लोहा-इस्पात जैसे भारी उद्योग जो कभी आर्थिक विकास के लिए बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण थे, आज इतने महत्त्व के नहीं हैं।

निरौद्योगीकरण

निर्माण उद्योगों के ह्रास को निरौद्योगीकरण कहा जाता है। विकसित देशों में निरौद्योगीकरण के लिए उत्तरदाई कारक निम्नलिखित हैं:

- अधिकांश निर्माण उद्योगों में मनुष्य के स्थान पर मशीनों का प्रयोग;
- विदेशों में अत्यंत सस्ती दर पर उत्पन्न औद्योगिक उत्पादों से प्रतिस्पर्धा;
- निम्न श्रमिक उत्पादकता (प्रति व्यक्ति उत्पादन) तथा नई मशीनों के लिए निवेश में कमी के फलस्वरूप इन उत्पादों का मूल्य अधिक ऊँचा होना;
- उच्च योग्यता प्राप्त लोगों द्वारा तृतीयक तथा चतुर्थक क्षेत्र के कार्यों को वरीयता देना;
- उच्च ब्याज दर के कारण विदेशों से खरीदी जाने वाली वस्तुओं का मँहगा होना।

आधुनिक औद्योगिक क्रियाकलाप एवं इसके स्थानिक वितरण में कई प्रकार के परिवर्तन हुए हैं। इसे विकास प्रक्रिया के संदर्भ में अधिक अच्छी तरह से समझा जा सकता है। डब्ल्यू अलोंसों (1980) ने विकास में 'पाँच घंटी आकृतियों' (फाइव बेल शेप्स इन डेवलपमेंट) की बात की है। उनका अवलोकन था कि एक विकास की अवधि में बहुत से लक्षण एक ही दिशा में बढ़ते हुए पहले शीर्ष और फिर बाद में गर्त बनाते हैं। ये लक्षण इस प्रकार हैं : (क) आर्थिक विकास दर; (ख) सामाजिक असमानता का स्तर; (ग) क्षेत्रीय असमानता का स्तर; (घ) स्थानीय या भौगोलिक संकेंद्रण का स्तर (कुछ केंद्रों पर ही नगरीय औद्योगिक वृद्धि); (ड.) जनांकिकीय संक्रमण में जनसंख्या की वृद्धि। ये सभी पाँचों लक्षण यद्यपि आपस में अंतर्संबंधित हैं, इनमें एक ही साथ उतार या चढ़ाव नहीं आता है। उनके अनुसार भौगोलिक संकेंद्रण पहली प्रक्रिया थी, जिसके बाद आर्थिक विकास तथा उसके बाद सामाजिक एवं प्रादेशिक असमानता आई।

इस प्रकार विकास की प्रक्रिया में संकेंद्रणों का सार्थक मूल्य है। अर्थव्यवस्था में विकास तथा वैज्ञानिक व प्रौद्योगिकी उन्नति के फलस्वरूप उद्योगों की संरचना तथा स्वरूप में परिवर्तन आया है। उदाहरणार्थ, पश्चिम जर्मनी के वस्त्र उद्योग में द्वितीय विश्व युद्ध से 1970 के दशक के अंत तक सतत वृद्धि देखी गई थी। किंतु अल्प विकसित देशों में, जहाँ श्रम लागत कम थी और श्रम कानून ढीले थे, इस उद्योग का स्थानांतरण हुआ जिसके फलस्वरूप यहाँ वस्त्र उद्योगों का ह्रास हुआ।

इस प्रकार विकसित देशों के पास उन्नत पुर्जों वाले उद्योगों को ही रखा जा रहा है जबकि निम्न प्रौद्योगिकी युक्त श्रमिक प्रधान इकाइयों को निर्धन देशों को निर्यात किया जा रहा है। 1980 के दशक के प्रारंभिक वर्षों में अवलोकित इस प्रकार के परिवर्तन को नवीन अंतर्राष्ट्रीय श्रम विभाजन कहा गया। इसका अर्थ है कि एक ओर जब प्रौद्योगिकी परिवर्तन जारी था तथा नए केंद्रों में नए उद्योगों की स्थापना हो रही थी, तब अल्प माँग वाले परिधि उद्योगों को सीमांत क्षेत्रों में स्थापित किया गया। यदि भूतकाल में जर्मनी में इस्पात बनाने के लिए ब्राजील ने लौह-अयस्क का उत्पादन किया था, तो आज ब्राजील इस्पात बना सकता है और जर्मनी इसके आधार पर अभियांत्रिकी उत्पाद, जैसे कार बनाएगा।

दूसरा परिवर्तन बड़े कारखानों के स्थानों पर छोटी इकाइयों का बहुत बड़े क्षेत्रों में बिखराव है। उन्नीसवीं शताब्दी के कुछ कारखानों का विस्तार बहुत बड़े क्षेत्रों पर हुआ था। उनमें कई हजार लोगों को रोजगार प्राप्त था। उदाहरणार्थ, डगलास लांग बीच के वायुयान कारखाने में एक लाख श्रमिक तथा चीन के

पुनरौद्योगीकरण

पुनरौद्योगीकरण का तात्पर्य नए उद्योगों के कुछ खंडों का विकास उन स्थानों और क्षेत्रों में करना है, जहाँ परंपरागत उद्योगों का ह्रास हुआ है। अत्यधिक विकसित देशों में पुनरौद्योगीकरण की निम्न विशेषताएँ हैं :

- उच्च-प्रौद्योगिकी फर्मों की वृद्धि-ये ऐसे फर्म हैं जहाँ पर उच्च वैज्ञानिक शोध एवं विकास पर आधारित अति उन्नत उत्पादों का उत्पादन होता है, जैसे दवाइयाँ तथा सूक्ष्म इलेक्ट्रॉनिक्स के सामान;
- ऐसे नए फर्म जो बहुधा उच्च कुशलता वाले कम श्रमशक्ति के आधार पर विनिर्माण की स्थापना करते हैं;
- वे नए फर्म अपेक्षाकृत अल्प औद्योगिक क्षेत्रों में अथवा महानगरों के सीमांतों पर अवस्थित हैं।

टिएनशान में स्थित इस्पात कारखाने वाले संकुल में 2 लाख से अधिक लोग कार्यरत थे। इनके स्थान पर अब छोटे इस्पात संयंत्र खोले जा रहे हैं।

नई प्रवृत्तियों को कुछ ऐसे औद्योगिक उत्पादनों में देखा जा सकता है जिनका संगठन अधिक लचीले तरीके से होता है। लचीलेपन के दो मुख्य प्रकार हैं : लोचपूर्ण उत्पादन, तथा लोचपूर्ण विशिष्टीकरण। इन दोनों ही पद्धतियों में उत्पादन की थोड़ी-थोड़ी मात्रा को एक बार में किफ़ायतपूर्वक संचालित किया जाता है, जिससे आवश्यक होने पर वस्तुओं में तत्काल परिवर्तन किया जा सकता है, जैसे डिजाइन या फिर विनिर्माण में प्रयुक्त प्रक्रम। संसार के उन्नत देशों में लोकप्रिय इस पद्धति को पोस्ट फोर्डिज्म (उत्तर-फोर्डिवाद) कहा जाता है, जो फोर्डिज्म (फोर्डिवाद) के विपरीत की स्थिति है। हेनरी फोर्ड ने उत्तर अमेरिकी कार उद्योग को विकसित करने के लिए बड़े पैमाने के उत्पादन, श्रम का अत्यधिक विभाजन तथा उच्चस्तरी उत्पादों के निर्माण की विचारधारा को कार्य रूप में परिणत किया। इसने बहुत से उद्योगों के लिए बहुत लंबे समय तक एक मॉडल के रूप में सहायता की। इसे *फोर्डिज्म* या *फोर्डवाद* कहा जाता है।

लोचयुक्त उत्पादन में स्वचालित मशीनों का उपयोग होता है जिनकी सहायता से कोई डिजाइन तथा डिजाइनों में तीव्र परिवर्तन (कंप्यूटर के सहयोग से डिजाइन बनाना, सी.ए.डी) करना संभव होता है। विनिर्माण में प्रयुक्त मशीनें कंप्यूटर नियंत्रित हो सकती हैं, अत: उत्पादन को लोचदार कहा गया है। लोचदार उत्पादन का एक बहुत प्रचलित स्वरूप 'जस्ट इन टाइम' नामक प्रणाली है। उत्पादन के अवयवों को कारखाने में इकट्ठा नहीं किया जाता अपितु उन्हें माँग के आधार पर निकटवर्ती कारखानों से लाया जाता है ताकि अगले कुछ घंटों में होने वाले उत्पादन की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। जापान के टोयोटा नगर में स्थित टोयोटा कार विनिर्माण कारखाना, इस प्रकार के उत्पादन का एक विशिष्ट उदाहरण है।

इस प्रणाली का लाभ इसमें कम बर्बादी होना है क्योंकि खराब उत्पादों की पहचान तुरंत हो सकती है और उनकी आपूर्ति बंद कर दी जाती है । अत: उत्पादों की गुणवत्ता को नियंत्रित करना सरल होता है। इसके अतिरिक्त, उत्पादन के प्रकारों तथा मात्रा में लोच एवं माल सूची की कीमत का कम होना अन्य लाभ हैं। इस प्रकार की प्रणाली स्पष्ट रूप से परिवहन एवं संचार द्वारा परस्पर जुड़े कारखानों के जाल पर निर्भर करती है। इस प्रकार की प्रणाली का एक निश्चित स्थानिक स्वरूप होता है जिसमें आश्रित तथा सहयोगी क्रियाकलापों से मिलकर एक प्रकार का औद्योगिक क्षेत्र बनता है।

हाल के दशकों में जापानी मॉडल अन्य देशों को भी हस्तांतरित कर दिया गया है। एक नए कार्य-प्रारूप एवं कार्य संस्कृति को स्थापित करने में पुरानी औद्योगिक पेटियों के समीप नए औद्योगिक क्षेत्रों को वरीयता मिली है। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका में, जनरल मोटर्स, फोर्ड एवं क्राइसलर द्वारा बाह्य मध्य-पश्चिम क्षेत्र में उद्योगों की पुन: अवस्थिति एक महत्त्वपूर्ण लक्षण है। फिर भी टोयोटा प्रतिरूप का सभी कंपनियाँ अनुसरण नहीं कर रही हैं। बहुत से देशों ने कलपुर्जो के उत्पादन में विशिष्टीकरण प्राप्त किया है, जिन्हें उन कारखानों में भेजा जाता है जहाँ इन्हें उत्पादों को अंतिम रूप दिया जाता है, जैसे टेलीविजन, मोटरगाड़ी आदि।

लोचयुक्त विशिष्टीकरण ऐसा लोचदार उत्पादन तंत्र है जिसमें ऊर्ध्वाधर और क्षैतिज दोनों ही प्रकार की सहलग्नता सम्मिलित है। ऊर्ध्वलग्नता के अंतर्गत पहले स्तर पर अवयवों के उत्पादन हैं तथा दूसरे स्तर पर संकलनकर्त्ता हैं। इस प्रणाली में एक ही प्रकार के उद्योग की अनेकों इकाइयाँ (फर्म) विशिष्ट वस्तुओं के उत्पादन में संलग्न होती हैं। ऐसी प्रणाली में और अधिक लोचनीयता कार्य को विभिन्न विशेषीकृत फर्मों में बाँटने की सुविधा के कारण आती है। यदि व्यापार करने वाली निजी इकाई को बहुत बड़ी मात्रा में सामान की पूर्ति का आर्डर मिला है और वह सारा सामान एक साथ देने में असमर्थ

स्वच्छंद उद्योग-कारक जो अवस्थिति के स्वतंत्र चयन के पक्षधर हैं:

- हल्के उद्योग जो बहुधा कच्चे माल के स्थान पर उत्पादन में अवयवों का उपयोग करते हैं;
- ऊर्जा की आवश्यकता सामान्यत: बिजली के रूप में राष्ट्रीय ग्रिड से प्राप्त होती हैं;
- अंतिम उत्पाद छोटा होता है और अक्सर सस्ता तथा सरलतापूर्वक लाया जाया जा सकता है;
- ये प्रदूषण रहित उद्योग हैं जिन्हें आवासीय क्षेत्रों के निकट लगाया जा सकता है;
- इनकी अवस्थिति सड़क मार्गों के निकट होना आवश्यक है।

उच्च प्रौद्योगिकी उद्योगों के उदाहरण

इलेक्ट्रॉनिक उपकरण	*उपभोक्ता इलेक्ट्रॉनिक्स*
• कंप्यूटर	• रंगीन और मोनोक्रोम टेलीविजन रिसीवर
• दूरसंचारक	• रेडियो रिसीवर
• औद्योगिक नियंत्रण प्रणाली	• वीडियो कैसेट रिकॉर्डर
• परीक्षण तथा मापन उपकरण	• ऑडियोटेप रिकॉर्डर
• कार्यालय उपकरण	• रिकार्डप्लेयर
• वायु आकाश तथा सैनिक उपकरण	• हाई-फाई उपकरण (टनर तथा एंप्लीफायर)
• उपभोक्ता उत्पादों में लगी वस्तुएँ	• पाकेट केल्कुलेटर
• मोटरगाड़ियाँ, धुलाई की मशीनें, बिजली के चूल्हे आदि	• इलेक्ट्रॉनिक खेल

है तो वह उसी तरह की अन्य सहयोगी फर्मों से सामान लेकर आर्डर की पूर्ति कर सकती है। इस प्रकार एक संस्था अपने अनुबंध के आधार पर अपनी सहयोगी संस्था से उप अनुबंध कर सकती है।

नए उद्योगों के स्थान

विगत कुछ दशकों में उच्च प्रौद्योगिक क्रियाओं का तीव्रता से विस्तार हो रहा है। अत्यंत परिष्कृत उत्पादों को विकसित करने में वैज्ञानिक शोध व विकास का बहुत योगदान होता है। ये उद्योग अपने उत्पादों को बाजार की माँग के अनुरूप बड़ी तेजी से सुधारते रहते हैं तथा उच्च कुशलता प्राप्त श्रमिकों की भर्ती करते हैं। ऐसे उद्योगों को *स्वच्छंद उद्योग* कहते हैं क्योंकि वे अवस्थिति का चुनाव करने में अपेक्षाकृत स्वतंत्र होते हैं।

इस प्रकार के कुछ उद्योगों की अत्यधिक वृद्धि हुई है। संयुक्त राज्य अमेरिका में कंप्यूटर सॉफ्टवेयर में काम करने वाले लोगों की संख्या 1970 से 2000 के बीच लगभग चार गुनी बढ़ी है।

प्रौद्योगिक-ध्रुव

इन उच्च प्रौद्योगिकी क्रियाकलापों के अवस्थितिक प्रभाव विकसित औद्योगिक देशों में पहले से ही देखने को मिल रहे हैं। सर्वाधिक ध्यान देने योग्य घटना नवीन प्रौद्योगिकी संकुलों या प्रौद्योगिक ध्रुव का उद्भव होना है। एक *प्रौद्योगिक-ध्रुव* एक संकेंद्रित क्षेत्र के भीतर अभिनव प्रौद्योगिकी व उद्योगों से संबंधित उत्पादन के लिए नियोजित विकास है। प्रौद्योगिक-ध्रुव में विज्ञान अथवा प्रौद्योगिकी पार्क, विज्ञान नगर (साइंससिटी) तथा दूसरे उच्च तकनीक औद्योगिक संकुल सम्मिलित किए जाते हैं।

उच्च तकनीकी औद्योगिक क्षेत्र एवं प्रौद्योगिकी पार्क

स्वच्छंद उद्योग की प्रवृत्ति उद्देश्य आधारित औद्योगिक क्षेत्र अथवा प्रौद्योगिकी पार्कों के रूप में कस्बों व नगरों की सीमाओं पर स्थापित होने की होती हैं जैसा लंदन और टोकियो में है। ये स्थान, नगर के आंतरिक भागों की तुलना में कई प्रकार के लाभ प्रदान करते हैं :

- एक मंजिले कारखानों तथा भविष्य में विस्तार के लिए स्थान,
- नगर-परिधि पर सस्ता भू-मूल्य,
- मुख्य सड़कों तथा वाहन मार्गों तक गम्यता,
- सुखद पर्यावरण (बहुधा एक हरित क्षेत्र पर अवस्थित), तथा
- निकटवर्ती आवासीय क्षेत्रों एवं पड़ोसी ग्रामों से प्रतिदिन आने-जाने वाले लोगों से श्रम की आपूर्ति

सिलिकन घाटी-एक प्रौद्योगिक संनगर

सिलिकन घाटी का विकास फ्रेडरिक टरमान के कार्यों का प्रतिफल है। वे एक प्रोफेसर थे और बाद में कैलिफोर्निया के स्टैनफोर्ड विश्व विद्यालय (सांता क्लारा काउंटी के उत्तरी पश्चिमी भाग में पालो आल्टो नगर स्थित) के उपाध्यक्ष बने। वर्ष 1930 में टरमान ने अपने इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग के छात्रों को उसी क्षेत्र में रहकर अपने कारखाने स्थापित करने के लिए प्रोत्साहित किया। ऐसी पहली कंपनी विलियम ह्यूलिट और डेविड पैकर्ड द्वारा विश्वविद्यालय परिसर के निकट एक गेराज में स्थापित की गई थी। आज यह विश्व की एक सबसे बड़ी इलेक्ट्रॉनिक फर्म है। 1950 के दशक के अंत में टरमान ने स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय को ऐसे नवीन उच्च तकनीकी फर्मों के लिए एक विशेष औद्योगिक पार्क विकसित करने के लिए राजी किया। इसने अभिनव विचारों

और महत्त्वपूर्ण विशिष्टीकृत कार्यशक्ति (लोग) तथा उत्पादन संबंधी सेवाओं को विकसित करने के लिए एक *हाट हाउस* (संस्थान) का निर्माण किया। इसमें उच्च तकनीकी इलेक्ट्रॉनिक्स का सतत समूहन जारी है तथा इसने दूसरे उच्च तकनीकी उद्योगों को भी आकर्षित किया है। उदाहरणार्थ संयुक्त राज्य अमेरिका में जैव प्रौद्योगिकी में कार्यरत संपूर्ण रोजगार का एक तिहाई भाग कैलिफोर्निया में अवस्थित है। इसमें से 90 प्रतिशत से अधिक सैन फ्रांसिस्को खाड़ी क्षेत्र में स्थित हैं। आज स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय को आभारी कंपनियों द्वारा बहुत बड़ी मात्रा में दान राशि प्राप्त हो रही है जो प्रतिवर्ष करोड़ों डालर होती है।

विश्वविद्यालयों में शोधकार्य तथा उच्च तकनीकी क्रियाओं के बीच का संबंध ही इन उद्योगों की सफलता की कुंजी है। नए उद्योग जहाँ आपस में एक-दूसरे से तथा विश्वविद्यालय शोध विभागों से सहजीवी संबंधों पर टिके हैं, मुख्य कार्यकर्ता भी शीर्षस्थ विश्वविद्यालयों से जुड़े प्रौद्योगिकी संकुलों को सहयोग प्रदान करने की प्रवृत्ति रखते हैं। इससे उन्हें रोजगार बाजार तथा प्रचुर सामाजिक-सांस्कृतिक क्रियाकलाप का अवसर मिलता है। इन्हें शीघ्र ही 'एक सही स्थान' की ख्याति भी प्राप्त हो जाती है, जहाँ लोग रहना चाहते हैं।

ऐसे प्रौद्योगिक-ध्रुवों का दूसरे देशों में भी विकास हुआ है। किंतु जर्मनी को छोड़कर, उनमें से अधिकांश, बृहत् महानगरों (मेट्रोपोलिटन) जैसे लंदन, पेरिस, मिलान, टोकियो, शंघाई, ताइपेह, मास्को, सिंगापुर एवं साओ पालो के आस-पास ही केंद्रित हैं।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए:
   (i) द्वितीयक क्रियाकलाप किसे कहते हैं और उन्हें द्वितीयक क्यों कहा जाता है?
   (ii) विनिर्माण उद्योग किसे कहते हैं?
   (iii) उद्योगों के वर्गीकरण के आधार क्या हैं?
   (iv) आधारभूत और उपभोक्ता उद्योगों के दो-दो उदाहरण दीजिए।
   (v) लोहा-इस्पात उद्योग को आधारभूत उद्योग क्यों कहा जाता है?
   (vi) संयुक्त राज्य अमेरिका में पेट्रोरसायन संकुल अधिकतर तटों पर क्यों स्थित हैं?
   (vii) प्रौद्योगिक-ध्रुव किसे कहते हैं?
2. अंतर स्पष्ट कीजिए :
   (i) कुटीर उद्योग और बड़े पैमाने के उद्योग
   (ii) धात्विक और अधात्विक खनिज
   (iii) निरौद्योगीकरण और पुनरौद्योगीकरण
   (iv) लचीला उत्पादन और लचीला विशिष्टीकरण
3. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए :
   (i) छोटे पैमाने के उद्योग
   (ii) सिलिकन घाटी
4. उद्योगों की परंपरागत अवस्थिति को प्रभावित करने वाले कारकों की व्याख्या कीजिए।
5. लोहा इस्पात उद्योग तथा पेट्रोरसायन उद्योग के विश्व वितरण का वर्णन कीजिए।
6. आधुनिक औद्योगिक क्रियाकलापों की प्रमुख प्रवृत्तियों की व्याख्या विशेषरूप से विकसित औद्योगिक देशों के संदर्भ में कीजिए।
7. उच्च प्रौद्योगिकी उद्योग कई देशों में मुख्य महानगरों के परिधि क्षेत्रों की ओर क्यों आकर्षित हो रहे हैं, इसकी व्याख्या कीजिए।

भौगोलिक कुशलताएँ :

8. मानचित्रावली की सहायता से संसार के रेखामानचित्र पर निम्नलिखित स्थानों की स्थिति दिखाइए :
   (i) ग्रेट-लेक्स क्षेत्र में लौह एवं इस्पात केंद्र
   (ii) एंटवर्प, रॉटरडैम तथा सांउथैंपटन के पेट्रोरसायन संकुल।
   (iii) सिलिकन घाटी।

7 अध्याय

तृतीयक और चतुर्थक क्रियाकलाप

जैसा कि पहले विवेचन किया जा चुका है कि *तृतीयक क्रियाकलाप* अमूर्त सेवाओं से संबंधित हैं। इसमें मिस्त्री, प्लंबर, रसोइया, वकील, शिक्षक आदि के व्यवसाय सम्मिलित हैं। सेवाएँ, वे क्रिया कलाप हैं, जिनमें वस्तुओं का उत्पादन नहीं होता है। इस प्रकार वे पदार्थों के प्रसंस्करण (नई वस्तु निर्माण) में प्रत्यक्ष रूप से शामिल नहीं होतीं। अत: ये विनिर्माण से भिन्न हैं। विनिर्माण के उत्पादों को तो वस्तुओं के रूप में देखा जा सकता है लेकिन हम वकील या प्लंबर के उत्पादन का मापन कैसे कर सकते हैं? ऐसे उत्पादन का मापन असंभव है। इन्हें तो अप्रत्यक्ष तरीके से मजदूरी और वेतन के रूप में ही मापा जा सकता है। लेकिन कुछ सेवाएँ ऐसी हैं, जिनसे प्रत्यक्ष उत्पादन होता है। तुरंत भोजन (फास्ट-फूड) का अधिकृत विक्रेता इसका एक अच्छा उदाहरण है। फिर भी सेवाओं के उत्पादन का मापन, उत्पादन के स्वरूप के आधार पर नहीं किया जा सकता। विनिर्माण उत्पाद और सेवा उत्पाद एक-दूसरे से बिलकुल भिन्न हैं। सेवाओं से जो विशेषज्ञता मिलती है, उसका प्रत्यक्ष आधार कर्मचारियों का कौशल, अनुभव और ज्ञान होता है। इसके विपरीत विनिर्माण का आधार मशीनों को चलाने की तकनीक और उत्पादन की प्रक्रिया होती है।

सेवाएँ

आर्थिक विकास के लिए सेवाएँ बहुत महत्त्वपूर्ण हैं, जिनमें सामग्रियों की फुटकर बिक्री तथा सभी प्रकार की सेवाएँ- स्वास्थ्य और कल्याण, शिक्षा, अवकाश, मनोरंजन और वाणिज्यिक शामिल हैं। *वाणिज्यिक सेवाएँ* दूसरी कंपनियों की उत्पादकता या क्षमता में वृद्धि करती हैं। यही नहीं, ये उनके विशेष कामों के स्तर को भी यथावत् बनाए रखने में मदद करती हैं। विज्ञापन, कर्मचारियों का चयन और अधिकारियों का प्रशिक्षण इसके उदाहरण हैं। कुछ वर्ष पूर्व तक सेवा क्षेत्र की तुलना में वस्तुओं के उत्पादन पर अधिक ध्यान दिया जाता था। लेकिन विकसित अर्थ व्यवस्था में, सेवाओं पर आधारित विकास में बड़ी तेजी आई है। आँकड़ों से पता चलता है कि इन देशों के सेवा क्षेत्र में रोजगार के अवसरों में निरंतर वृद्धि हो रही है।

विकासशील देशों में भी विनिर्माण क्षेत्र की तुलना में सेवा क्षेत्र अधिक तेजी से बढ़ रहा है। राष्ट्रीय संपदा में भी इनके योगदान में वृद्धि हो रही है, लेकिन सेवाओं का लेखा-जोखा आज भी अच्छी तरह से नहीं रखा जाता। इसका कारण है कि लोग असंगठित सेवाओं में लगे हैं। असंगठित सेवाओं को अनौपचारिक क्षेत्र भी कहते हैं। ग्रामीण प्रवासी नगरों में आकर भारी संख्या में इसी अनौपचारिक क्षेत्र में कार्य करने लगते हैं। इन्हें बहुत कम मजदूरी दी जाती है। अकुशल होने पर तो उनकी मजदूरी और घट जाती है। इनके अंतर्गत गृहणियाँ और बाल-मजदूर भी हैं जिनकी सेवाओं का कोई हिसाब-किताब नहीं रखा जाता।

अधिकतर देशों में विकास की प्रक्रिया का एक निश्चित घटनाक्रम होता है। प्रारंभ में प्राथमिक क्षेत्र का वर्चस्व होता है। इसके बाद द्वितीयक क्षेत्र का महत्त्व बढ़ता है तथा अंतिम अवस्थाओं में तृतीयक और चतुर्थक क्षेत्र महत्त्वपूर्ण बन जाते हैं। कुछ देशों में विनिर्माण क्षेत्र में अवनति होने की प्रक्रिया को रोका गया है। उदाहरण के लिए जापान और जर्मनी अपने देश में स्थित कारखानों से ही विश्व बाजार के लिए सफलतापूर्वक वस्तुएँ बना रहे हैं। लेकिन इन देशों में भी अंततोगत्वा विनिर्माण में रोजगार के अवसर घटने लगते हैं तथा सकल घरेलू उत्पाद में उनका अनुपात कम हो जाता है। इस प्रक्रिया को सामान्यत: निरौद्योगीकरण कहा जाता है। देशों के विभिन्न प्रदेशों में भी निरौद्योगीकरण की इस प्रवृत्ति को देखा जा सकता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में सन् 1950 और 1960 में इस प्रकार की अवनति सबसे पहले न्यू इंग्लैंड में दिखाई

पड़ी थी। बाद में सन् 1970 में विनिर्माण की अवनति से मध्य अटलांटिक के वर्जीनिया, मैरीलैंड और डेलावेयर राज्य प्रभावित हुए थे। औद्योगिक मध्य पश्चिम ने इसका सामना 1980 में जाकर किया। वास्तव में इस प्रक्रिया को पहले से बताया जा सकता है। विनिर्माण अवनति की इस प्रक्रिया के कारण अनेक कुशल श्रमिक बेकार हो जाते हैं, संगठन बिखर जाते हैं और दफ्तरों मे ताले लग जाते हैं।

सेवाओं के बढ़ते हुए महत्त्व ने इसे उत्पादक अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में एक विशिष्ट स्थान दिला दिया है। अब सेवाएँ विनिर्माण या सामान्य लोगों की सहायक मात्र नहीं रह गई हैं। ये अब निर्यातक बन गई हैं। कुछ देशों, जैसे स्विटजरलैंड और यूनाइटेड किंगडम तथा कुछ प्रदेशों और नगरों को सेवा क्षेत्र में प्रतियोगी लाभ मिला हुआ है।

पुरानी विचारधारा के अनुसार उद्योगों के अवस्थिति में एक विशिष्ट भौगोलिक प्रतिरूप होता था। इसके विपरीत सेवा का वितरण जनसंख्या के वितरण से मेल खाता था। इस प्रकार लोहे और इस्पात उद्योग का एक निश्चित भूगोल था। अर्थात् उनकी अवस्थिति कुछ निश्चित स्थानों पर ही थी, जबकि बैंकों के दफ्तर थोड़ी सी जनसंख्या वाले नगरों में भी थे। इन सेवाओं में एक पदानुक्रम भी था। बड़े नगरों में उच्च क्रम की सेवाओं के केंद्र तथा छोटे नगरों में निम्न क्रम की सेवाओं के केंद्र होते थे। इन सेवाओं में आपसी तालमेल या संपर्क के लिए संकेंद्रण की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। लेकिन आजकल सेवाओं का संकेंद्रण होने लगा है। कुछ सेवाएँ नए प्रकार के उद्योगों की संरचनाओं एवं विज्ञापन और विपणन जैसी आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर विकसित हुई हैं। इनके अलग स्थानिक प्रतिरूप बन गए हैं। इनका एक विशिष्ट प्रतिरूप वैश्विक नगरों के रूप में दिखाई पड़ता है। ये नगर अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के संदर्भ में ही विकसित हुए हैं। इनके बारे में और अधिक जानकारी इसी अध्याय के अगले भाग में दी गई है।

सेवाओं के प्रमुख वर्ग निम्नलिखित हैं:

(i) वाणिज्यिक सेवाएँ : विज्ञापन, कानूनी सेवाएँ, जनसंपर्क और परामर्श

(ii) वित्त, बीमा, वाणिज्यिक और आवासीय भूमि और भवनों जैसी अचल संपत्ति का क्रय-विक्रय।

(iii) उत्पादक और उपभोक्ता को जोड़ने वाले थोक और फुटकर व्यापार तथा रख-रखाव, सौंदर्य प्रसाधक तथा मरम्मत के कार्य जैसी सेवाएँ।

(iv) परिवहन और संचार : रेल, सड़क, जहाज और वायुयान सेवाएँ, डाक-तार सेवाएँ।

(v) मनोरंजन: दूरदर्शन, रेडियो, फिल्म, और साहित्य।

(vi) विभिन्न स्तरीय प्रशासन : स्थानीय, राज्यीय तथा राष्ट्रीय प्रशासन, अधिकारी वर्ग, पुलिस, सेना तथा अन्य जन सेवाएँ।

(vii) गैरसरकारी संगठन : शिशु चिकित्सा, पर्यावरण, ग्रामीण विकास आदि लाभरहित सामाजिक क्रिया कलापों से जुड़े व्यक्तिगत या सामूहिक परोपकारी संगठन।

बीसवीं शताब्दी में कम जनसंख्या और विनिर्माण उद्योगों में रोजगार के अवसरों के घटने के बावजूद, विकसित देशों में सेवा क्षेत्र में रोजगार की तीव्र वृद्धि हुई है (चित्र 7.1 एवं 7.2)। विनिर्माण उद्योग की तुलना में, इसमें अधिक संख्या में महिलाएँ कार्यरत हैं। संसार भर में सेवा क्षेत्र में रोजगार के अवसरों की वृद्धि के अनेक कारण हैं।

विकसित देशों में प्रति व्यक्ति आय के बढ़ने से विभिन्न प्रकार की सेवाओं की माँग में बहुत वृद्धि हुई है। स्वास्थ्य, मनोरंजन और परिवहन ऐसी ही सेवाएँ हैं। समय के मूल्य में वृद्धि के कारण अनेक घरेलू कार्य बाजार से करवाए जाते हैं।

इसी प्रकार यूरोप, उत्तर अमेरिका और जापान में सकल घरेलू उत्पाद में चिकित्सा सेवाओं का अनुपात निरंतर बढ़ा है। वास्तव में ऐसी वृद्धि अत्यधिक औद्योगीकृत देशों की जनसंख्या में जनांकिकीय संरचना में परिवर्तन होने से हुई है। प्रौढ़ लोगों में चिकित्सा सुविधाओं की माँग अधिक है।
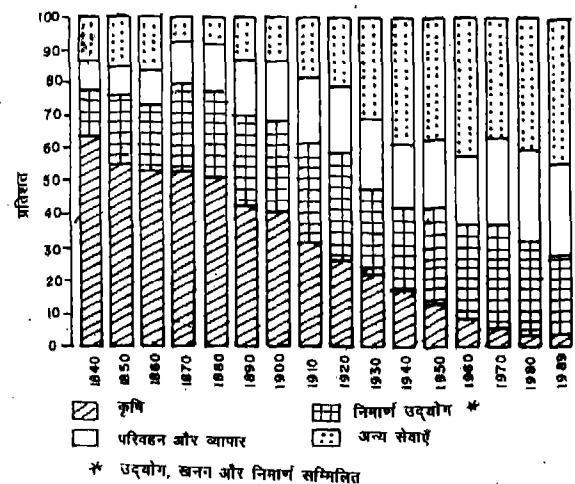
चित्र 7.1 : संयुक्त अमेरिका : आर्थिक खंडों में रोजगारों का हिस्सा
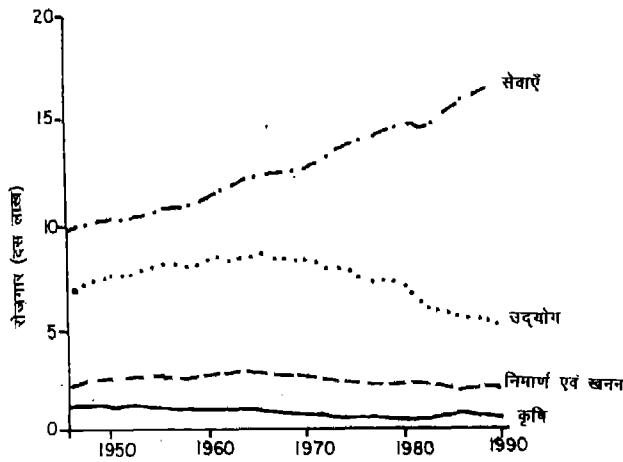
चित्र 7.2 : यूनाइटेड किंगडम : आर्थिक खंड में रोजगारों का हिस्सा

कार्य स्थलों पर साक्षरता, गणितीय और कंप्यूटर कौशलों की माँग में वृद्धि के साथ सभी स्तरों पर शैक्षिक सेवाओं की माँग भी बढ़ी है।

सेवा क्षेत्र की वृद्धि, अप्रत्यक्ष उत्पादन में लगे कामगारों के अनुपात में हुई वृद्धि को प्रदर्शित करता है। विनिर्माण उद्योगों में लगी अधिकतर कंपनियों को भी ऐसे प्रशासन तंत्र की आवश्यकता होती है, जो सूचनाओं का संग्रहण और संसाधन कर सकें और उत्पादन को दिशा देने वाले महत्त्वपूर्ण निर्णय ले सकें। इस प्रकार निर्णय लेने की जटिल प्रक्रिया में क्लर्कों, विपणन से जुड़े लोगों, शोधकर्ताओं, विज्ञापनकर्ताओं, जनसंपर्क विशेषज्ञों, लेखाधिकारियों, वित्त विशेषज्ञों और वकीलों की सहायता ली जाती है।

भूमंडलीकरण, उदारीकरण और निजीकरण के बावजूद सार्वजनिक क्षेत्र के आकार और भूमिका, दोनों में ही वृद्धि हो रही है। प्राय: सरकार ही सबसे अधिक लोगों को रोजगार देती है, क्योंकि यह लोगों को सुरक्षा, शिक्षा, स्वास्थ्य और सफाई तथा कानून व्यवस्था जैसी अनेक प्रकार की सेवाएँ प्रदान करती है। विकसित देशों में, देश के अंदर और बाहर सेवा निर्यात के ऊँचे उठते स्तर से भी सेवा क्षेत्रों में वृद्धि हो रही है। अनेक देश विदेशी ग्राहकों को सेवाएँ बेचकर भारी कमाई कर रहे हैं। विश्व स्तर पर सेवाओं का बड़े पैमाने पर व्यापार हो रहा है तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में इनका योगदान लगभग 20 प्रतिशत का है।

उच्च स्तरीय सेवाएँ, सूचना प्रवाह और वैश्विक नगर

अत्यधिक औद्योगिक देशों में सूचना पर आधारित भूमंडलीय अर्थव्यवस्था ने अधिक उन्नत और विशिष्ट सेवाओं को जन्म दिया है। ऐसी सेवाओं में मुख्य हैं- वित्त, बीमा, परामर्श, सूचना संग्रहण, सूचना सेवाओं का प्रबंधन, शोध तथा विकास और वैज्ञानिकों द्वारा नई वस्तुओं का निर्माण या पुरानी वस्तुओं में उपयोगी परिवर्तन। ये सेवाएँ सभी आर्थिक क्रियाकलापों की केंद्रबिंदु होती हैं। संक्षेप में इन सभी को ज्ञान उत्पादन और सूचना प्रवाह कह सकते हैं।

उन्नत दूरसंचार तंत्र के कारण, इन क्रियाकलापों का विस्तार सारे संसार में हो सकता है, लेकिन इनमें विस्तार और संकेंद्रण की प्रवृत्ति एक साथ दिखाई पड़ती है। जबकि क्रियाकलाप संसार भर में फैले हैं, उच्च स्तरीय क्रियाकलाप अभी भी कुछ देशों में संकेंद्रित दिखाई पड़ते हैं। वास्तव में, नगरीय केंद्रों के विभिन्न स्तरों का भी एक पदानुक्रम है। शक्ति और कौशल दोनों ही दृष्टि से उच्च स्तर के कार्य कुछ ही प्रमुख महानगरों में संकेंद्रित होते हैं। उदाहरण के लिए, न्यूयार्क, लंदन और टोकियो मिलकर पूरे संसार में वित्तीय व्यापार का संचालन करते हैं। ये नगर 24 घंटे निरंतर एक इकाई के रूप में लेन-देन के सौदे करते रहते हैं। अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व के सभी वित्तीय परामर्श और व्यापारिक सेवाओं पर इन तीन नगरों का संयुक्त रूप से वर्चस्व है।

कुछ सेवाओं का प्रबंधन कंपनियाँ स्वयं करती हैं। इस प्रकार कुछ कानूनी कार्य विज्ञापन या लेखा कार्य प्राय: कंपनियों के मुख्यालयों या उनसे जुड़े कार्यालयों में ही संपन्न किए जाते हैं। संसार में 500 बड़ी-बड़ी वैश्विक कंपनियाँ हैं। इनमें से 59 के मुख्यालय न्यूयार्क में, 37 के लंदन में, 34 के टोकियो में और 27 के पेरिस में हैं। जनसंख्या दृष्टि से काफी बड़े मैक्सिको सिटी में केवल एक का मुख्यालय है। भारत के महानगरों में तो इनमें से एक का भी मुख्यालय नहीं है।

जैसे-जैसे भूमंडलीय अर्थव्यवस्था का विस्तार होता है, इसमें नई इकाईयाँ जुड़ती जाती हैं और नए संबंध बनते जाते हैं। ऐसे नए प्रादेशिक केंद्र, जहाँ सेवाओं के क्रियाकलापों का संसाधन होता है, कई स्थानों पर विकसित हुए हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका (फीनिक्स, विचिटा), यूरोप (बार्सिलोना, नाइस, स्टूगार्ट) तथा एशिया (मुंबई, बैंकॉक और शंघाई) में ऐसे केंद्र हैं। लेकिन ऐसे क्रियाकलापों के विकेंद्रीकरण का संबंध मुख्य रूप से सहायक कार्यालयों से होता है। ऐसे कार्यालयों में बड़े

पैमाने पर लेन-देन के सौदों का संसाधन होता है। इनमें उन्हीं रणनीतियों का क्रियान्वयन किया जाता है जिन्हें भूमंडलीय नगरों में स्थित कंपनियों के केंद्रों और मुख्यालयों में तय किया जाता है। उदाहरण के लिए एक ही देश यूनाइटेड किंगडम में 500 सबसे बड़ी कंपनियों के मुख्यालयों में से 198 को लंदन में पुन: स्थापित किया गया है।

इन क्रियाकलापों को चलाने के लिए अद्र्ध कुशल कर्मचारियों को कार्यालयों में काम पर रखा जाता है। प्रौद्योगिकी का विकास होने पर इन्हें काम से हटा दिया जाता है। उन्नत सेवा के क्रियाकलापों के स्थानिक तंत्र का महत्त्व इसके संजाल में छिपा होता है और यह संजाल सूचना प्रवाह पर आधारित है। हांगकांग, शेनझेन, गुआंगझाऊ-झूहाई-मकाऊ संयुक्त रूप में, एक विराट नगर का रूप धारण करते जा रहे हैं। इक्कीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में ये प्रमुख वित्तीय और व्यापारिक केंद्र बन जाएँगे।

चतुर्थक क्रियाकलाप

विगत कुछ वर्षों में आर्थिक क्रियाकलाप बहुत विशिष्ट और जटिल हो गए हैं। परिणामस्वरूप, *चतुर्थक क्रियाकलापों* के रूप में एक नया वर्ग बन गया है। उत्पादों में भी, ज्ञान से संबंधित क्रियाकलापों जैसे शिक्षा, सूचना, शोध और विकास की सेवाओं का एक भिन्न वर्ग मान लिया गया है। चतुर्थक शब्द से तात्पर्य उन उच्च बौद्धिक व्यवसायों से है, जिनका दायित्व चिंतन तथा शोध और विकास के लिए नए विचार देना है। आर्थिक दृष्टि से अत्यधिक विकसित देशों में अभी तो थोड़े ही लोग चतुर्थक क्रियाकलापों में लगे हैं, लेकिन इनकी संख्या निरंतर बढ़ रही है। इस वर्ग की विशिष्टता लोगों का उच्च वेतनमान और पदोन्नति के लिए उनका बहुत अधिक गतिशील होना है।

विगत कुछ वर्षों में सूचना प्रौद्योगिकी में क्रांति के फलस्वरूप ज्ञान आधारित उद्योगों का विकास हुआ है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर आधारित औद्योगिक संकुलों में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। संयुक्त राज्य अमेरिका के बोस्टन, कमेसाचुसेट्स और कैलीफोर्निया में ऐसे औद्योगिक संकुलों को विज्ञान और प्रौद्योगिकी पार्क कहा जाता है। ज्ञान पर आधारित उद्योगों का एक उदाहरण साफ्टवेयर का विकास है।

सूचना प्रौद्योगिकी का क्या अर्थ है और यह किस प्रकार चतुर्थक क्रियाकलापों के विकास में सहायक है? सूचना प्रौद्योगिकी कई प्रकार की प्रौद्योगिकियों का संयुक्त रूप है। इसमें सूक्ष्म इलैक्ट्रॉनिकी, कंप्यूटर (मशीन और साफ्टवेयर) दूरसंचार, प्रसारण और ऑप्ट्रो-इलेक्ट्रॉनिक्स शामिल हैं। बीसवीं शताब्दी के विगत दो दशकों में सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग से प्रौद्योगिकी में नए आविष्कार हुए हैं। आनुवंशिक इंजीनियरिंग इसका एक अच्छा उदाहरण है। इसका अनुप्रयोग विविध क्षेत्रों, जैसे-चिकित्सा, स्वास्थ्य, परिवहन और दूसरे शब्दों में, सूचना संसाधन और संचार की प्रौद्योगिकियाँ' परिवर्तन के केंद्रबिंदु हैं, यानी ये प्रक्रम आधारित हैं। वर्तमान प्रौद्योगिकी क्रांति की मुख्य विशेषता ज्ञान उत्पादन और सूचना संसाधन की युक्तियों में ज्ञान और सूचना का अनुप्रयोग हैं। सूचना युग ने औद्योगिक समाज के तकनीकी तत्त्वों में क्रांतिक परिवर्तन किया है। परिणामस्वरूप वर्तमान आर्थिक क्रियाकलाप मुख्य रूप से उन अप्रत्यक्ष उत्पादों से प्रभावित हैं जिन के उत्पादन में ज्ञान, सूचना और संचार बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। पिछले पृष्ठों पर आप इनके विषय में पढ़ चुके हैं।

औद्योगिक देशों में अधिकतर नौकरियाँ, विशेष रूप से ऊँचे वेतन वाली, सफेदपोश नौकरियाँ, किसी न किसी रूप में सूचना संग्रहण, संसाधन और प्रसारण से जुड़ी हैं। सूचना प्रौद्योगिकी के इन कार्यों का महत्त्व कंप्यूटरों के सस्ते होने और अधिक सक्षम होने के कारण और अधिक बढ़ गया है। यही नहीं, तेजी से होने वाले प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों के कारण उत्पादन में लगने वाला समय घट गया है। वैश्वीकरण और उदारीकरण के कारण बढ़ती प्रतिस्पर्धा और रोजगार के बाजार में अनिश्चितता ने वस्तुओं के उत्पादन और विपणन को अधिक सूचना प्रधान बना दिया है। इसलिए विश्व अर्थव्यस्था का भूगोल मुख्य रूप से आंकड़ों के अदृश्य प्रवाह और पूँजी पर आश्रित है। ये स्थानों को असमान रूप से विश्व तंत्रों में जोड़ते हैं।

आर्थिक क्रियाकलाप पहले से कहीं अधिक दूरियों में फैल गए हैं। कहीं-कहीं इनका विस्तार महाद्वीपों के एक छोर से दूसरे छोर तक है। इसीलिए ये दूरसंचार तंत्र के उपयोग पर पूरी तरह निर्भर हैं। बीसवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों में सूचना का अंकीकरण हो जाने पर दूरसंचार कंप्यूटर में मिल गया है। इससे संचार के एक समन्वित संजाल का निर्माण हुआ है। इस कार्य में इंटरनेट की भूमिका उल्लेखनीय है। इसके परिणामस्वरूप पेशेवर अधिकारियों को नगर के केंद्रीय भागों या दफ्तरों से दूर जाने का अवसर मिल गया

है। अब वे अपने घरों में बैठकर लोगों के साथ प्रत्यक्ष संपर्क करके अच्छा काम कर सकते हैं। बैंक, जीवन बीमा कंपनियाँ तथा सुरक्षा से जुड़ी कंपनियाँ अत्यधिक सूचना प्रधान आर्थिक क्रियाकलाप हैं। इन्होंने संचार के ठेके पर लिए गए तथा निजी जालों से विस्तृत संजाल विकसित करने में सर्वप्रमुख भूमिका निभाई है। वित्तीय साधनों के इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से लेन-देन अब अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय व्यवस्था का केंद्रबिंदु बन गया है। इस व्यवस्था के द्वारा बैंक क्षण भर के नोटिस पर पूँजी को संसार के किसी भी कोने में स्थानांतरित कर सकते हैं।

वित्तीय बाजार के अंतर्राष्ट्रीयकरण का सबसे उल्लेखनीय प्रभाव वैश्विक नगरों के विकास के रूप में पड़ा है। लंदन, न्यूयार्क और टोकियो ऐसे ही वैश्विक नगर हैं। कुछ अन्य नगरों, जैसे-पेरिस, टोरंटो, लॉस एंजिल्स, ओसाका, हांगकांग एवं सिंगापुर का भी अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में महत्त्वपूर्ण स्थान है। लेकिन बीसवीं शताब्दी के अंत में सूचना पर आधारित अर्थव्यवस्था में इन तीन नगरों न्यूयार्क, लंदन और टोकियो की भूमिका बहुत उल्लेखनीय रही है। ये विश्व तंत्र के नियंत्रक केंद्रों के रूप में काम करते हैं। इन नगरों में राष्ट्रपारीय कंपनियों के मुख्यालय हैं। यहीं पर वित्तीय कंपनियों और व्यापारिक सेवाओं के कार्यालयों के बड़े-बड़े परिसर हैं। यहाँ कंपनियों के बड़े अधिकारियों को प्रत्यक्ष संपर्क, राजनीतिक संबंध बनाने और सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेने के अवसर अनायास ही मिल जाते हैं।

संक्षेप में, दूरसंचार के द्वारा आज उच्च वेतन तथा उच्च मूल्य संबंधित सफेदपोश कार्यों को करने वाले कर्मचारी एक ही स्थान पर इकट्ठे होने लगे हैं। इसके विपरीत निम्न वेतन, निम्न मूल्य वृद्धि और कायिक कार्य करने वाले कर्मचारियों के विकेंद्रीकरण को भी इससे प्रेरणा मिली है। नगरों और प्रदेशों पर इनके सकारात्मक और नकारात्मक कई प्रकार के प्रभाव पड़े हैं। दैनिक जीवन में इलेक्ट्रॉनिक तंत्र का बहुत उपयोग होता है। पासपोर्ट, करों के रिकार्ड, चिकित्सा रिपोर्ट, टेलीफोन और अपराध के आंकड़ों में इनका बहुत उपयोग होता है। इनके कारण सत्ता और संपत्ति तथा भौगोलिक केंद्र और निकटवर्ती क्षेत्र के रूप में, कुछ वर्ग बन गए हैं। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इंटरनेट के उपयोग में असमानता इसका एक उदाहरण है। प्रति एक लाख लोगों पर इंटरनेट का उपयोग करने के आधार पर देशों के दो वर्ग बन गए हैं- एक विकासशील देशों का तथा दूसरा विकसित देशों का। स्कैंडिनेविया के देश, कनाडा और आस्ट्रेलिया इंटरनेट के द्वारा सबसे अच्छी तरह से जुड़े हैं। इस संदर्भ में इनके बाद यूनाइटेड किंगडम, जर्मनी और जापान का स्थान है। इस मामले में संयुक्त राज्य अमेरिका का स्थान आश्चर्यजनक रूप से काफी नीचा है, क्योंकि इसकी काफी बड़ी जनसंख्या इंटरनेट का बहुत कम उपयोग करती है। लेकिन इंटरनेट के अंतर्राष्ट्रीय यातायात का उद्गम स्थान या लक्ष्य संयुक्त राज्य अमेरिका होता है। एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका के अधिकतर लोग इंटरनेट का बहुत कम या बिल्कुल ही उपयोग नहीं करते हैं।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए :
   (i) तृतीयक क्रियाकलाप क्या हैं ?
   (ii) उन्नत आर्थिक व्यवस्था में विनिर्माण का क्यों ह्रास हुआ ?
   (iii) सेवाओं के प्रमुख घटक क्या हैं ?
   (iv) वैश्विक नगर क्या हैं ? तीन वैश्विक नगरों के नाम लिखिए।
   (v) चतुर्थक क्रियाकलाप क्या हैं ?
   (vi) इंटरनेट द्वारा सबसे अच्छी तरह जुड़े विश्व के तीन देशों के नाम बताइए।
2. आधुनिक आर्थिक विकास में सेवा क्षेत्र के महत्त्व तथा वृद्धि की विवेचना कीजिए।
3. विकासशील देशों में सेवा क्षेत्र उन्नत देशों से किस प्रकार भिन्न है? व्याख्या कीजिए।
4. उन्नत अर्थव्यवस्था के विशेषीकृत क्रियाकलापों जैसे वित्त और बीमा की अवस्थिति में भूमंडल पर बिखरी हुई क्यों है? उनका प्रबंधन कैसे होता है ?

5. संसार में चतुर्थक सेवाओं की प्रकृति तथा वृद्धि की विवेचना कीजिए।
6. 'वैश्विक नगर विश्व प्रणाली के आदेश और नियंत्रण केंद्र के रूप में कार्य करते हैं'। व्याख्या कीजिए।

भौगोलिक कुशलताएँ

7. संसार के रेखा मानचित्र पर निम्नलिखित को दर्शाइए :
   (i) उत्तर अमेरिका, यूरोप तथा एशिया, प्रत्येक से एक-एक वैश्विक नगर।
   (ii) हांगकांग, शेनझेन, गुंआंगझाऊ-झुहाई-मकाऊ के विकसित संनगर (मेगालोपोलिस)

इकाई IV

परिवहन, संचार एवं व्यापार

8 अध्याय

परिवहन एवं संचार

प्राकृतिक संसाधन, विनिर्माण केंद्र और उत्पादित वस्तुओं के लिए बाजारों की स्थिति शायद ही कभी एक स्थान पर होती है। परिवहन, संचार तथा व्यापार, वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन क्षेत्रों को उनके उपभोग के क्षेत्रों से जोड़ते हैं। आधुनिक काल में, परिवहन एवं संचार सुविधाओं में प्रत्येक सुधार के बाद दूरियाँ निरंतर कम हो रही हैं। यदि सक्षम परिवहन और संचार तंत्र न होता तो विश्व की अर्थ व्यवस्था ठप्प हो गई होती। प्राचीन समय में परिवहन तथा संचार के साधन लगभग एक ही थे, किंतु विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी की उन्नति से दोनों ही ने अलग और विशिष्ट स्वरूप प्राप्त कर लिया है।

परिवहन से तात्पर्य वस्तुओं और यात्रियों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक लाना-ले जाना है। इसके लिए मनुष्यों, पशुओं और विभिन्न प्रकार के वाहनों का उपयोग किया जाता है। ऐसे आवागमन, स्थल, जल एवं वायु के माध्यम से सम्पन्न होते हैं। सड़क तथा रेल स्थल परिवहन के अंग हैं। जलमार्ग तथा वायुमार्ग दो अन्य मुख्य प्रकार हैं। पाइप लाइनों का उपयोग जल और पेट्रोलियम जैसे तरल पदार्थों के परिवहन के लिए किया जाता है। इस प्रकार परिवहन में, धमनी रूपी विभिन्न प्रकार के मार्ग, लोगों और सामानों को ढोने के लिए वाहन, मार्गों के रख-रखाव तथा सामान उतारने और चढ़ाने तथा सुरक्षित रूप से पहुँचाने के लिए संगठन शामिल हैं।

संचार सूचनाओं को उनके उद्‌गम स्थल से लक्ष्य तक किसी चैनल के माध्यम से पहुँचाए जाने को कहते हैं। डाक सेवाएँ, टेलीफोन, तार और फैक्स सेवाएँ, इंटरनेट और उपग्रह, संचार के कुछ प्रमुख साधन हैं।

व्यापार का अर्थ है बाजार के माध्यम से वस्तुओं और सेवाओं का आदान-प्रदान। यह आदान-प्रदान मूल्यों या माँग और आपूर्ति में अंतर के कारण दो या अधिक स्थानों के मध्य होता है। इस प्रकार यह विभिन्न स्थानों के मध्य वस्तुओं और सेवाओं के आदान-प्रदान के प्रवाह को प्रकट करता है।

इससे स्पष्ट है कि परिवहन, संचार और व्यापार, लोगों, वस्तुओं और सेवाओं के स्थानांतरण को सुविधाजनक बनाता है। परिवहन और संचार, मार्गों, चैनलों और वाहनों का एक संजाल बनाते हैं। इन्हीं के माध्यम से व्यापार होता है। इस अध्याय में हम परिवहन और संचार पर चर्चा करेंगे। व्यापार का अध्ययन अलग से अगले अध्याय में किया जाएगा।
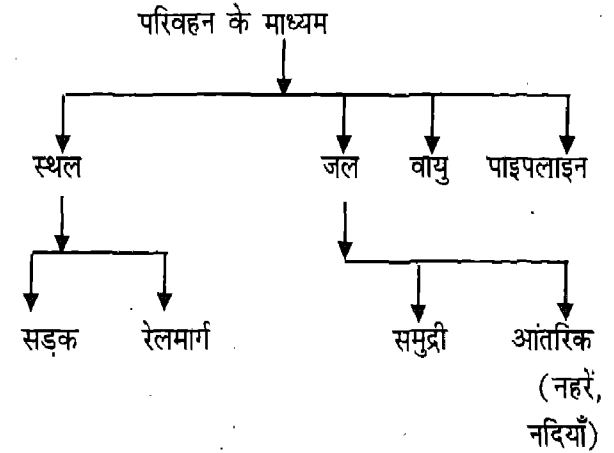
परिवहन

जैसा कि हम पढ़ चुके हैं कि स्थल, जल, वायु और पाइप लाइन के माध्यमों का उपयोग विभिन्न वस्तुओं और सेवाओं के परिवहन के लिए किया जाता है। लोग आवागमन के लिए स्थल, जल और वायुमार्गों का उपयोग करते हैं। परिवहन के प्रत्येक माध्यम का अपना महत्त्व होता है। ढोई जाने वाली वस्तुओं और सेवाओं के प्रकार, परिवहन की लागत तथा परिवहन के लिए उपलब्ध साधनों पर यह निर्भर करता है कि

किस प्रकार के परिवहन का चयन किया जाए। उदाहरण के लिए, स्थूल भरकम सामानों का परिवहन जलमार्गों द्वारा सस्ता पड़ता है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर वस्तुओं का परिवहन सामान्यत: समुद्री मालवाहक जहाजों द्वारा किया जाता है। जलमार्गों द्वारा परिवहन में पत्तनों से आंतरिक गंतव्य स्थानों तक माल पहुँचाने की कुछ सीमाएँ हैं तथा इस प्रकार का परिवहन धीमा होता है। छोटी दूरियों के लिए सड़क परिवहन अपेक्षाकृत सस्ता होता है और इसकी गति भी तेज होती है। इसके अलावा यह द्वार से द्वार तक की सेवा प्रदान करता है। लेकिन यदि किसी को बहुत बड़ी मात्रा में स्थूल सामान देश के सुदूर स्थानों पर ले जाना हो तो इसके लिए रेलमार्ग सबसे अच्छा साधन है। इसके विपरीत शीघ्र खराब होने वाले पदार्थों तथा हल्की और कीमती वस्तुओं का परिवहन वायुयान द्वारा सबसे अच्छा रहता है। एक सुप्रबंधित परिवहन प्रणाली में, परिवहन के विभिन्न माध्यम एक दूसरे के पूरक और सहयोगी होते हैं।

स्थल परिवहन

वस्तुओं और सेवाओं का अधिकतर परिवहन स्थल पर ही होता है। प्राचीन काल में मनुष्य स्वयं ही वाहक होता था। संसार के कुछ भागों में *मानव वहन* आज भी महत्त्वपूर्ण बना हुआ है, जैसे-सघन वन प्रदेश या ऊबड़-खाबड़ पर्वतीय प्रदेश, जहाँ सड़कों का निर्माण एक कठिन कार्य है। बाद में घोड़ों, खच्चरों और अन्य पशुओं का उपयोग बोझा ढोने के लिए होने लगा। पहिए के आविष्कार के साथ पशुओं द्वारा खींची जाने वाली गाड़ियों और वैगनों का उपयोग महत्त्वपूर्ण हो गया। सवारी, बोझा ढोने, तथा गाड़ियों और बग्गियों को खींचने के लिए घोड़ा सर्वाधिक लोकप्रिय पशु रहा है। पशुओं के उपयोग से परिवहन की क्षमता और गति में बहुत सुधार हुआ। लेकिन आधुनिक मानकों की तुलना में यह फिर भी बहुत धीमा और दुष्कर था।

अठारहवीं शताब्दी में भाप के इंजन के आविष्कार के बाद ही स्थल परिवहन में क्रांति आई, यद्यपि प्राचीन काल से ही परिवहन के लिए पगडंडियों और कच्ची सड़कों का उपयोग होता रहा है, अंतर्दहन इंजनों के विकास के बाद सड़कों और उन पर चलने वाले वाहनों की गुणवत्ता में विशिष्ट परिवर्तन हुए। सबसे पहली रेल लाइन 1830 में बनाई गई, जिससे अभिगम्यता और स्थानों के बीच संबद्धता (आपस में जुड़ना) में वृद्धि हुई। इसने महाद्वीपों के आंतरिक भागों को व्यापारिक खनन, विनिर्माण और कृषि के लिए खोल दिया।

रज्जु मार्ग और पाइप लाइन स्थल परिवहन के नवीनतम रूप हैं। ऊबड़-खाबड़ और दुर्गम प्रदेशों, विशेष रूप से पर्वतीय प्रदेशों में रज्जु मार्गों का विकास किया गया है। खनिज तेल, जल, कर्दम जैसे तरल पदार्थों का परिवहन पाइप लाइनों के द्वारा किया जाता है।

सड़कें और महामार्ग

सड़कें अपेक्षाकृत छोटी दूरियों के लिए परिवहन का सबसे सस्ता साधन हैं। द्वार से द्वार तक सेवा प्रदान करने के कारण, रेलों की तुलना में सड़कों द्वारा सामान का परिवहन दिनोंदिन महत्त्वपूर्ण होता जा रहा है। विकसित देशों में बहुत अच्छी सड़कों का निर्माण हुआ है। इन से लंबी दूरियाँ कम समय में और आराम से तय की जाती हैं। अमेरिका में ऐसे महामार्गों को मोटरवेज तथा जर्मनी में ऑटोबान कहते हैं। तीव्र परिवहन के लिए अंतर्राज्यीय महामार्ग भी बनाए गए हैं। अत्यधिक भारी सामान ढोने के लिए बड़े आकार के तथा शक्तिशाली ट्रकों का उपयोग निरंतर बढ़ रहा है। विकासशील देशों में अच्छी सड़कें कम ही हैं, लेकिन विगत कुछ वर्षों में सड़क परिवहन में काफी प्रगति हुई है।

महामार्ग वे पक्की सड़कें हैं, जो दूरस्थ स्थानों को मिलाती हैं। ये सड़कें इस प्रकार बनाई जाती हैं, ताकि इन पर वाहन बिना रुकावट के दौड़ते रहें। इसलिए ये सड़कें 60 मीटर तक चौड़ी होती हैं। ये समतल होती हैं तथा दो तरफ यातायात के बाधारहित प्रवाह के लिए दो भागों में विभाजित होती हैं। इन पर यातायात प्रवाह के लिए कई पथ (लेन), पुल, फ्लाईओवर तथा सड़कों के किनारों पर पुश्ते बनाए जाते हैं।

विकसित अर्थ व्यवस्था वाले देशों में वाहनों की संख्या अधिक होती है तथा सड़कों का जाल घना होता है। यूरोप का प्रत्येक नगर और पत्तन महामार्गों द्वारा जुड़ा हुआ है। रूस में, मास्को सड़क द्वारा पूर्वी भाग में स्थित ब्लाडिवोस्टक नगर से जुड़ा हुआ है। उत्तर अमेरिका के पूर्वी तथा पश्चिमी तटों पर स्थित नगर महामार्गों द्वारा जुड़े हैं। यही नहीं उत्तर में कनाडा के नगर भी महामार्गों द्वारा दक्षिण में मैक्सिको के नगरों से जुड़े हैं। कनाडापारीय महामार्ग ब्रिटिश कोलंबिया (पश्चिमी तट) के वैंकूवर नगर को न्यू फाउंडलैंड (पूर्वी तट) में स्थित

सेंट जॉन नगर से जोड़ता है। इसी प्रकार अलास्का महामार्ग कनाडा के एडमाटन नगर को अलास्का के एंकरेज से जोड़ता है।

दक्षिण अमेरिका, मध्य अमेरिका और संयुक्त राज्य अमेरिका को पैन-अमेरिका महामार्ग द्वारा जोड़ने की एक योजना बनाई गई थी। इसका अधिकांश भाग बन कर तैयार है। महाद्वीपीय पारीय स्टुअर्ट महामार्ग आस्ट्रेलिया का एक प्रमुख महामार्ग है। यह नार्दन टेरिटरी में स्थित डार्विन को टेनेंट क्रीक और एलिस स्प्रिंग से होते हुए विक्टोरिया में मेलबोर्न से जोड़ता है।

चीन में, उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम के नगरों को महामार्गों से जोड़ा गया है। उदाहरण के लिए, वियतनाम सीमा के पास स्थित सुगंसो नगर महामार्ग द्वारा बीजिंग से जुड़ा है। इसी प्रकार शंघाई दक्षिण में गुआंगझाऊ तथा उत्तर में बीजिंग से महामार्ग द्वारा जुड़ा है। हाल ही में ल्हासा और चेंगडू को जोड़ने के लिए एक महामार्ग बनाया गया है।

भारत में भी प्रमुख नगरों को जोड़ने वाले अनेक महामार्ग हैं। राष्ट्रीय महामार्ग सं. 7 भारत का सबसे लंबा महामार्ग है। यह वाराणसी को कन्याकुमारी से जोड़ता है। चार महानगरों, दिल्ली, मुंबई, कोलकाता और चेन्नई को जोड़ने के लिए *स्वर्णिम चतुष्कोण* नामक महामार्ग बनाए जा रहे हैं।

अफ्रीका में एक महामार्ग अल्जीयर्स को एटलस पर्वत और सहारा मरुस्थल के पार गिनी में स्थित कोनाक्री से जोड़ता है। इसी प्रकार केरो और केप टाउन को भी जोड़ा गया है। लंबी दूरियों और अच्छी सड़कों के निर्माण से अनेक देशों में पर्यटन के विकास को सहायता मिली है। इस प्रकार की प्रमुख सड़कों का निर्माण दक्षिण अमेरिका में हुआ है। पत्तनों को उनके पृष्ठ प्रदेशों से जोड़ने के लिए भी सड़कें बनाई गई हैं।

विकसित और विकासशील देशों की सड़कों की गुणवत्ता में बहुत अंतर पाया जाता है, क्योंकि अच्छी सड़कों के निर्माण और उनके रख-रखाव में भारी व्यय होता है।

रेलमार्ग

सड़कों की तुलना में रेलमार्ग भारी मात्रा में सामान को अधिक दूरी तक ले जाने के लिए परिवहन का अपेक्षाकृत सस्ता और अधिक सुविधाजनक माध्यम है।

सन् 1825 में उत्तरी इंग्लैंड के स्टॉकटन और डार्लिंगटन के मध्य संसार की पहली रेल चलाई गई थी। उन्नीसवीं शताब्दी में रेल यात्रियों और माल परिवहन का सबसे लोकप्रिय और तीव्रतम साधन बन गई थी। रेलों का विकास अंतर्राष्ट्रीय कारकों के कारण हुआ। पहला कारक भाप के इंजन का आविष्कार था। इसका उपयोग उद्योगों में ही नहीं, अपितु परिवहन के लिए भी होने लगा। दूसरा कारक उद्योगों के तीव्र विकास से प्रेरित तत्कालीन परिवहन तंत्र में आवश्यक सुधार था। भारी भरकम सामान और बड़ी संख्या में यात्रियों का परिवहन रेलों द्वारा सस्ते में और तीव्र गति से लंबी दूरियों तक होता था। ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान और भारत में स्थानीय यात्री रेलगाड़ियाँ लोकप्रिय बन गई हैं। इन्हीं रेलगाड़ियों से नगरों में प्रतिदिन हजारों लोग बहुत कम समय में एक स्थान से दूसरे स्थान पर आते जाते हैं।

संसार में रेल मार्गों का प्रतिरूप

परिवहन के साधन के रूप में रेलों की प्रतिस्पर्धा एक देश से दूसरे देश में बहुत भिन्न है, क्योंकि इनके रख-रखाव पर बहुत खर्च होता है। आवश्यक सेवाओं के अंतर्गत आने के कारण रेलों का प्रबंधन सरकार ही करती है। भाप के इंजनों के स्थान पर डीज़ल और विद्युत इंजनों का उपयोग होने लगा है। अब रेलगाड़ियाँ बहुत तेज गति से चलने लगी हैं। सुखद यात्रा के लिए रेलगाड़ियों में यात्रियों के लिए वातानुकूलन, रात में सोने के लिए बर्थ, आरामदायक सीट तथा खान-पान सेवा की व्यवस्था की जा रही है। नाशवान वस्तुओं के लिए प्रशीतित डिब्बों की सुविधा जुटाई गई है। अन्य वस्तुओं के लिए टैंकरों और कंटेनरों का उपयोग होता है। जहाजों से कंटेनरों को सीधे, रेल के डिब्बों पर रख दिया जाता है। इससे सामान चढ़ाने, उतारने और पैकिंग का कार्य काफी कम हो जाता है।

एशिया में भारत, जापान और चीन में रेलों का सघन जाल है। भारत में रेलमार्गों की कुल लंबाई लगभग 63,000 कि.मी. है। दोहरी रेल लाइनों के संदर्भ में रेलमार्गो की लंबाई 93,000 कि.मी. है। भारत में कुल मिलाकर 7000 से अधिक स्टेशन हैं। एशिया महाद्वीप में यह रेलों का सघनतम जाल है। जापान में 28,000 कि.मी. और चीन में 35,000 कि.मी. से अधिक लंबे रेलमार्ग हैं। एशिया के अन्य देशों में रेलमार्गों की लंबाई अपेक्षाकृत कम ही है। विस्तृत मरुस्थलों और विरल जनसंख्या के कारण पश्चिम एशिया में रेलमार्ग बहुत कम विकसित हैं।

दक्षिण अमेरिका में रेलों का सघन जाल अर्जेंटाइना के पंपास और ब्राजील के कहवा उत्पादक क्षेत्रों में पाया जाता है।

दक्षिण अमेरिका के लगभग 40 प्रतिशत रेलमार्ग इसी प्रदेश में संकेंद्रित हैं। दक्षिण अमेरिका में केवल एक अंतर्महाद्वीपीय (महाद्वीप-पार) रेल मार्ग है, जो ब्यूनस आयर्स (अर्जेंटाइना) को वालपरेजो (चिली) से जोड़ता है। यह मार्ग माध्य समुद्र तल से 3,960 मीटर ऊँचे उस्पालाता दर्रे से होकर एंडीज पर्वत श्रेणी को पार करता है। शेष देशों में, केवल चिली में ही रेलमार्गों की लंबाई लगभग 9,300 कि.मी. काफी कही जा सकती है। चिली में रेलमार्ग इक्विक से प्यूर्टो मांट तक जाता है और इसकी शाखा लाइनें पत्तनों को आंतरिक खनन केंद्रों से जोड़ती हैं। एंडीज पर्वत माला में विस्तृत अन्य देशों जैसे पेरू, बोलीविया, इक्वेडोर, कोलंबिया और वेनेजुएला में रेलमार्ग बहुत छोटे हैं। ये इकहरे रेलमार्ग हैं, जो पत्तनों को आंतरिक क्षेत्रों से जोड़ते हैं। ये रेलमार्ग आपस में जुड़े भी नहीं हैं।

आस्ट्रेलिया में लगभग 40,000 कि.मी. लंबे रेलमार्ग हैं। इनमें से एक चौथाई न्यू साउथ वेल्स में पाए जाते हैं। यहाँ एक ही अंतर्महाद्वीपीय रेलमार्ग है। यह पर्थ को सिडनी से जोड़ता है। कालगूर्ली, एडीलेड, केनबरा तथा मैलबोर्न इस मार्ग पर पड़ने वाले मुख्य नगर हैं। एक प्रमुख उत्तर-दक्षिण रेलमार्ग एडीलेड और एलिस स्प्रिंग को जोड़ता है, लेकिन यह रेलमार्ग अभी भी डार्विन से बरदुम के बीच नहीं जुड़ा है।

न्यूज़ीलैंड के रेलमार्ग मुख्य रूप से उत्तरी द्वीप में ही हैं। ये कृषि क्षेत्र के प्रमुख नगरों को जोड़ते हैं।

अफ्रीका संसार का दूसरा सबसे बड़ा महाद्वीप है, लेकिन इसमें कुल 40,000 कि.मी. लंबे रेलमार्ग हैं। इसके प्रमुख रेलमार्ग हैं- बेनेगुएला रेलमार्ग, जो अंगोला से कटंगा-जांबिया की ताँबा पट्टी तक जाता है; तंजानिया रेलमार्ग जो जांबिया की ताँबा पट्टी से समुद्र तट पर स्थित दार-ए-सलाम को जाता है; तथा एक अन्य रेलमार्ग जो बोट्सवाना और जिंबाब्वे से होकर स्थल रुद्ध मध्य अफ्रीकी देशों को दक्षिण अफ्रीका से जोड़ता है। अफ्रीका के अन्य देशों, जैसे-अल्जीरिया, सेनेगल, नाइजीरिया, कीनिया और इथोपिया में रेलमार्ग समुद्र तटीय पत्तनों को आंतरिक केंद्रो से जोड़ते हैं। लेकिन न तो यहाँ रेलमार्गों का अच्छा जाल है और न ही ये रेलमार्ग अन्य देशों के रेलमार्गों से जुड़े हैं। सोना, ताँबा और हीरों के खनन की गतिविधियों के कारण दक्षिण अफ्रीका में 18,000 कि.मी. लंबे रेलमार्ग हैं। यहाँ रेलमार्गों का सबसे सघन जाल है।

यूरोप में रेलमार्गों का जाल संसार के सघनतम रेल जालों में से एक है। यहाँ लगभग 4,40,000 कि.मी. लंबे रेलमार्ग हैं। इनमें से अधिकतर दोहरे या बहुलाइनों वाले रेलमार्ग हैं।

पश्चिमी यूरोप के औद्योगिक प्रदेशों में रेलमार्गों का सघनतम रेल जाल पाया जाता है। बेल्जियम में प्रति 6.5 वर्ग कि. मी. क्षेत्र पर 1 कि. मी. लंबे रेलमार्ग के साथ संसार का सबसे अधिक सघन रेल जाल है। अनेक यूरोपीय देशों में माल परिवहन की तुलना में यात्री परिवहन अधिक महत्त्वपूर्ण है। लंदन, पेरिस और मास्को में भूमिगत रेलों का बहुत अधिक महत्त्व है।

यूरोप के महाद्वीपीय रेलमार्गों का महत्त्व अब समाप्त हो गया है। तीव्र गति वाले परिवहन और अपेक्षाकृत अधिक लचीले सड़क परिवहन ने इनकी महत्ता घटा दी है।

संसार में रेलों का सबसे बड़ा जाल इस समय उत्तर अमेरिका में ही है। यहाँ संसार के कुल रेलमार्ग का 40 प्रतिशत हैं। आजकल रेलों का सबसे अधिक उपयोग स्थूल या भारी-भरकम सामानों, जैसे-खनिज, अनाज, इमारती लकड़ी और निर्मित वस्तुओं के लंबी दूरी तक परिवहन के लिए किया जाता है। लेकिन यात्री परिवहन में रेलों की भूमिका महत्त्वपूर्ण नहीं है, क्योंकि अधिक यात्री मोटर और वायुयान द्वारा यात्रा को वरीयता देते हैं।

रेलों का सघनतम जाल संयुक्त राज्य अमेरिका के पूर्वी और मध्यवर्ती भागों, दक्षिणी कनाडा, ग्रेट लेक्स के दक्षिण में तथा अटलांटिक के तटीय क्षेत्रों में पाया जाता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका के पूर्वी भाग में रेलों के जाल की सघनता के मुख्य कारण इस क्षेत्र का उच्च स्तरीय आर्थिक विकास तथा नगरीकरण है।

अंतर्महाद्वीपीय (महाद्वीप पारीय) रेलमार्ग : महाद्वीप के आर-पार बनाए गए तथा इसके दो सिरों को जोड़ने वाले मार्गों को अंतर्महाद्वीपीय या महाद्वीप पारीय रेलमार्ग कहते हैं। आर्थिक और राजनीतिक कारणों से इन रेलमार्गों का निर्माण किया गया था।

साइबेरिया पारीय रेलमार्ग एशिया का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण अंतर्महाद्वीपीय (महाद्वीप पारीय) रेलमार्ग है (चित्र 8.1)। यह रेलमार्ग पश्चिम में स्थित सेंट पीटर्सबर्ग को पूर्व में स्थित व्लाडिवोस्टक से जोड़ता है। यह दोहरा रेलमार्ग है तथा इसकी कुल लंबाई 9,332 कि.मी. है। इस रेलमार्ग पर
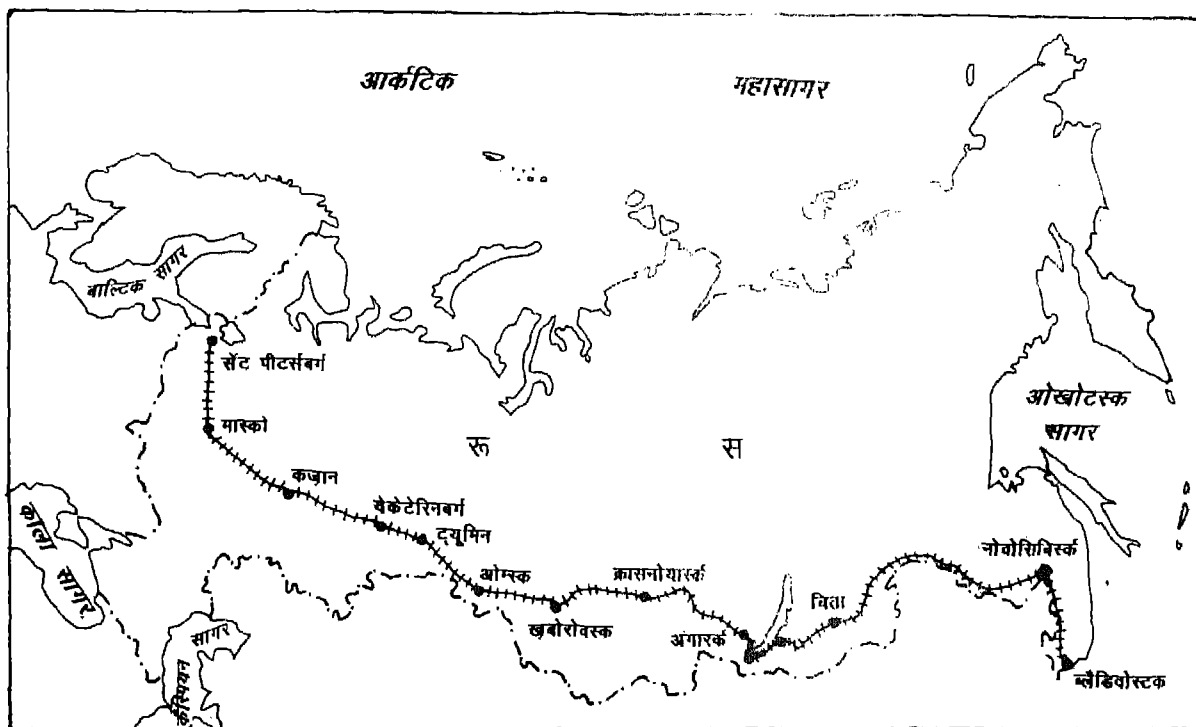
चित्र 8.1 : साइबेरियापारीय रेलमार्ग

स्थित प्रमुख स्टेशन मास्को, उफा, नोवोसिबिर्स्क, इर्कुटस्क, चीता और खाबारोवस्क हैं। इस रेलमार्ग से शाखा रेलमार्ग दक्षिण में यूक्रेन स्थित ओडेसा, केस्पियन सागर के तट पर बाकू, उजबेकिस्तान में ताशकंद, मंगोलिया में उलनबटोर, मंचूरिया में शेनयांग (मुकदेन) तथा चीन में बीजिंग तक जाते हैं।

कनाडा-प्रशांत रेलमार्ग उत्तर अमेरिका के पश्चिमी तट पर स्थित वैकूंवर को पूर्वी तट के हैलीफैक्स से जोड़ता है (चित्र 8.2)। इसका निर्माण 1886 में हुआ तथा इसकी कुल लंबाई 7,050 कि.मी. है। इस रेलमार्ग को बनाने का मुख्य उद्देश्य ब्रिटिश कोलंबिया नामक राज्य को कनाडा के अन्य राज्यों द्वारा बनाए गए राज्यमंडल में सम्मिलित करना था। लेकिन इस रेलमार्ग का आर्थिक महत्त्व तब बहुत बढ़ गया, जब इसने क्यूबेक-मांट्रियल औद्योगिक प्रदेश को मुलायम लकड़ी के वन प्रदेश तथा प्रेयरी के गेहूँ प्रदेश से जोड़ दिया। इस प्रकार प्रत्येक प्रदेश या भाग एक दूसरे का पूरक बन गया है। इसको संसार के महत्त्वपूर्ण जलमार्ग से मिलाने के लिए एक लूप रेलमार्ग विनीपवेग से सुपीरियर झील के उत्तरी सिरे पर स्थित थंडर बे तक बनाया गया है, जिससे यह रेलमार्ग संसार के एक महत्त्वपूर्ण जलमार्ग से जुड़ गया है। इसी जलमार्ग द्वारा प्रेयरीज का गेहूँ लाया जा सकता है। यह रेलमार्ग अब कनाडा की अर्थव्यवस्था की जीवन् रेखा बन गया है।

आस्ट्रेलियाई अंतर्महाद्वीपीय रेल मार्ग आस्ट्रेलिया महाद्वीप के पूर्वी तट पर स्थित सिडनी को पश्चिमी तट के पर्थ नगर से जोड़ता है (चित्र 8.3)। यह महाद्वीप के दक्षिणवर्ती भाग से होकर गुजरता है। इस मार्ग पर मुख्य स्टेशन ब्रोकेन हिल, पोर्ट आगस्टा तथा कालगूर्ली हैं।

एक प्रस्ताव एशियापारीय रेलमार्ग बनाने का है, जिसे टर्की के कांस्टेनटिनपोल नगर से थाईलैंड के बैंकाक तक बनाया जाएगा। यह रेलमार्ग ईरान, पाकिस्तान, भारत, बांग्ला देश और म्यांमार से होकर गुजरेगा।

जल परिवहन

जल परिवहन का एक बड़ा लाभ यह है कि इसमें किसी मार्ग के निर्माण की आवश्यकता नहीं पड़ती है। महासागरों के एक
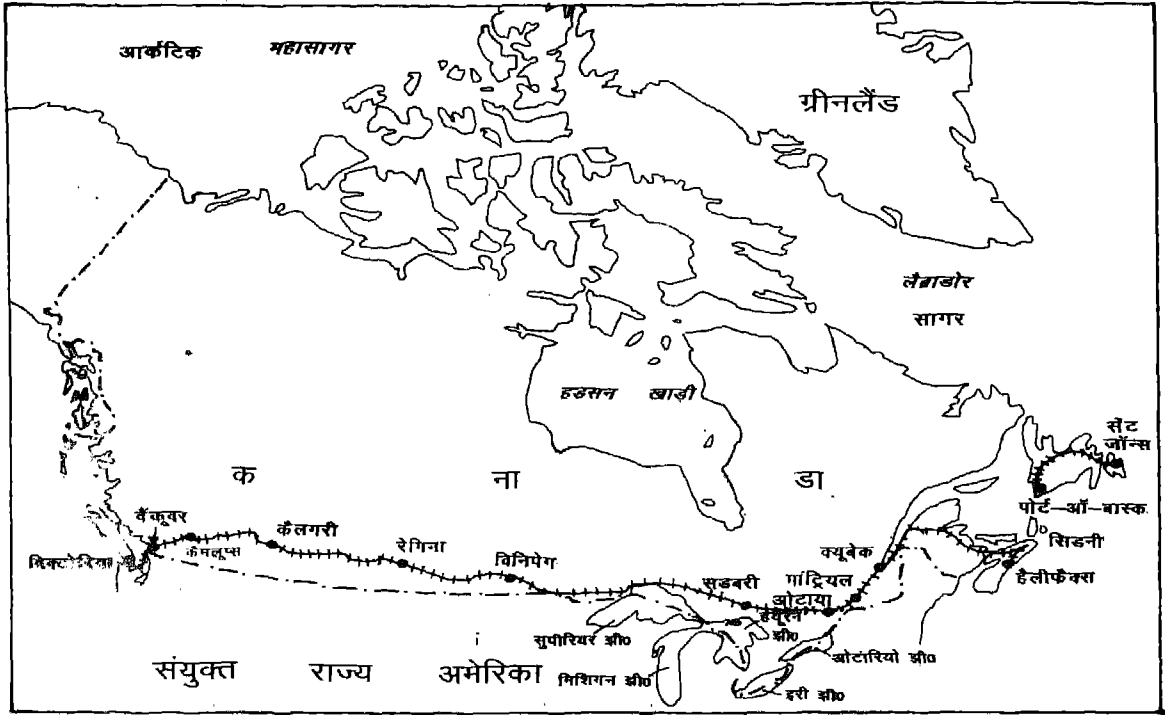
चित्र 8.2 : कनाडा-प्रशांत रेलमार्ग
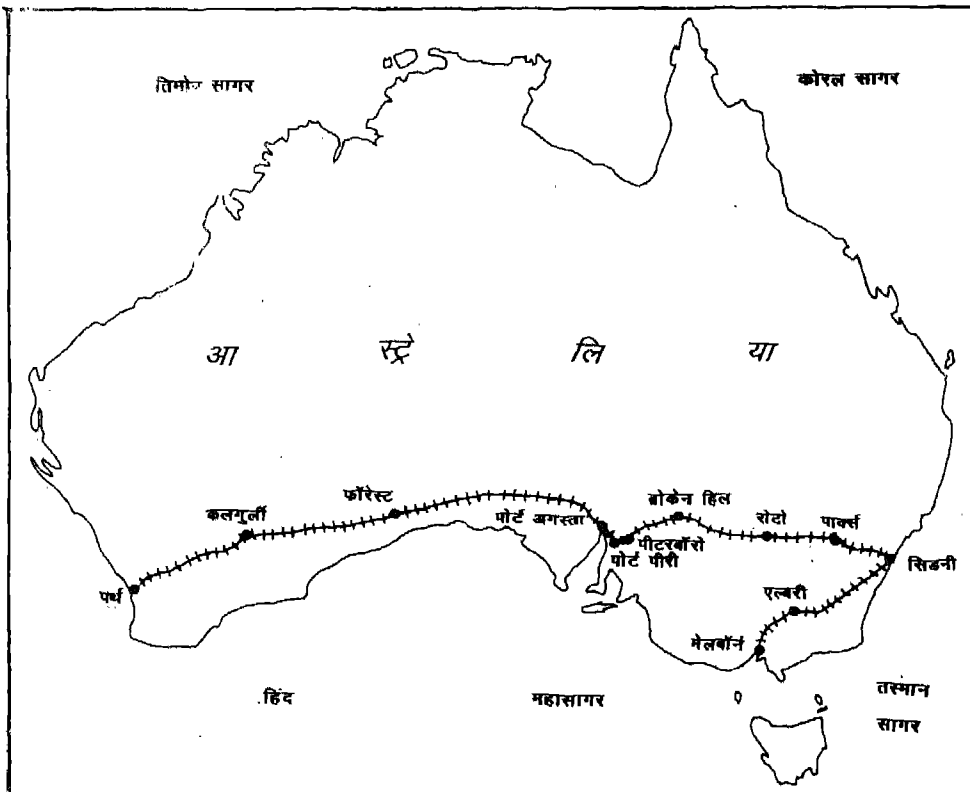
चित्र 8.3 : आस्ट्रेलियाई अंतर्महाद्वीपीय रेल मार्ग
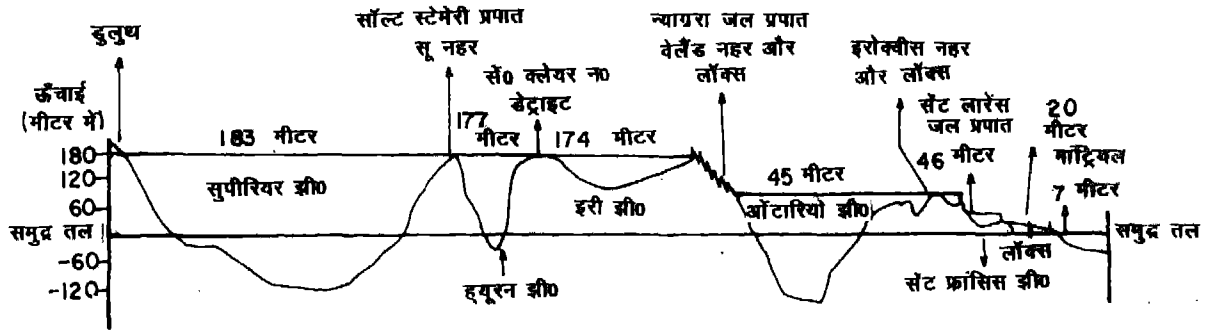
चित्र 8.4 : ग्रेट लेक्स-सेंट लारेंस जलमार्ग में जहाजों का आवागमन

दूसरे से जुड़े होने के कारण उनमें विभिन्न आकार के जहाजों का आवागमन निर्बाध रूप से सम्पन्न होता है। तथापि इसमें दोनों सिरों पर पत्तन की सुविधा उपलब्ध करानी पड़ती है। यह एक सस्ता माध्यम है, क्योंकि स्थल और वायु की अपेक्षा जल का घर्षण बहुत ही कम होता है। अत: जल परिवहन की ऊर्जा लागत भी कम होती है।

जलमार्गों को दो समूहों में विभक्त किया जाता है : आंतरिक जलमार्ग, तथा सामुद्रिक मार्ग।

अंत:स्थलीय जलमार्ग

नदियाँ, नहरें तथा झीलें आदिकाल से ही महत्त्वपूर्ण अंत:स्थलीय जलमार्ग रहे हैं। नावों तथा स्टीमरों का परिवहन के साधनों के रूप में प्रयोग होता है। ये माल के साथ-साथ यात्रियों को भी ढोते हैं। सघन जंगलों में नदियाँ ही परिवहन की एकमात्र साधन होती हैं। बहुत भारी सामान, जैसे-कोयला, सीमेंट, लकड़ी, खनिज अयस्क आदि जलमार्ग से ढोए जा सकते हैं।

भारत में नदी मार्ग प्राचीन काल में परिवहन के मुख्य मार्ग थे, परंतु उनका जलमार्ग के रूप में महत्त्व कई कारणों से घट गया, जैसे-रेलमार्गों के विकास, सिंचाई के लिए नहरों के निर्माण से नदियों में जल की कमी और परिवहन के लिए उनका अनुपयुक्त होना तथा अंत:स्थलीय जलमार्गों के देखभाल में कमी। अंत:स्थलीय जलमार्ग का विकास, जलधारा की चौड़ाई एवं गहराई, जल प्रवाह की निरंतरता तथा प्रयुक्त परिवहन प्रौद्योगिकी जैसे कई कारकों पर निर्भर है।

अपनी कमियों के बावजूद संसार के अनेक भागों में जल परिवहन का विकास हुआ है। इन प्रदेशों में, अनेक नदियों के नाव्यता बढ़ाने के लिए काफी सुधार किए गए हैं। जल के प्रवाह की निरंतरता को बनाए रखने के लिए बाँधों तथा बराजों का निर्माण एवं तल मार्जन (नदी में पानी की एक निश्चित गहराई को बनाए रखने के लिए उसकी तलहटी से सिल्ट तथा बालू निकालकर सफाई करना) जैसे उपायों के क्रियान्वयन से उपरोक्त वर्णित अनेक समस्याओं से छुटकारा पाया जा सकता है। नदी धाराओं में परिवर्तन की समस्या का समाधान तटबंध बनाकर किया जाता है। कुछ अंत:स्थलीय जलमार्गों का विवरण आगे दिया गया है।

उत्तर अमेरिका में दो प्रमुख अंत:स्थलीय जलमार्ग हैं:

(i) *ग्रेट लेक्स-सेंट लारेंस जलमार्ग*, तथा ; (ii) *मिसिसिपी जलमार्ग*

ग्रेट लेक्स-सेंट लारेंस जलमार्ग : उत्तर अमेरिका के उत्तरी भाग में विकसित यह एक अनोखा जलमार्ग है। इस मार्ग पर स्थित पत्तनों का विकास सभी सुविधाओं युक्त समुद्री पत्तनों की भाँति ही हुआ है। अतएव बड़े समुद्री जहाज क्यूबेक के दक्षिण सेंट लारेंस ज्वारनदमुख से होकर महाद्वीप के आंतरिक भाग में काफी दूरी (3,760 कि.मी.) तक जा सकते हैं (चित्र 8.4)। इस जलमार्ग द्वारा इस भाग के औद्योगिक तथा आर्थिक विकास में अत्यधिक सहायता मिली है।

मिसिसिपी जलमार्ग : मिसिसिपी-ओहायो जलमार्ग, संयुक्त राज्य अमेरिका के आंतरिक भाग को दक्षिण में मेक्सिको की खाड़ी से जोड़ता है। इस मार्ग द्वारा बड़े मालवाहक स्टीमर मिनियापोलिस तक आ-जा सकते हैं।

पश्चिमी तथा मध्यवर्ती यूरोप एवं पश्चिमी रूस में अनेक नाव्य नदियाँ तथा नहरें विद्यमान हैं।

अंत:स्थलीय जलमार्गों की सर्वाधिक सघन प्रणाली फ्रांस तथा जर्मनी में पाई जाती है। उत्तरी सागर में गिरने वाली सीन, राइन तथा एल्ब एवं उनकी सहायक नदियाँ नहरों द्वारा एक दूसरे से आपस में जुड़ी हुई हैं। इस भाग में कोई भी व्यक्ति
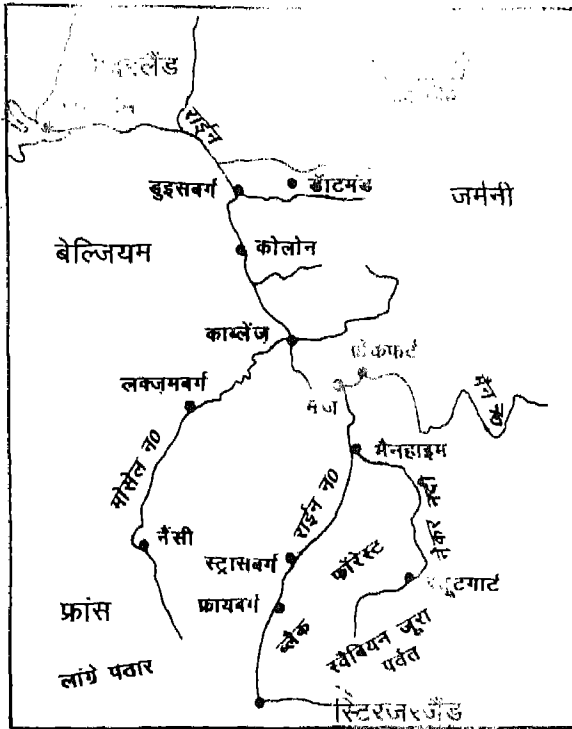
चित्र 8.5 राइन जलमार्ग

भूमध्यसागर से उत्तरी सागर तक नदियों तथा नहरों से होकर यात्रा कर सकता है।

राइन जलमार्ग : राइन इस प्रदेश में नौपरिवहन के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण नदी है। यह संसार का सबसे अधिक व्यस्त जलमार्ग है। इसके मुहाने पर नीदरलैंड में राटरडम स्थित है। इसका पृष्ठ प्रदेश राइन नदी के ऊपरी भाग तक फैला है। इसमें बेल्जियम, फ्रांस, जर्मनी तथा स्विटजरलैंड सम्मिलित हैं (चित्र 8.5)।

वोल्गा जलमार्ग : वोल्गा सबसे महत्त्वपूर्ण जलमार्गों में से एक है। वोल्गा नदी प्रणाली का जल केस्पियन सागर में गिरता है। इसके अंतर्गत 11,200 कि.मी. नौगम्य [illegible]मार्ग उपलब्ध हैं। वोल्गा-मास्को नहर इसे [illegible] प्रदेश से जोड़ती है। वोल्गा-डॉन नहर द्वारा यह जल[illegible] काला सागर से जुड़ा है।

दक्षिणी पूर्वी एशिया के अनेक [illegible] सामानों को लाने-ले जाने में नदियों की मह[illegible] है किंतु परिवहन की मात्रा की दृष्टि से पू[illegible] भारत के अंत:स्थलीय जलमार्गों का अपेक्षाकृत [illegible] महत्त्व है।

चीन में कई बड़ी नदियाँ हैं, परंतु उनमें से कुछ, विशेषत: पूर्वी भाग की नदियों में ही जल परिवहन [illegible] विकसित हुआ है। हुआंग तथा चांग जियांग नाव्य नदियाँ हैं। सघन जनसंख्या वाले सिचुआन प्रदेश को यह प्रणाली चांग जियांग डेल्टाई क्षेत्र से जोड़ती है, जहाँ पर नहरों का सघन जाल बिछा हुआ है। इस जलमार्ग द्वारा समुद्री जहाज हैंकाऊ तक जा सकते हैं।

भारत में गंगा नदी पटना तक नाव्य है। सुंदरबन से होकर भारत और बांग्ला देश के मध्य नियमित रूप से स्टीमर चलते हैं। केरल एक अन्य राज्य है जिसके पश्चजल में अंत:स्थलीय जल परिवहन आज भी प्रगति कर रहा है। भारत की तटरेखा लंबी है। यात्रियों और माल के परिवहन के लिए तटीय सेवाएँ उपलब्ध हैं।

यद्यपि आमेजन नदी संसार की सबसे लंबी नदी है और यह अटलांटिक तट से 3,680 कि.मी. दूर पेरू में स्थित इक्वीटास तक नाव्य भी हैं, किंतु विरल जनसंख्या और आंतरिक प्रदेश के निम्न आर्थिक विकास के कारण यहाँ जल परिवहन अभी तक विकसित नहीं हो पाया है।

पराना-परागुए जलमार्ग : यह दक्षिण अमेरिका की महत्त्वपूर्ण जल परिवहन प्रणाली है। इस नदी प्रणाली का जल रियो डिलाप्लाटा के ज्वारनदमुख से होकर अटलांटिक महासागर में गिरता है। इससे होकर बड़े जहाज आंतरिक भागों तक जा सकते हैं। पराना में 240 कि.मी. भीतर स्थित सांता फे तक समुद्री जहाज चलाए जा सकते हैं। परागुए में छोटे स्टीमर एसंशन तक पहुँचते हैं। इस जलमार्ग का यह सुविकसित पृष्ठ प्रदेश है और उपजाऊ आंतरिक भाग को अटलांटिक तट से जोड़ता है।

समुद्री परिवहन

समुद्री परिवहन, स्थल एवं वायुमार्ग की अपेक्षा माल ढुलाई का सस्ता साधन है। महासागरों में बिना किसी रख-रखाव खर्च के सभी दिशाओं में जानेवाले मार्ग उपलब्ध होते हैं। समुद्र पर चलने वाले जहाजों द्वारा जितना सामान एक साथ ढोया जा सकता है, उतना परिवहन के किसी अन्य साधन के द्वारा संभव नहीं है। नश्वर, शीघ्र खराब हो जाने वाली वस्तुओं, जैसे- माँस, फल, सब्जी एवं दुग्ध पदार्थों आदि के परिवहन हेतु प्रशीतित कक्षों, टैंकरों तथा दूसरे विशिष्ट जहाजों के विकास से समुद्री परिवहन की क्षमता में अधिक सुधार आया है। कंटेनरों के प्रयोग से न सिर्फ माल को चढ़ाना-उतारना सरल हो गया है, अपितु संसार के प्रमुख पत्तनों पर इन सामानों

को स्थल परिवहन हेतु रेल या सड़क मार्ग पर बदलने में भी सुविधा होती है। आधुनिक यात्री जहाज और मालवाहक जहाजों को राडार, वायरलेस तथा अन्य नौचालन सुविधाओं तथा उपकरणों से सुसज्जित कर दिया गया है। अत: वे तूफान और खराब मौसम में भी बहुत कम बाधित होते हुए निर्धारित मध्यम गति से समुद्र को पार करते हुए निश्चित समय पर गन्तव्य स्थान पर पहुँच सकते हैं।

चित्र 8.6 में समुद्री व्यापारिक मार्गों को दर्शाया गया है। यहाँ कुछ महत्त्वपूर्ण समुद्री मार्गों का विवरण दिया जा रहा है।

उत्तर अटलांटिक मार्ग : यह मार्ग संसार के दो सर्वाधिक विकसित प्रदेशों, कनाडा के पूर्वी भाग और संयुक्त राज्य अमेरिका को पश्चिमी यूरोप से जोड़ता है। अत: यह बहुत महत्त्वपूर्ण एवं व्यस्त जलमार्ग है। दोनों ही तटों पर अच्छे पत्तनों तथा पोताश्रयों की सुविधा उपलब्ध है। यूरोप के संपन्न कृषि, वाणिज्य और औद्योगिक प्रदेशों से भारी तथा अधिक मात्रा में निर्मित वस्तुएँ, जैसे-वस्त्र, रसायन, मशीनें, उर्वरक, इस्पात और शराब संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा को निर्यात की जाती हैं। खाद्य पदार्थ और कच्चा माल, जैसे-गेहूँ, लकड़ी की लुग्दी, ताँबा तथा लोहा एवं इस्पात, परिवहन उपकरण आदि को इस मार्ग से पश्चिमी यूरोप में भेजा जाता है। उत्तरी अटलांटिक प्रदेश का विदेशी व्यापार संसार के शेष सम्मिलित व्यापार से अधिक है।

भूमध्य सागर तथा हिंद महासागर का मार्ग : यूरोप के औद्योगिक रूप से विकसित देश, भूमध्य सागर, लाल सागर तथा हिन्द महासागर जलमार्ग द्वारा पूर्वी अफ्रीका, दक्षिण एशिया और दक्षिण पूर्वी एशिया से जुड़े हुए हैं। वास्तव में यूरोप से अफ्रीका, एशिया और आस्ट्रेलिया जाने वाला समुद्री यातायात इसी मार्ग से होकर गुजरता है। पूर्व की ओर जाने वाले सामानों में मुख्य रूप से मशीन तथा औद्योगिक उत्पाद होते हैं। पश्चिम की ओर कृषि उत्पाद, जैसे-कपास, रबड़, चाय, कहवा, चीनी और खनिज तेल भेजे जाते हैं। इस मार्ग पर पोर्ट सईद, अदन, मुंबई, कोच्चि, कोलंबो और सिंगापुर आदि कुछ महत्त्वपूर्ण पत्तन स्थित हैं।

स्वेज नहर : यह मिस्र में भूमध्य सागर और लाल सागर को मिलाने के लिए बनाया गया एक मानव निर्मित जलमार्ग है (चित्र 8.7)। समुद्र तल पर बनाई गई इस नहर में कोई जलपाश नहीं है। स्वेज नहर के 1869 में खुल जाने पर पश्चिमी यूरोप और दक्षिण पूर्वी एशिया के देशों के बीच की दूरी घटकर लगभग आधी रह गई। इस नहर पर उत्तर से दक्षिण कई पत्तन, जैसे-उत्तर में पोर्ट सईद तथा पोर्ट फौद एवं दक्षिण में पोर्ट स्वेज विकसित हुए हैं।
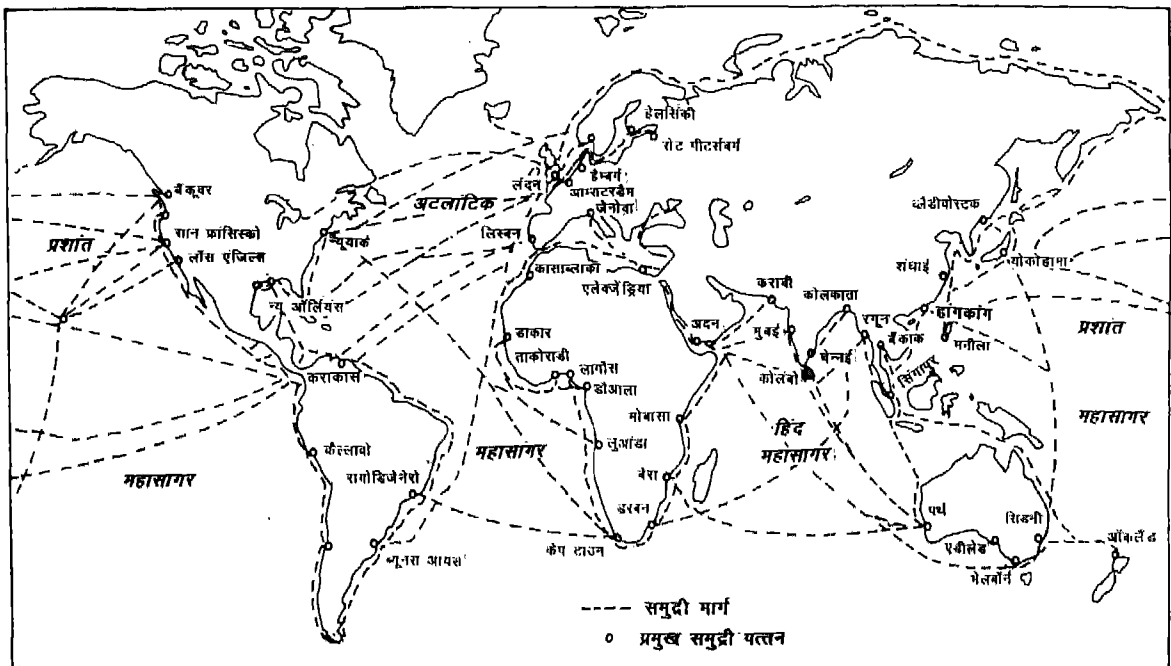
चित्र 8.6 प्रमुख समुद्री व्यापारिक मार्ग और समुद्री पत्तन
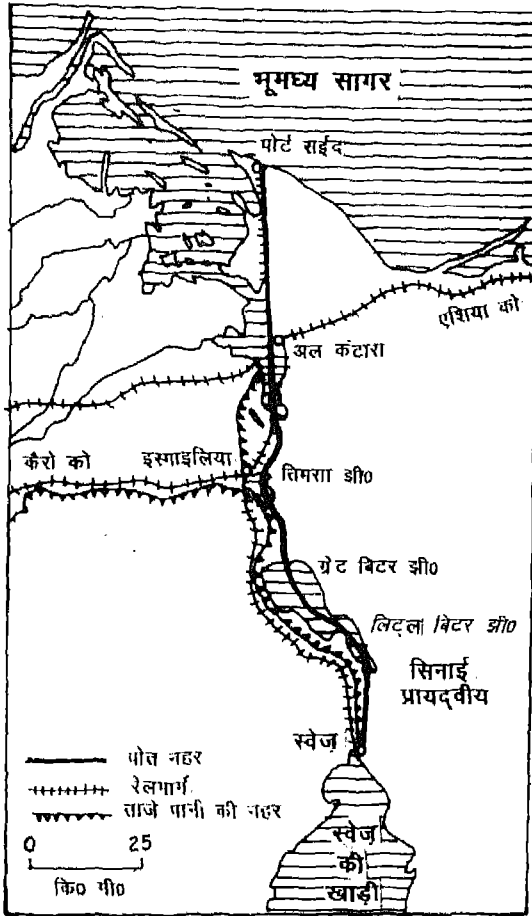
चित्र 8.7 : स्वेज नहर

आशा अंतरीप मार्ग : यह जलमार्ग कभी स्वेज नहर का वैकल्पिक मार्ग था, जिससे होकर लिवरपुल और कोलंबो के बीच की दूरी 6,400 कि.मी. अधिक हो जाती है। यह मार्ग पश्चिमी यूरोप को पश्चिमी अफ्रीका के देशों, दक्षिण एशिया, दक्षिण पूर्व एशिया, आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंड से मिलाता है। यूरोप से आने वाले अधिकतर जहाज सीधे आशा अंतरीप पहुँचते हैं। हाल में स्वतंत्रता प्राप्त अफ्रीकी राष्ट्रों में तीव्र आर्थिक विकास हो रहा है। मूल्यवान खनिजों, जैसे-सोना, ताँबा, हीरे-जवाहरात, टिन, क्रोमियम और अभ्रक तथा कृषि उत्पादों, जैसे-कपास, ताड़-तेल, मूँगफली, कहवा और फल में वृद्धि होने से अफ्रीका के पूर्वी और पश्चिमी तट पर स्थित पत्तनों द्वारा आशा अंतरीप से होकर जाने वाले यातायात की मात्रा बढ़ी है।

दक्षिण अटलांटिक मार्ग : यह जलमार्ग पश्चिम यूरोपीय एवं पश्चिम अफ्रीकी देशों को ब्राजील, अर्जेंटाइना, तथा उरूग्वे के पत्तनों से जोड़ता है। दक्षिण अटलांटिक मार्ग उत्तर अटलांटिक मार्ग की तुलना में बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं है, क्योंकि अफ्रीका और दक्षिणी अमेरिका के तट पर स्थित देश विरल जनसंख्या घनत्व वाले तथा आर्थिक रूप से अधिक विकसित नहीं हैं। केवल दक्षिण-पूर्वी ब्राजील, प्लाटाज्वारनद मुख और दक्षिणी अफ्रीका के कुछ क्षेत्रों में ही बड़े पैमाने पर औद्योगिक विकास हुआ है। रियो डि जेनेरो और केप टाउन के मध्य पूर्व-पश्चिम मार्ग पर भी व्यापार अधिक नहीं होता क्योंकि दक्षिण अमेरिका और अफ्रीका, दोनों के पास एक समान संसाधन तथा उत्पाद हैं। ब्राजील से कहवा, कोको, अर्जेंटाइना से गेहूँ, मांस, ऊन और सन उत्तर अमेरिका तथा यूरोप के औद्योगिक प्रदेशों को भेजे जाते हैं। बदले में निर्मित और अद्र्ध निर्मित वस्तुएँ मँगाई जाती हैं।

उत्तर प्रशांत मार्ग : यह जलमार्ग उत्तर अमेरिका के पश्चिमी तट पर स्थिति पत्तनों, जैसे-वैंकूवर, सियाटिल, पोर्टलैंड, सैन फ्रांसिस्को एवं सुदूर पूर्व एशिया के योकोहामा, कोबे, शंघाई, हांगकांग, मनीला और सिंगापुर आदि को मिलाने वाला मार्ग है। विशाल उत्तर प्रशांत महासागर के आर-पार व्यापार कई मार्गों से होता है तथा सभी मार्ग होनोलुलू पर मिलते हैं और उत्तर में बृहत् वृत्त पर एक सीधा मार्ग वैंकूवर तथा योकोहामा को जोड़ता है, जिसमें यात्रा की दूरी लगभग आधी (2,480 कि.मी.) हो जाती है। उत्तर अमेरिका से मुख्यत: गेहूँ, लकड़ी, कागज और लुग्दी, मछलियाँ, दुग्ध-उत्पाद और औद्योगिक उत्पाद आदि निर्यात किए जाते हैं। एशिया में, जापान, हांगकांग, दक्षिण कोरिया और ताइवान से मुख्यत: औद्योगिक उत्पादों, जैसे-वस्त्र, विद्युत उपकरण और दक्षिण पूर्व एशिया से उष्णकटिबंधीय कच्चे माल, जैसे-रबड़, नारियल-गरी, ताड़-तेल और टिन का निर्यात होता है।

दक्षिण प्रशांत मार्ग : दक्षिण प्रशांत जलमार्ग पश्चिमी यूरोप और उत्तर अमेरिका को आस्ट्रेलिया न्यूजीलैंड तथा बिखरे हुए प्रशांत महासागरीय द्वीपों को पनामा नहर से होकर जोड़ता है। इस मार्ग द्वारा जहाज हांगकांग फिलीपींस और इंडोनेशिया भी जाते हैं। इस मार्ग पर गेहूँ, मांस, ऊन, फल, दुग्ध उत्पादों और औद्योगिक उत्पादों का परिवहन होता है। पनामा तथा सिडनी के बीच 12,000 कि.मी. की दूरी है। होनोलूलू इस मार्ग का प्रमुख पत्तन है।

पनामा नहर : यह जलमार्ग पूर्व में अटलांटिक महासागर को पश्चिम में प्रशांत महासागर से जोड़ता है। यह नहर

पनामा स्थलसंधि को काट कर बनाई गई है। अत: यह उत्तर एवं दक्षिण अमेरिका के मुख्य स्थल खंडों को अलग करती है। पनामा नहर के बन जाने के कारण उत्तर और दक्षिण अमेरिका के पूर्वी तथा पश्चिमी किनारों के बीच की दूरियाँ काफी कम हो गई हैं। सुदूर पूर्व और दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों और पश्चिमी यूरोप के बीच यह अपेक्षाकृत एक छोटा मार्ग प्रदान करता है (चित्र 8.8)।

पनामा नहर में एक जलपाश प्रणाली है। पनामा खाड़ी में प्रवेश करने वाले जहाजों को विभिन्न तलों पर बने तीन जलपाशों (लाक्स) में से जाना पड़ता है। पनामा नहर जलमार्ग का आर्थिक महत्त्व इतना नहीं है, जितना स्वेज नहर जलमार्ग का है।

वायु परिवहन

यह परिवहन का सबसे तीव्र, किंतु सर्वाधिक महंगा माध्यम है। वायुयानों के निर्माण तथा इन्हें चलाने के लिए हैंगर, उड़ान भरने और उतरने, ईंधन तथा रख-रखाव की सुविधाओं की समुचित व्यवस्था करनी पड़ती है। इसीलिए वायु परिवहन का प्रयोग महंगी वस्तुओं और यात्रियों के परिवहन के लिए किया जाता है। वायु परिवहन पर खराब मौसम का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

इसके कुछ विशेष लाभ भी हैं। कीमती सामानों को विश्व स्तर पर शीघ्रता से पहुँचाया जा सकता है। तीव्र गति होने के कारण लंबी दूरी की यात्रा के लिए इसे ही पसंद किया जाता है। कुछ कठिनाई वाले क्षेत्रों जैसे ब्राजील या उत्तरी कनाडा जाने के लिए बहुधा वायु परिवहन ही एकमात्र साधन है।
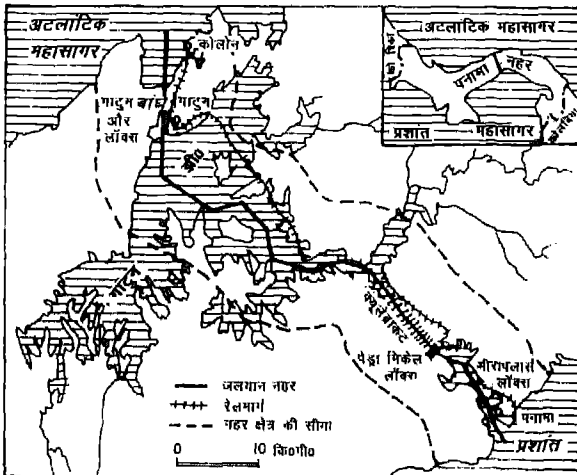
चित्र 8.8 : पनामा नहर

नवीनतम विकास वायु परिवहन की भावी दिशा बदल सकती है। अभी ऐसे सुपरसोनिक विमानों जैसे कानकार्ड का विकास किया गया है, जिससे न्यूयार्क तथा लंदन के बीच की दूरी को मात्र साढ़े तीन घंटों में ही तय किया जा सकता है।

पश्चिमी यूरोप, पूर्वी संयुक्त राज्य अमेरिका तथा दक्षिणी पूर्वी एशिया में वायुमार्गों का एक बहुत सघन जाल है। संसार में कुछ ऐसे केंद्र हैं, जहाँ वायुमार्ग विभिन्न दिशाओं से मिलते हैं, जैसे-लंदन, पेरिस, रोम, मास्को, कराची, दिल्ली, मुंबई, बैंकाक, सिंगापुर, टोकियो, सैन फ्रांसिस्को, लॉस एंजिल्स, शिकागो, न्यूयार्क, रियो डि जेनेरो आदि। सोवियत एशिया और अफ्रीका में वायु सेवाओं की कमी है, परंतु उत्तरी गोलार्द्ध में पूर्व से पश्चिम की ओर वायुमार्गों की एक स्पष्ट मेखला (पट्टी) दिखाई पड़ती है (चित्र 8.9)।

वायु पत्तनों पर यात्रियों, माल तथा वायुयानों के लिए अनेक सुविधाओं की आवश्यकता पड़ती है। इनके निर्माण में बहुत व्यय होता है। अत: इनका विकास उन्हीं क्षेत्रों में किया जाता है, जहाँ से पर्याप्त संख्या में यात्री तथा बड़ी मात्रा में ढोने के लिए सामान उपलब्ध हों। लंदन, पेरिस, रोम, न्यूयार्क, शिकागो, टोकियो तथा सिंगापुर संसार के कुछ बहुत ही व्यस्त वायु पत्तन हैं।

पाइपलाइन

पाइपलाइनों का अधिक प्रयोग तरल तथा गैस पदार्थों, जैसे-जल, खनिज तेल एवं प्राकृतिक गैस के परिवहन के लिए किया जाता है, क्योंकि इसमें इनका प्रवाह सतत बना रहता है। हम लोग पाइप लाइनों द्वारा जल तथा खनिज तेल की आपूर्ति के बारे में पहले से परिचित हैं। संसार के अनेक भागों में खाना पकाने की गैस (एल.पी.जी.) की आपूर्ति पाइप लाइनों द्वारा ही की जाती है। पानी के साथ मिलाकर कोयले के चूर्ण का परिवहन भी पाइपलाइनों के द्वारा किया जा सकता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में तेल को उत्पादन क्षेत्रों से उपभोग क्षेत्रों तक ले जाने के लिए पाइपलाइनों का सघन जाल बिछा हुआ है। इनमें सबसे प्रसिद्ध पाइपलाइन 'बिग इंच' है, जो खाड़ी के तटीय कुओं से प्राप्त तेल को उत्तरी पूर्वी भाग में पहुँचाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका में कुल प्रतिटन किलोमीटर माल ढुलाई का 17 प्रतिशत पाइप लाइनों द्वारा ही ढोया जाता है।
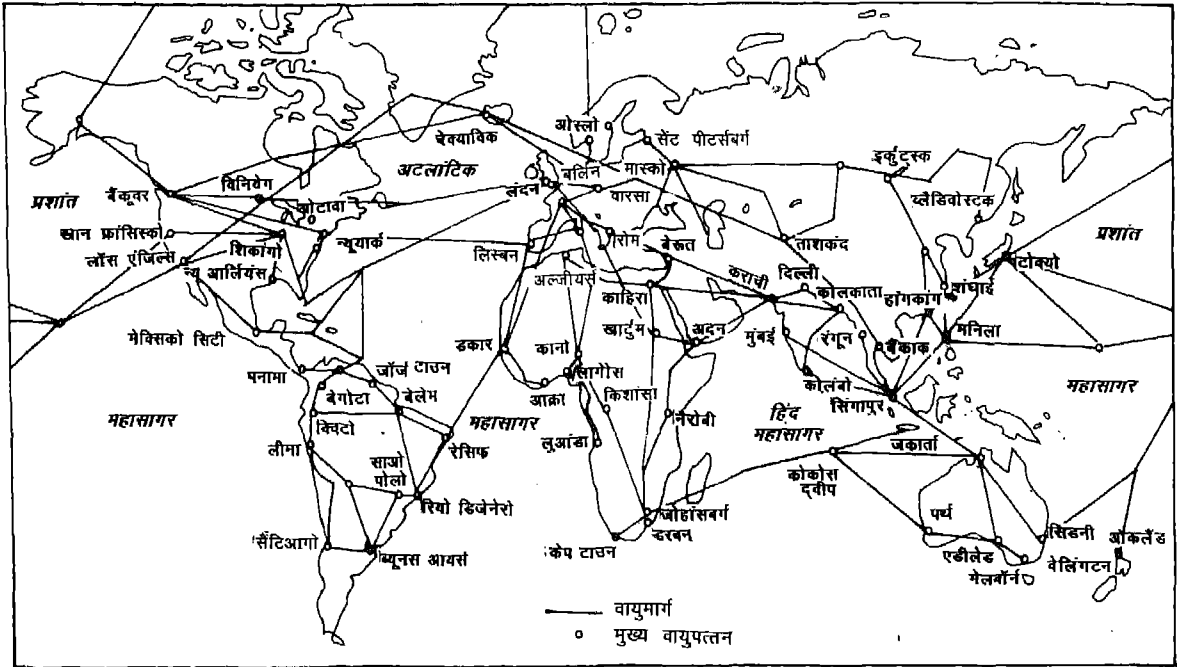
चित्र 8.9 प्रमुख वायुमार्ग और वायुपत्तन

यूरोप, पश्चिमी एशिया (चित्र 8.10), रूस और भारत में तेल कुओं को परिष्करणशालाओं एवं आंतरिक बाजार से जोड़ने के लिए पाइप लाइनों का ही प्रयोग किया जाता है। एक स्थान से दूसरे स्थान तक प्राकृतिक गैस पहुंचाने के लिए भी अधिकतर पाइप लाइन का प्रयोग होता है। पूर्वी यूरोपीय देशों में यूराल तथा वोल्गा के बीच के तेल कुओं को जोड़ने के लिए बनाई गई 'कामेकान' नामक पाइप लाइन 4,800 किमी. लंबी है, जो संसार की एक सबसे लंबी पाइप लाइन है।

संचार

मानव ने पृथ्वी पर अविर्भाव के बाद से ही संदेश भेजने के लिए अलग-अलग माध्यम अपनाए। यद्यपि कालक्रम में इसमें तीव्र परिवर्तन देखे गए। आधुनिक प्रौद्योगिक विकास ने संचार के साधनों के रूप में मनुष्यों के प्रत्यक्ष संपर्क को परिवर्तित नहीं किया है। आज नए आविष्कारों ने लंबी दूरी के संचार को पहले से अधिक सरल बना दिया है, जिसमें संदेश भेजने अथवा संदेश प्राप्त करने वाले को अपनी जगह से हिलना भी नहीं पड़ता। संचार प्रणाली में पहला महत्त्वपूर्ण आविष्कार दूरसंचार था। पश्चिमी अमेरिका के उपनिवेशीकरण के लिए उन्नीसवीं सदी के अंत में तार ही माध्यम बना। टेलीफोन अमेरिका के नगरीकरण में एक निर्णायक कारक था, क्योंकि इससे बड़ी कंपनियों के मुख्यालयों पर ही कार्यों का संकेंद्रण संभव हुआ तथा उनकी शाखाएँ छोटे नगरों में स्थापित की गईं। आज भी टेलीफोन ही सर्वाधिक उपयोग किया जाने वाला दूरसंचार का माध्यम है।

रेडियो, टेलीविजन, फैक्स और इंटरनेट के विकास ने संचार को, सभी के लिए सुगम बना दिया है। इससे समय और स्थान की सभी बाधाएँ दूर हो गई हैं। परिवहन की तुलना में आधुनिक संचार तंत्र ने पूरे संसार को एक वैश्विक ग्राम में बदल दिया है। समसामयिक सामाजिक और आर्थिक विकास पूरी तरह से आधुनिक संचार तंत्र पर निर्भर है। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ से मध्य काल तक अमेरिकी तार और टेलीफोन कंपनी का संयुक्त राज्य अमेरिका के टेलीफोन उद्योग पर एकाधिकार था। प्रतिस्पर्धा के बढ़ने पर टेलीफोन कंपनियाँ अपनी प्रणालियों को निरंतर उन्नत बनाती रहीं। इन्होंने ताँबे के तारों के स्थान पर तंतु-प्रकाशिकी लाइनों का उपयोग शुरू कर दिया। इसके उपयोग से भारी संख्या में आँकड़ों का तेजी से, सुरक्षित और पूर्णतया दोषरहित प्रसारण संभव हो गया।

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक सूचनाओं के अंकीकरण से दूरसंचार धीरे-धीरे कंप्यूटर का अंग बन गया, जिसमें इंटरनेट के माध्यम से एक समन्वित तंत्र का निर्माण हुआ।
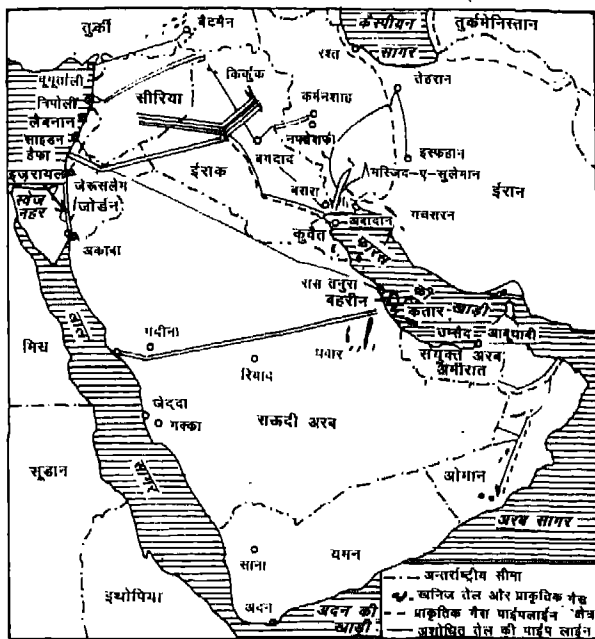
चित्र 8.10 पश्चिम एशिया पाइपलाइन

आज संसार में इंटरनेट सबसे बड़ी इलेक्ट्रॉनिक प्रणाली है, जो 100 से अधिक देशों में 10 करोड़ लोगों को जोड़ रही है।

इंटरनेट की सुविधाजनक संपर्क प्रणाली द्वारा कोई प्रयोगकर्त्ता माइक्रोकंप्यूटर और मोडम के माध्यम से साइबर स्पेस से जुड़ सकता है और इससे संबंधित विविध प्रकार की नवीनतम जानकारी प्राप्त कर सकता है। साइबर स्पेस, इलेक्ट्रॉनिक कंप्यूटरीकृत क्षेत्र का संसार है, जो इंटरनेट और वर्ल्ड वाइड वेब जैसी प्राद्योगिकी से संचालित होता है। सूचना संसार (साइबर स्पेस) आज किसी कार्यालय, जहाज या कहीं भी हो सकता है।

चूँकि प्रतिवर्ष लाखों नए ग्राहक इंटरनेट से जुड़ रहे हैं, अत: सूचना संसार के आकार, प्रयोग तथा महत्त्व में वृद्धि हो गई है। इसके अंतर्गत ई. मेल व इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य भी शामिल हैं। इस प्रकार अब सूचना सर्वत्र विद्यमान है। संक्षेप में, दूर संचार क्रांति ने मानवीय सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र का काफी विस्तार कर दिया है।

उपग्रह संचार

अंतरिक्ष शोध में संयुक्त राज्य अमेरिका एवं पूर्व सोवियत संघ अग्रणी हैं। इन देशों द्वारा ही कृत्रिम उपग्रहों के पृथ्वी की कक्षा में सफलतापूर्वक स्थापित किए जाने के प्रयास से संचार के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। जब से 1970 के दशक में उपग्रह संचार प्रणाली का प्रारंभ हुआ, दूरी के संदर्भ में संचार के मूल्य और समय लगभग एक जैसा है। उपग्रह के माध्यम से संदेश भेजने का खर्च 500 कि.मी. से 5000 कि.मी. तक लगभग समान हो गया है। भारत ने भी अंतरिक्ष शोध में अत्यधिक प्रगति की है। प्रथम भारतीय संचार उपग्रह आर्यभट्ट 19 अप्रैल, 1975 को पूर्वकालिक सोवियत संघ के इंटरकॉसमास राकेट द्वारा छोड़ा गया। 7 जून, 1979 को भास्कर-1 तथा 18 जुलाई, 1980 को भारत के कास्मोड्रोम श्री हरि कोटा से रोहिणी उपग्रह को प्रक्षेपित किया गया।

19 जून, 1981 को एक प्रायोगिक दूरसंचार उपग्रह एप्पल (एरियन पैसेंजर पेलोड एक्सपेरीमेंट) एरियन राकेट के द्वारा छोड़ा गया। भास्कर-2 का प्रक्षेपण 20 नवंबर, 1981 को हुआ, जो भास्कर-1 की भाँति ही दूरसंवेदन उपग्रह था। 10 अप्रैल, 1982 को इन्सैट-1 ए उपग्रह का प्रक्षेपण हुआ परंतु सितम्बर 1982 से इसने कार्य करना बंद कर दिया। अत: 30 अगस्त, 1983 को इन्सैट-1 बी अंतरिक्ष 'शटल चैलेंजर' के द्वारा छोड़ा गया। इन्सैट-1 बी से रेडियो, दूरदर्शन (टेलीविजन) तथा दूरसंचार के अन्य माध्यमों में क्रांतिकारी क्षमता आ गई है। आज हम टेलीविजन पर मौसम की जानकारी प्राप्त करते हैं। आँधी और तूफानों की पूर्व-सूचना भी प्रभावशाली तरीके से दी जा रही है।

दूरसंवेदन द्वारा लक्ष्य को बिना स्पर्श किए, अत्यधिक दूरी से भौगोलिक सूचनाओं का संग्रह, संचयन तथा शोधन किया जाता है। इस प्रक्रिया में सामान्यत: बड़े क्षेत्र के ही आँकड़े प्राप्त होते हैं।

सबसे अच्छे उपग्रह चित्र, नासा के लैंडसाट उपग्रहों द्वारा उपलब्ध हो रहे हैं। प्रथम इ.आर.टी.एस. (अर्थ रिसोर्सेज टेक्नोलाजी सेटेलाइट) यानी पृथ्वी संसाधन प्रौद्योगिक उपग्रह को 1972 में अंतरिक्ष में छोड़ा गया था। नासा और संयुक्त राज्य भौमिकीय सर्वेक्षण विभाग के संयुक्त प्रयास से कार्य करने वाले लैंडसैट को अप्रैल 1999 में छोड़ा गया। इन उपग्रहों ने पृथ्वी से संबंधित विस्तृत सूचनाएँ प्रदान की हैं, जिनका प्रयोग विभिन्न वैज्ञानिकों तथा मानचित्र निर्माणकर्त्ताओं द्वारा हो रहा है।

अमेरिकी तथा रूसी सरकारों ने टोही उपग्रहों द्वारा संग्रह किए गए आँकड़ों पर लगे प्रतिबंध ढीले कर दिए हैं। इसके परिणामस्वरूप निजी कंपनियों द्वारा इनका उपयोग असैन्य मौसम के पूर्वानुमान, वनोन्मूलन अनुप्रयोगों, जैसे-क्षेत्रों की

स्थिति का निर्धारण और खनिजों के भंडार और सैकड़ों भौतिक प्रारूपों तथा प्रतिक्रियाओं की पहचान, प्रदूषण का अनुमान तथा गृह–स्थलों के विश्लेषण में सर्वाधिक किया जा रहा है। ज्यो-ज्यों प्रौद्योगिकी का विकास हो रहा है, सरकारों, शिक्षण संस्थाओं, बुद्धिजीवियों तथा व्यावसायिकों द्वारा इन उपग्रहचित्रों के नए प्रयोग के क्षेत्र खोजे जा रहे हैं।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए :
   - (i) परिवहन के तीन मुख्य माध्यमों के नाम बताइए।
   - (ii) परिवहन और संचार में अंतर स्पष्ट कीजिए।
   - (iii) पाइपलाइनों का विस्तृत उपयोग खनिज तेल और प्राकृतिक गैस जैसी सामग्रियों का परिवहन करने के लिए क्यों होता हैं ?
   - (iv) महामार्ग क्या हैं ?
   - (v) रेलमार्गों के विकास में किन कारकों का योगदान है ?
   - (vi) अंतर्महाद्वीपीय रेल मार्ग क्या हैं ?
   - (vii) जल परिवहन के क्या लाभ हैं ?
   - (viii) उत्तर अमेरिका के दो प्रमुख आंतरिक जल मार्गों के नाम बताइए।
   - (xi) उत्तर प्रशांत मार्ग किन प्रमुख पत्तनों को जोड़ता है ?
   - (x) संसार में वायु मार्गों के अति सघन जाल वाले तीन मुख्य प्रदेश कौन से हैं ?
   - (xi) इंटरनेट क्या है ?
2. संक्षिप्त टिपप्णी लिखिए :
   - (i) साइबेरियापारीय रेल मार्ग;
   - (ii) यूरोप के अंतरिक जल मार्ग;
   - (iii) स्वेज नहर;
   - (iv) उपग्रह संचार
3. विश्व में सड़कों और महामार्गों के वितरण का वर्णन कीजिए।
4. परिवहन के रूप में रेल मार्गों के महत्त्व और उनके वितरण प्रारूप की विवेचना कीजिए।
5. उत्तर एवं दक्षिण अटलांटिक मार्ग का वर्णन कीजिए।

9 अध्याय

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार

व्यापार से तात्पर्य वस्तुओं और सेवाओं का अधिशेष क्षेत्र से अभाव क्षेत्रों की ओर परिवहन है। जब वस्तुओं और सेवाओं का आदान-प्रदान दो देशों के बीच होता है, तो इसे *अंतर्राष्ट्रीय व्यापार* कहते हैं। ऐतिहासिक कालों से ही व्यापार मार्गों ने संस्कृति-विस्तार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। चीन तथा दक्षिणी पश्चिमी एशिया के मध्य 'पुराने रेशम-मार्ग' के बारे में आपने अवश्य पढ़ा या सुना होगा। इस दक्षिणी स्थल मार्ग से होकर जाने वाले कारवाँ रेशम, लोहे का सामान और मसालों का व्यापार करते थे। संसार के विभिन्न देशों के बीच व्यापार की परंपरा, विशेषतः एशिया तथा यूरोप के बीच, बड़ी पुरानी है। कोलंबस द्वारा अमेरिका की संयोगवश खोज के पीछे व्यापार की चाह ही थी। भारत, चीनी, अरब, रोमन, डच तथा ब्रिटिश सभी का व्यापार संबंधों को बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण योगदान है।

आधुनिक काल में व्यापार का महत्त्व कम नहीं है। वस्तुतः आज व्यापार सभी अर्थव्यवस्थाओं का आधार है। हम व्यापार क्यों करते हैं और यह राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में कैसे योगदान करता है ? आप इन सभी प्रश्नों के उत्तर इस अध्याय में प्राप्त करेंगे।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के आधार

व्यापार की आवश्यकता मुख्यतः उत्पादन तथा उत्पादकता में प्रादेशिक विभिन्नता के कारण है। धरातल पर विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक संसाधनों की अवस्थिति तथा उनके वितरण में अत्यधिक विभिन्नता पाई जाती है। सभी देशों में सभी प्राकृतिक संसाधन बराबर मात्रा में नहीं मिलते। इसके अतिरिक्त इन संसाधनों के उपयोग की मात्रा भी एक देश से दूसरे देश में भिन्न होती है। अनेक कारक, जैसे-संसाधनों की उपलब्धता, आवश्यक पूँजी, प्रौद्योगिकी एवं दक्षताएँ, घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय माँग तथा सरकारी नीतियाँ विभिन्न वस्तुओं तथा सेवाओं के उत्पादन को प्रभावित व निर्धारित करती हैं। फलस्वरूप कुछ क्षेत्रों में कुछ वस्तुओं का उत्पादन आवश्यकता से अधिक होता है, जबकि अन्य का उत्पादन कम होता है। अतः देशों द्वारा अधिशेष वस्तुओं और सेवाओं का निर्यात एवं जिन वस्तुओं एवं सेवाओं की वहाँ कमी होती है, उनका आयात किया जाता है।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के उदय का एक और कारक कुछ देशों द्वारा कुछ वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन में विशिष्टता प्राप्त करना है।

कुछ देशों ने कुछ ऐसी वस्तुओं के उत्पादन में विशिष्ट दक्षता प्राप्त करली है, जिनकी माँग सारे संसार में है, उदाहरण के लिए चीन के रेशमी कपड़े, इरान की कालीन और भारतीय मसालों की प्राचीन समय से ही अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में भागीदारी रही है। आज स्विस घड़ियाँ और चाकलेट, जापानी कैमरे तथा इलेक्ट्रॉनिक के सामान, अमेरिकी बोइंग विमान तथा पश्चिमी एशियाई देशों के पेट्रोलियम की माँग अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर है।

किसी भी सामग्री का अधिक मात्रा में उत्पादन ही यह सुनिश्चित नहीं करता है कि वह अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में सम्मिलित किया जाएगा। यदि वस्तु का उत्पादन स्थानीय उपभोग स्तर से अधिक है तथा दूसरे स्थानों पर उसकी आपूर्ति कम है तो वह उत्पादन स्वयं ही अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की धारा में सम्मिलित हो जाता है। कुछ खाद्यान्न फसलों के अधिशेष (अतिरिक्त होते हुए भी), देश में मूल्यों को नियंत्रित रखने के उद्देश्य से विश्व व्यापार में प्रवेश नहीं करते हैं। उदाहरण के लिए, चावल का व्यापार बहुत ही सीमित है, क्योंकि इसके उत्पादन के अधिकांश भाग की आवश्यकता पैदा होने वाले प्रदेश में ही लोगों के उपभोग के लिए है तथा जहाँ जिस मूल्य पर यह उगाया जाता है, वह लोगों की पहुँच के अंदर होता है।

संसार में कुछ ऐसे भी उदाहरण हैं, जहाँ अधिशेष उत्पादन को या तो नष्ट कर दिया जाता है अथवा उसे समुद्र में फेंक दिया जाता है, ताकि उसका मूल्य ऊँचा बना रहे तथा जिससे उत्पादन-स्तर में गिरावट न होने पाए। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका में मक्के का उत्पादन काफी अधिक है। ऐसे ही दक्षिण अमेरिका में कोलंबिया तथा ब्राजील में कहवा का उत्पादन अधिक होता है। विश्वस्तरीय मूल्य बनाए रखने के लिए, इनके अधिशेष उत्पादनों को कुछ निश्चित वर्षों में, कम मूल्य पर बेचने के स्थान पर फेंक दिया जाता है। खाद्यान्न फसलों में गेहूँ व्यापार की दृष्टि से सबसे महत्त्वपूर्ण है।

अफ्रीका के अनेक देश दूसरी सामग्रियाँ खरीदने के लिए विदेशी मुद्रा अर्जन हेतु अपने कुछ सीमित प्रकार के प्राथमिक उत्पादनों पर ही आश्रित हैं। इनमें कहवा, कपास और कोको जैसे कृषि उत्पाद तथा खनिज पदार्थों में ताँबा शामिल हैं। उदाहरण के लिए, मारितानिया, जांबिया और र्वांडा अपनी विदेशी मुद्रा का 95 प्रतिशत से अधिक भाग कुछ प्राथमिक उत्पादनों से ही कमाते हैं। कुछ देशों में, एक ही वस्तु के उत्पादन का निर्यात पर प्रभुत्व होता है, जैसे-ज़ांबिया में ताँबा और यूगांडा में कहवा के निर्यात से इन देशों को विदेशी मुद्रा का 90 प्रतिशत से अधिक भाग प्राप्त होता है।

संसार के विभिन्न भागों में वस्तुओं तथा सेवाओं का अविच्छिन्न प्रवाह कई कारकों पर आश्रित होता है। उत्पादक प्रदेश में शांति एवं राजनीतिक स्थिरता की दशा इसका प्राथमिक कारक है। पश्चिम एशिया में समय-समय पर घटित होने वाली घटनाओं, जैसे-ईरानी-क्रांति, फिलिस्तीनी-इजराइली झगड़े, इराक-कुवैत युद्ध के प्रभाव से पेट्रोल के मूल्यों में उतार-चढ़ाव होता रहा है। इन झगड़ों तथा युद्ध से पेट्रोल के उत्पादन तथा परिवहन दोनों ही में बाधा पड़ जाती है।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के अवयव

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के तीन महत्त्वपूर्ण अवयव इसके विश्व प्रतिरूप को निर्धारित करते हैं, वे हैं : (1)-व्यापार की मात्रा (2) व्यापार की संरचना तथा (3) व्यापार की दिशा।

व्यापार की मात्रा

व्यापार की मात्रा की गणना व्यापार के अंतर्गत सम्मिलित की गई वस्तुओं की वास्तविक मात्रा द्वारा की जा सकती है, किंतु मात्रा कभी भी मूल्य की सूचक नहीं होती। अतः एक देश के व्यापार की गणना सामान्यतः कुल मात्रा और आदान-प्रदान की गई वस्तुओं के मूल्य द्वारा की जाती है। तथापि, कभी-कभी, यह प्रति व्यक्ति के आधार पर भी मापी जाती है, यानी कुल जनसंख्या में प्रति व्यक्ति कितने मूल्य का व्यापार होता है।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में लगातार परिवर्तन होता रहा है। आर्थिक मंदी के काल में कुछ तीव्र गिरावट के अतिरिक्त द्वितीय विश्व युद्ध काल के पश्चात् के वर्षों में इसकी वृद्धि दर में उत्तरोत्तर तीव्र चढ़ाव देखा गया है। विभिन्न देशों के बीच व्यापार की मात्रा में भिन्नता उत्पादित पदार्थों एवं सेवाओं की प्रकृति, द्विपक्षीय संधियों तथा व्यापार निषेधों पर निर्भर करती है।

व्यापार की संरचना (संगठन)

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में स्थान पाने वाली वस्तुओं तथा सेवाओं के प्रकारों में भी परिवर्तन हो रहा है। विगत अनेक वर्षों से औद्योगिक उत्पाद के महत्त्व में वृद्धि हुई है। यही आधुनिक व्यापार का सबसे बड़ा तथा तीव्र गति से बढ़ने वाला भाग है। बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में हुए विनिर्माण उद्योगों के तीव्र विकास तथा कर प्रतिबंधों में कमी जो विशेषतः 'गैट' (जेनरल एग्रीमेंट ऑल ट्रेड एंड टैरिफ) के अंतर्गत की गई, और वर्तमान में विश्व व्यापार संगठन के अंतर्गत किए गए प्रयासों के फलस्वरूप ऐसा संभव हुआ। हाल के वर्षों में कोयला, कपास, रबर और ऊन जैसे प्राथमिक उत्पादों का महत्त्व घट गया है। आज पेट्रोलियम का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

व्यापार की दिशा

अट्ठारहवीं शताब्दी तक, विनिर्मित और मूल्यवान वस्तुएँ आज के विकासशील देशों द्वारा यूरोप को निर्यात की जाती थीं। उन्नीसवी सदी में व्यापार की दिशा में परिवर्तन आया। यूरोप से औद्योगिक उत्पादों का विनिमय तीन दक्षिणी महाद्वीपों के खाद्य पदार्थों एवं कच्चे माल से होता था। बीसवीं सदी के पूर्वाद्र्ध में औद्योगिक उत्पादित वस्तुओं का अधिकांश व्यापार संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोप के बीच ही होता था। उसी अवधि में जापान दूसरा महत्त्वपूर्ण व्यापारिक देश बना। बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में, पुराना प्रतिरूप बदलने लगा। विकासशील देश भी अब विकसित देशों से उद्योग के द्वारा उत्पादित वस्तुओं के व्यापार

प्रतिस्पर्धा करने योग्य हो गए। अब प्रौद्योगिकी-व्यापार को महत्त्व दिया जा रहा है।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के प्रकार

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार दो प्रकार के हो सकते हैं। *द्विपक्षीय व्यापार* में दो देशों के बीच वस्तुओं का विनिमय होता है। ऐसा तभी संभव है, जब दोनों देशों की अर्थव्यवस्थाएँ एक दूसरे की पूरक हों। एक देश औद्योगिक उत्पादों के बदले कच्चे माल या ऊर्जा का विनिमय कर सकता है। ऐसा कुछ निश्चित वस्तुओं के संदर्भ में सीमित मात्रा में ही संभव हो पाता है। दूसरी ओर *बहुपक्षीय व्यापार* वस्तुओं या सेवाओं का कई देशों के बीच विनिमय है।

व्यापार संतुलन

आयात एवं निर्यात के बीच मूल्यों में अंतर को *व्यापार संतुलन* कहते हैं। यदि किसी देश का निर्यात उसके आयात से अधिक है तो इसे उस देश के पक्ष में *अनुकूल व्यापार संतुलन* कहा जाता है। यदि आयात उसके निर्यात से अधिक है, तो इसे *असंतुलित* अथवा *विलोम व्यापार संतुलन* की संज्ञा दी जाती है।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार-बदलता दृश्य पटल

समय के साथ-साथ व्यापार की मात्रा तथा गुण दोनों ही में आधारभूत परिवर्तन हुए हैं। समय के साथ, आर्थिक मूल्य तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में अधिकांश मूल्य अभिवृद्धि के लिए उत्तरदाई वस्तुओं के प्रमुख प्रकारों में परिवर्तन होते रहे हैं। इस परिवर्तन के लिए प्रौद्योगिकी का विकास एक गति देने वाला कारक सिद्ध हुआ है।

प्रथम अवस्था में प्राथमिक पदार्थों, जैसे - कच्चे माल, खनिज तथा खाद्य उत्पादों का ही प्रभुत्व रहा। *द्वितीय अवस्था* में औद्योगिक क्रांति के साथ अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में सबसे बड़ा अंशदान विनिर्माण उद्योग द्वारा उत्पादित वस्तुओं का था तथा यही क्षेत्र सर्वाधिक लाभप्रद भी था। इस अवस्था में प्राथमिक उत्पादों की वस्तुओं के व्यापार भी होते थे। परंतु उत्पादों के प्रौद्योगिकीय सुधार के फलस्वरूप मानक उत्पादों का व्यापार अधिक आकर्षक बन गया। *तृतीय अवस्था* में सेवाएँ भूमंडलीय सामग्री बन गई, जिनका हिस्सा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में बढ़ने लगा।

सूचना एवं परिवहन के क्षेत्र में दोहरी प्रौद्योगिक क्रांति ने व्यापार की जाने वाली वस्तुओं की संख्या में वृद्धि तथा उनकी गुणवत्ता में सुधार को प्रोत्साहित किया। बीसवीं शताब्दी में परिवहन व्यय में लगातार कमी होती रही। संचार प्रौद्योगिकी की उन्नति, जैसे – टेलीफोन, फैक्स, इलेक्ट्रॉनिक मेल और वीडियो कांफरेंसिंग (चित्रात्मक संवाद) ने भिन्न स्थानों पर औद्योगिक उत्पादों के समन्वयन तथा नियंत्रण की सुविधा प्रदान की है। अटलांटिक के आर पार केबुल की क्षमता में वृद्धि के फलस्वरूप भूभंडलीय संचार की क्षमता भी बढ़ी।
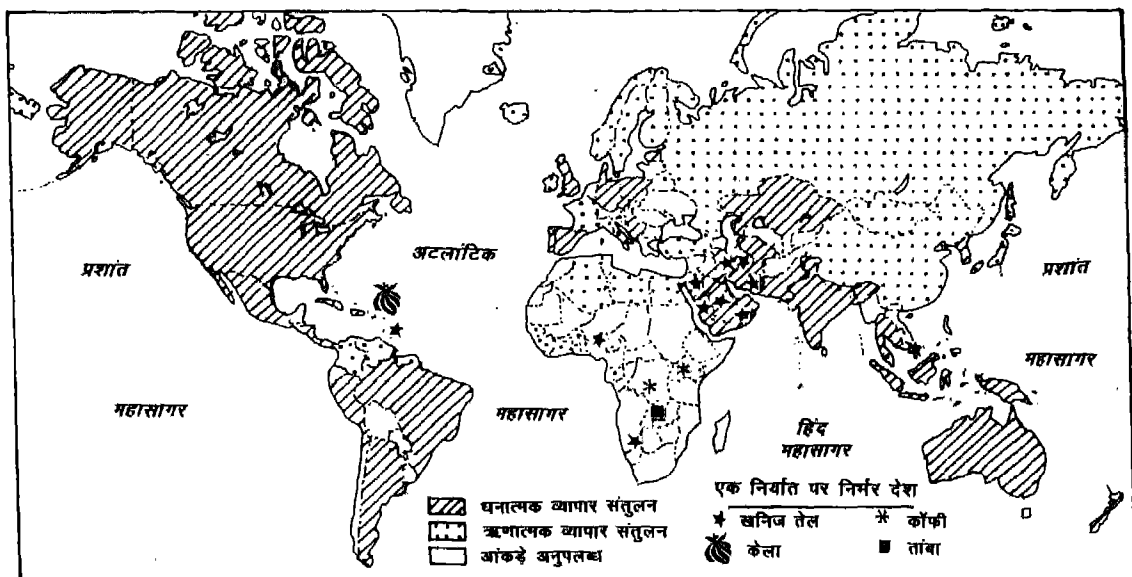
चित्र 9.1 विश्व : व्यापार संतुलन

सारणी. 9.1 विश्व-व्यापार का संघटन- 1965-96

गैट विश्व व्यापार संगठन (WTO) का व्यापार विभाजन कुल विश्व व्यापार का हिस्सा*	*1970*	*1980*	*1990*	*1996*
व्यापारिक माल				
कृषि	16.5	12.5	10.0	11.4
खनन	12.0	22.0	11.5	11.2
औद्योगिक उत्पाद	50.0	45.5	57.0	73.2
(निर्दिष्ट नहीं)	2.5	3.0	2.5	3.0
पूँजीगत वस्तुएँ	29.5	26.5	37.0	39.0
सेवाएँ**	19.0	17.0	19.0	24.6
विश्व-बैंक का विभाजन				
विश्व के कुल व्यापारिक आयात का हिस्सा	**1965**	**1979**	**1990**	**1995**
खाद्य	18.0	12.0	9.0	12.2
ईंधन	10.0	20.0	11.0	9.0
अन्य प्राथमिक सामान	17.0	9.0	8.0	7.7
औद्योगिक वस्तुएँ	55.0	58.0	73.0	72.0
मशीनी परिवहन	23.0	25.0	34.0	30.9

** गैट 1992: सारणी 2; 1990 : सारणी 8; 1989: सारणी 9; डब्लू टी ओ, 1997, सारणी 11.2***
सेवाओं में नौकायन, परिवहन, यात्रा और निजी सेवाएँ सम्मिलित की जाती हैं।

इससे विभिन्न देशों की व्यापारिक संस्थाओं में अधिक आदान-प्रदान की सुविधाओं का विकास हुआ।

व्यापार की उभरती खंडीय (क्षेत्रीय) संरचना

हाल के वर्षों में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आया है, जिसमें पूँजीगत वस्तुओं विशेषत: मशीनों तथा परिवहन एवं वाणिज्यिक सेवाओं में उच्च वृद्धि प्रदर्शित हो रही है। इसके विपरीत प्राथमिक वस्तुओं के व्यापार में लगातार कमी होती रही है, विशेषत: विगत 30 वर्षों में ऐसी स्थिति का कारण औद्योगिक एवं सेवा-व्यापार के मूल्यों की तुलना में प्राथमिक उत्पादों के मूल्यों में, चक्रीय ह्रास हैं। औद्योगिक व्यापार का अभी भी बाहुल्य है, किंतु इसका बाजार नए स्पर्धात्मक लाभ हेतु ग्राहकों को उनके आवश्यकतानुसार उत्पादों को उपलब्ध कराने के कारण अधिकाधिक अंतरपूर्ण होता जा रहा है। सन् 1960 तक अधिकांश राष्ट्रीय या ट्रांस नैशनल कंपनियाँ या तो अमेरिकी या ब्रिटिश संगठन के अंतर्गत थीं। हाल के वर्षों में जापान, जर्मनी एवं कुछ अन्य देशों की कंपनियाँ भूमंडलीय स्तर पर अधिक महत्त्वपूर्ण हो गई हैं। ट्रांस नैशनल कंपनियों की शक्ति एवं प्रभाव में उदारीकरण के कारण वृद्धि हुई है।

सेवाओं में दर्शाई गई तीव्र वृद्धि एक नवीन कारक है। सन् 1996 में कुल विश्व निर्यात का 25 प्रतिशत भाग सेवाओं का था। सेवा व्यापार गुणात्मक रूप में औद्योगिक व्यापार से इस अर्थ में भिन्न होता है कि ये सेवाएँ असीमित विस्तारण योग्य तथा भार रहित होती हैं। कई लोग इसे एक साथ प्रयोग कर सकते हैं तथा वस्तुओं का एक बार उत्पादन हो जाने के पश्चात् उनको कम मूल्य पर पुनरुत्पादित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए कुछ कंपनियों, जैसे - आई.बी.एम. द्वारा परंपरागत रूप से माल या वस्तु का उत्पादन करने के विपरीत सेवाएँ प्रदान करके ही अधिक लाभ प्राप्त किया जा रहा है।

सारणी 9.2 : चयनित देशों में व्यापार विशिष्टीकरण

देश	*ऊर्ध्वाधर व्यापार*	*क्षैतिज व्यापार*
आस्ट्रेलिया	13	87
कनाडा	44	56
डेनमार्क	27	73
फ्रांस	28	72
जर्मनी	19	81
जापान	3	97
नीदरलैंड	47	53
यूनाइटेड किंगडम	30	70
संयुक्त राज्य अमेरिका	12	88

यह भविष्यवाणी की गई है कि इक्कीसवीं शताब्दी में, "वस्तु व्यापार को और उच्चीकृत किया जायगा और विश्वस्तर पर व्यापार द्वारा सबसे अधिक लाभ जीवन जैसी अंतर्क्रियात्मक या लगभग वास्तविक अनुभवों के विक्रय से ही प्राप्त होगा"। उत्पादनों के नवीन भूमंडलीकरण ने भी व्यापारिक वस्तुओं के प्रकारों को परिवर्तित कर दिया है। उदाहरण के लिए आज के व्यापार का बहुत बड़ा हिस्सा एक तैयार माल के स्थान पर छोटे-बड़े कल पुर्जों या पार्ट्स के व्यापार के रूप में हो रहा है। ऊर्ध्वाधर विशिष्टीकरण उन देशों में स्थान लेता है, जहाँ एक देश उत्पादन प्रक्रिया के किसी एक चरण में विशिष्टीकरण प्राप्त कर लेता है। जैसे एक देश एक वस्तु का दूसरे देश से आयात कर अपने यहाँ उसके उपयोग से किसी अन्य वस्तु का निर्माण करके उसे दूसरे देश को निर्यात करता है। यह क्रम तभी समाप्त होता है, जब अंतिम उत्पादन अपने लक्ष्य पर पहुँच जाता है। उदाहरण के लिए माइक्रोचिप के डिजाइन तथा उत्पादन संबंधी कुशलताएँ एक देश में हों तथा उन्हें मेमोरी-बोर्ड पर लगाने का श्रम-साध्य कार्य दूसरे देश में हो, तो इसे *ऊर्ध्वाधर-व्यापार* कहते हैं, परंतु कम्प्यूटर बनाने का संपूर्ण कार्य यदि एक ही देश में करके उसे दूसरे देश को निर्यात किया गया तो उसे *क्षैतिज-व्यापार* कहेंगे (सारणी 9.2)।

व्यापार का विश्व-प्रतिरूप

कृषि तथा औद्योगिक उत्पादनों में अत्यधिक उच्च विशिष्टीकरण के कारण आज अंतर्राष्ट्रीय व्यापार बहुत ही जटिल हो गया है। आज यह विश्व की अर्थव्यवस्था का एक महत्त्वपूर्ण अंग बन गया है। विगत लगभग 25 वर्षों में विश्व के कुल उत्पादन की तुलना में वैश्विक व्यापार में अधिक तीव्रता से वृद्धि हुई है। 1985 से 1995 के मध्य, विश्व निर्यात मूल्य की औसत वार्षिक वृद्धि दर कुल उत्पादन दोगुनी थी। यह दर, विश्व जनसंख्या वृद्धि से कई गुना अधिक थी। मोटे रूप में आज संसार के कुल उत्पादन का 25 प्रतिशत भाग का व्यापार राष्ट्रों के बीच होता है।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की आधारभूत संरचना कुछ व्यापार संघों के ऊपर आश्रित होती है। *व्यापार संघ* ऐसे देशों का समूह है जिनके भीतर व्यापारिक अनुबंधों की सामान्यीकृत प्रणाली कार्य करती है। संसार का अधिकांश व्यापार इन्हीं संघों के बीच होता है। इन संघों की सदस्यता पर निम्न तीन बातों का प्रभाव पड़ता है : (i) दूरी; (ii) औपनिवेशिक संबंधों की परंपरा; तथा (iii) भू-राजनीतिक सहयोग।

1950 से 2000 ई. तक की अवधि में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार पर निम्नलिखित का प्रभुत्व था :

- पश्चिमी यूरोप के साथ अफ्रीका, दक्षिण अमेरिका, एशिया, केरिबियन तथा ओशनिया के कुछ पूर्ववर्ती उपनिवेश;
- उत्तर अमेरिका के साथ कुछ लैटिन अमेरिकी राष्ट्र;
- पूर्ववर्ती सोवियत संघ के देश; और
- जापान के साथ अन्य पूर्वी एशियाई देश और सउदी अरब तथा बहरीन जैसे तेल निर्यातक देश।

प्रादेशिक व्यापारिक संघ

अधिकांश देशों द्वारा यह देखा जा रहा है कि व्यापार में संरक्षणात्मक बाधाएँ राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं के लिए घातक होती हैं। अत: अधिकांश सरकारों ने आयात पर शुल्क तथा नियंत्रण कम कर दिया है। अनेक देशों के अपने व्यापारिक सदस्य देशों के साथ सरल द्विपक्षीय अनुबंध हैं। इससे अलग-अलग उत्पादों के आधार पर व्यापार बाधाओं में ढील या उनका उन्मूलन हो जाता है।

द्वितीय विश्व युद्ध से ही विश्वस्तर पर इस उद्देश्य की पूर्ति करने वाली प्राथमिक संस्था गैट (व्यापार एवं शुल्क पर सामान्य सहमति) है। अनेक सहमतियों के आधार पर इसने विश्वस्तर पर व्यापार शुल्क में क्रमबद्ध रूप से कमी कराई है। द्वितीय विश्व युद्ध के उत्तर काल में इसने भूमंडलीय आर्थिक क्रांति में महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। प्रारंभ में गैट के सभी सदस्य मूलत: विकसित राष्ट्र के ही थे। जल्दी ही इसमें विकासशील देशों को सम्मिलित किया गया। संसार के लगभग सभी देश अब इसके सदस्य हैं।

सन् 1995 में गैट का रूप बदलकर विश्व व्यापार संगठन बन गया। यह जेनेवा में एक स्थायी संगठन के रूप में कार्यरत है तथा यह व्यापारिक झगड़ों का निपटारा भी करता है। यह संगठन सेवाओं के व्यापार को भी नियंत्रित करता है। किंतु इसमें अभी भी महत्त्वपूर्ण शुल्क रहित बाधाओं, जैसे-निर्यात, निरीक्षण की आवश्यकता, स्वास्थ्य एवं सुरक्षा स्तरों तथा आयात लाइसेंस व्यवस्था, जिनसे आयात अवरुद्ध होता है, को सम्मिलित करना शेष है।

इन विस्तृत भूमंडलीय सहमतियों के अतिरिक्त अनेक देश प्रादेशिक व्यापारिक संघ में सम्मिलित हो गए हैं। यह देशों की

ऐसी परिषद है जिसका उद्देश्य संरक्षणवाद को कम करना तथा सदस्य देशों के बीच आर्थिक संबंधों में वृद्धि करना है।

यूरोपीय संघ

यूरोपीय संघ (ई.यू.) का गठन मूल रूप से 1957 में रोम संधि के फलस्वरूप छः देशों, इटली, फ्रांस, जर्मनी, बेल्जियम, नीदरलैंड एवं लक्ज़ेमबर्ग द्वारा किया गया। इसे यूरोपीय आर्थिक समुदाय (ई.ई.सी.) कहा गया था तथा बाद में इसमें पश्चिमी यूरोप के अधिकांश देशों को सम्मिलित कर इसका विस्तार कर दिया गया।

ई.ई.सी. ने यूरोप को 1970 के पेट्रोल-शॉक और धीमी आर्थिक वृद्धि के दुष्प्रभाव से उबारने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। इसने 1992 में अपने सदस्य देशों के मध्य अनेकों व्यापार-बाधाओं के उन्मूलन की एक महत्त्वाकांक्षी योजना प्रारंभ की।

सन् 1995 में यूरोपीय आर्थिक समुदाय यूरोपीय संघ में परिवर्तित हो गया। इसने कई उत्पादन एवं व्यापार नीतियों का सामंजस्यीकरण किया। 1999 के प्रारंभ में सभी सदस्य देशों में समान रूप से चलने वाली मुद्रा-यूरो को प्रचलित किया गया, ताकि विभिन्न देशों को एक आर्थिक व्यवस्था के अंतर्गत प्रभावशाली ढंग से एक सूत्र में बाँधा जा सके। 4000 करोड़ की जनसंख्या वाला यह संघ संसार का अकेला सबसे बड़ा बाजार है।

यूरोपीय स्वच्छंद व्यापार संघ (ई.एफ.टी.ए.)

वर्ष 1960 में, सात देशों यूनाइटेड किंगडम, आस्ट्रिया, डेनमार्क, नार्वे, स्वीडन, पुर्तगाल तथा स्विटजरलैंड ने मिलकर इस संघ का गठन किया जिसका उद्देश्य व्यापार के क्षेत्र में आपसी सहयोग करना था। इन देशों ने आपसी व्यापार में व्यापार-शुल्क को हटा दिया है। दिसंबर 1972 में यूनाइटेड किंगडम तथा डेनमार्क ने इसकी सदस्यता त्याग दी तथा ई.ई.सी. के सदस्य बन गए। परंतु आइसलैंड इसमें सम्मिलित हो गया और फिनलैंड ने इस संगठन की सह-सदस्यता स्वीकार कर ली। अतः अब इनकी सदस्यता पुनः सात देशों की हो गई।

उत्तर अमेरिका स्वच्छंद व्यापार संघ (एन.ए.एफ.टी.ए.)

यूरोपीय संघ की तुलना में उत्तर अमेरिका स्वच्छंद व्यापार संधि (नाफ्टा) अधिक सरल है। इसका उद्भव 1988 में संयुक्त राज्य अमेरिका कनाडा फ्री ट्रेड एग्रीमेंट (संयुक्त राज्य-कनाडा स्वच्छंद व्यापार संधि) के रूप में हुआ, जिसमें धीरे-धीरे व्यापार-प्रतिबंधों को दुनिया के दो वृहत्तम व्यापारिक सहयोगियों के बीच समाप्त कर दिया गया। वर्ष 1994 में नाफ्टा का विस्तार कर उसमें मेक्सिको को सम्मिलित कर लिया गया। यह पहला अवसर था, जब विकसित देशों के व्यापार संघ में एक विकासशील देश को सदस्यता मिली थी। नाफ्टा में अब लैटिन अमेरिकी देशों को भी सम्मिलित कर लिया गया है। इससे एक ऐसे स्वच्छंद व्यापार क्षेत्र का निर्माण हुआ है, जो अलास्का से टिएरा डेल फ्यूगो तक के क्षेत्र में फैला हुआ है।

पेट्रोलियम निर्यातक देशों का संगठन (ओपेक)

ओपेक के 13 सदस्य देश हैं- अल्जीरिया, इक्वेडोर, गैबन, इंडोनेशिया, ईरान, इराक, कुवैत, लीबिया, नाइजीरिया, कतार, सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात, और वेनेज़ुएला हैं। यह संगठन 1960 में पेट्रोलियम (कच्चे तेल) के मूल्यों संबंधी नीतियों को निर्धारित करने के लिए पेट्रोलियम उत्पादक देशों द्वारा बनाया गया था।

दक्षिण पूर्वी एशियाई राष्ट्रों का संगठन (ए.एस.ई.ए.एन)

दक्षिण पूर्वी एशियाई राष्ट्रों के संगठन (आसियान) का गठन 1967 में हुआ था। इंडोनेशिया, मलयेशिया, थाइलैंड, फिलिपींस और सिंगापुर जैसे देश इसके सदस्य हैं। आसियान तथा शेष संसार के देशों के बीच व्यापार शुल्क दर, प्रदेश के भीतर के देशों की तुलना में अधिक तीव्र गति से बढ़ रही है। जापान, यूरोपीय संघ तथा आस्ट्रेलिया एवं न्यूजीलैंड से व्यापारिक बातचीत करते समय आसियान अपने सदस्य देशों को एक संयुक्त मसौदे का उदाहरण प्रस्तुत करके उनकी मदद करता है। आजकल भारत भी इसका एक सह-सदस्य बन गया है।

दक्षिण एशिया प्रादेशिक सहयोग संगठन (सार्क)

भारत, पाकिस्तान, बांग्ला देश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका और मालदीव, सात दक्षिण एशियाई देशों ने मिलकर 'दक्षिण एशिया प्रादेशिक सहयोग संगठन (सार्क)' का गठन किया है। इसका एक उद्देश्य सदस्य राष्ट्रों के बीच व्यापार का विकास करना है। भारत और पाकिस्तान के बीच संबंधों के बिगड़ने के कारण व्यापार के क्षेत्र में प्रगति रुक गई है।

समुद्री पत्तन – अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के प्रवेश द्वार

समुद्री पत्तन अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और इसलिए इन्हें अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के प्रवेश द्वार (तोरण) की संज्ञा दी जाती है। समुद्री मार्ग भारी एवं अधिक मात्रा में माल की ढुलाई का सबसे सस्ता साधन है। *पत्तन* समुद्र तट पर वह स्थान है, जहाँ दूसरे देशों से आयात किए गए माल को उतारा जाता है तथा देश के उत्पादित माल को निर्यात के रूप में बाहर भेजा जाता है। इस प्रकार यह एक 'प्रवेश एवं निकास बिंदु' का कार्य करता है।

किसी भी पत्तन द्वारा भेजे गए माल की मात्रा ही उसके पृष्ठ प्रदेश के विकास स्तर की द्योतक होती है। इसकी क्षमता का पता माल के भार एवं जलयानों की संख्या से चलता है। पत्तन पर जहाजों के खड़ा होने तथा उन पर सामान लादने तथा उतारने की व्यवस्था होती है। इस प्रकार पत्तनों पर अनेक सुविधाएँ उपलब्ध होती हैं, जैसे - जलयानों के तट पर आने तथा खड़ा होने की सुविधा, सामान लादने तथा उतारने की सुविधा, बाहर जाने अथवा देश के अंदर आने वाले सामान के भंडारण की सुविधा आदि। इन सुविधाओं को उपलब्ध कराने के लिए पत्तन प्रबंधक (पोर्ट ऑथोरिटी) को नौगम्य चैनल का रख-रखाव, बजरों, जहाजों को खींचने वाली मशीनों, श्रम तथा प्रबंधकों आदि की व्यवस्था करनी पड़ती है।

पत्तनों के प्रकार

पत्तनों का विभाजन दो प्रकार से किया जाता है : (1) उनकी स्थिति के अनुसार जैसे, आंतरिक पत्तन एवं बाह्य पत्तन ; तथा (2) इनकी कार्य विशिष्टता के आधार पर जैसे, सवारी पत्तन और वाणिज्यिक पत्तन। तथापि अधिकांश पत्तन बहुउद्देश्यीय ही होते हैं।

सवारी पत्तन : ये मुख्यत: सवारी लाइनर (जहाजों) के ठहरने के पत्तन होते हैं। इनका संबंध आंतरिक रेल, सड़क जंक्शन से होता है। मुंबई, लंदन और न्यूयार्क ऐसे पत्तनों के प्रमुख उदहारण हैं।

वाणिज्यिक पत्तन : ये मुख्यत: सामानों के आयात तथा निर्यात का कार्य संपन्न करते हैं।

तेल पत्तन : इस प्रकार के पत्तन तेल के आयात-निर्यात तथा शोधन या परिष्करण से संबद्ध होते हैं। इनमें में कुछ टैंकर-पत्तन हैं तथा कुछ परिष्करणशाला के पत्तन हैं। वेनेजुएला में माराकायबो, ट्यूनिशिया का अस्सखीरा, तथा लेबनान का ट्रिपोली, टैंकर पत्तन के उदाहरण हैं। फारस की खाड़ी पर स्थित अबादान तेल शोधन का पत्तन है।

पोर्ट ऑफ कॉल : बहुत से ऐसे पत्तन समुद्र मार्गों के मध्य विकसित हुए हैं, जहाँ जलयान, ईंधन, पानी तथा खाना लेने के लिए रुकते थे। अंततोगत्वा ये भी वाणिज्यिक पत्तन के रूप में विकसित हो गए। इस प्रकार के पत्तनों के अच्छे उदाहरण अदन, होनोलूलू तथा सिंगापुर हैं।

पैकेट स्टेशन : इनको फेरी पोर्ट भी कहा जाता है। इनका प्रयोग छोटे समुद्री मार्ग से आने वाले यात्रियों को उतारने-चढ़ाने तथा डाक लेने व देने के लिए किया जाता है। इसमें प्राय: दो स्टेशन आमने-सामने होते हैं। उदाहरण के लिए इंगलिश चैनल के एक ओर डोवर तथा दूसरी ओर कैले स्थित हैं।

बाह्य पत्तन : ये गहरे पानी के पत्तन हैं, जो वास्तविक पत्तन से दूर गहरे समुद्र में बनाए जाते हैं। अपने बड़े आकार के कारण जो जहाज वास्तविक पत्तन तक नहीं पहुँच पाते, उन्हें बाह्य पत्तन लंगर डालने या खड़े होने की सुविधा प्रदान कर वास्तविक पत्तन की सहायता करते हैं। यूरोप में इस प्रकार के उदाहरण बहुत हैं, किंतु एक सटीक उदाहरण ग्रीस में एथेंस का बाह्य पत्तन पिरॉस हैं।

आन्त्रेपो पत्तन : ये पत्तन, विभिन्न देशों से निर्यात के लिए लाए गए माल के संचयन के केंद्र होते हैं। उदाहरण के लिए एशिया में सिंगापुर तथा यूरोप में रॉटरडम एवं कोपेनहेगन बाल्टिक क्षेत्र के लिए पत्तन हैं।

नौसैनिक : इनका सामरिक महत्त्व अधिक तथा व्यापारिक महत्त्व कम होता है। यहाँ नौ सेना के लड़ाकू जहाज़ रखे जाते हैं तथा उनके मरम्मत करने की व्यवस्था भी होती है। भारत में कोचीन तथा कारवार इसके अच्छे उदाहरण हैं।

आंतरिक पत्तन : ये पत्तन समुद्र तट से दूर स्थित होते हैं, किंतु किसी नदी या नहर द्वारा समुद्र से जुड़े होते हैं। चपटे तलों वाले जहाजों अथवा बजरों की सहायता से इन तक पहुँच सकते हैं। उदाहरणार्थ, मैनचेस्टर एक नहर द्वारा जुड़ा है। मिसिसिपी नदी पर मैंफिस, राइन नदी पर डुईसबर्ग तथा मानहीम एवं गंगा की सहायक हुगली नदी पर कोलकाता इसी प्रकार के पत्तन हैं।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए:
   (i) अंतर्राष्ट्रीय व्यापार क्या है ?
   (ii) व्यापार करना क्यों आवश्यक होता है ?
   (iii) संसार के पाँच सबसे बड़े व्यापारिक देशों के नाम बताइए।
   (iv) अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के तीन प्रमुख अवयव क्या हैं ?
   (v) व्यापार-संतुलन क्या है ?
   (vi) व्यापार संघ क्या है ?
   (vii) ओपेक देशों के नाम बताइए।
   (viii) पत्तनों को 'अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का प्रवेश द्वार' क्यों कहा जाता है ?
2. अंतर स्पष्ट कीजिए :
   (i) द्विपक्षीय व्यापार और बहुपक्षीय व्यापार
   (ii) आयात और निर्यात
   (iii) ऊर्ध्वाधर व्यापार और क्षैतिज व्यापार
   (iv) बाह्य पत्तन और आंतरिक पत्तन
3. अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के प्रमुख आधारों की विवेचना कीजिए।
4. अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के परिवर्तित प्रतिरूप और ट्रांस नैशनल कंपनियों के बढ़ते महत्त्व का वर्णन कीजिए।
5. वर्तमान विश्व में व्यापार के खंडीय संघटन में प्रमुख परिवर्तनों की विवेचना कीजिए।
6. अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में प्रादेशिक व्यापार संघों के बढ़ते महत्त्व का यूरोपीय संघ, ओपेक तथा आसियान के विशेष संदर्भ में व्याख्या कीजिए।

भौगोलिक कुशलताएँ

7. संसार के रेखा मानचित्र पर निम्नलिखित को उचित चिह्नों द्वारा दर्शाइए तथा उनके नाम लिखिए :
   (i) संसार के पाँच सबसे बड़े व्यापारिक देश
   (ii) यूरोपीय स्वच्छंद व्यापार संघ (इफ्टा) के देशों के नाम
   (iii) ओपेक के सदस्य देश
   (iv) आसियान के सदस्य देश

इकाई V
मानव बस्तियाँ

10
अध्याय

मानव बस्तियाँ

आवास मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक है। यह एक झोपड़ी, एक मकान, एक फ्लैट अथवा एक बड़ी हवेली हो सकता है। *'बस्ती'* मनुष्यों के आवासों के उस संगठित निवास स्थान को कहते हैं, जिसमें उनके रहने अथवा प्रयोग करने वाले भवनों तथा उनके आने-जाने के लिए बनाए रास्तों एवं गलियों को सम्मिलित किया जाता है। इनमें आखेटकों एवं चरवाहों के अस्थाई डेरे; स्थाई बस्ती जिसे गाँव कहते हैं, तथा एक बृहत् नगरीय समूह को सम्मिलित किया जाता है। मानव बस्तियाँ कुछ घरों वाले एक छोटे पुरवे से लेकर बहुत से भवनों वाले नगर या मेगालोपोलिस हो सकते हैं, जिसमें लाखों लोग रहते हैं।

बस्तियों का अध्ययन उनके स्थल, उनकी स्थिति, आकार, मकानों, प्रारूपों, कार्यों, आंतरिक संरचना, बाहरी-सहलग्नता, तथा राष्ट्रीय एवं भूमंडलीय अर्थव्यवस्था में उनकी भूमिका के संदर्भ में किया जा सकता है। *स्थल* से तात्पर्य उस वास्तविक भूमि से है जिस पर बस्ती बनी हुई है। बस्ती की *स्थिति* से तात्पर्य उसके आस-पास के गाँवों के संबंध में उसकी अवस्थिति बताना है। बस्तियों के स्थल एवं स्थिति तथा उनके भवनों के प्रकारों का अध्ययन भौतिक पर्यावरण तथा सांस्कृतिक विरासत के संदर्भ में किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, एक गाँव किसी पहाड़ी पर अथवा नदी के किनारे पर स्थित हो सकता है। इस प्रकार स्थल यह निर्धारित करेगा कि वहाँ जल की उपलब्धता कैसी होगी या वर्षा ऋतु में बाढ़ से प्रभावित होने की संभावना क्या है। किसी प्रदेश विशेष में बस्ती का रूप प्राकृतिक पर्यावरण को भी प्रतिबिंबित करता है।

बस्ती के कार्य, सहलग्नता तथा भूमिका उस पृष्ठ प्रदेश की प्रकृति को दर्शाती है जिससे बस्ती को भरण-पोषण के साधन प्राप्त होते हैं एवं उसके संपूर्ण विकास का स्तर सुनिश्चित होता है। बस्तियों का वर्तमान स्वरूप एक लंबी अवधि के क्रमिक विकास का द्योतक है। इतिहास के सभी कालों में, कृषि एवं औद्योगिक-प्रौद्योगिकी में होने वाले प्रत्येक नवीन परिवर्तन का प्रभाव संसार के सभी विकसित एवं विकासशील भागों में स्थित बस्तियों की संरचना तथा प्रतिरूपों पर पड़ता रहा है। कृषि युग में ग्रामीण बस्तियों का प्रभुत्व था। औद्योगिक क्रांति ने छोटे-बड़े सभी प्रकार की नगरीय बस्तियों को जन्म दिया। बदलती सांस्कृतिक तथा सामाजिक पद्धतियों की झलक बस्तियों की संरचना एवं कार्यों में स्पष्ट मिलती है।

बस्तियों के प्रकार : ग्रामीण तथा नगरीय

बस्तियों को सामान्यत: उनके आकार तथा प्रकार्यों के आधार पर *ग्रामीण* तथा *नगरीय* अथवा *गाँवों* तथा *नगरों*, दो प्रकारों में बाँटते हैं। ग्रामीण और नगरीय शब्द सापेक्ष हैं। ग्रामीण बस्ती को नगरीय बस्ती से अलग करने का कोई सार्वभौम मापदंड नहीं है। विभिन्न देशों ने अपनी आवश्यकता के अनुसार अपने अलग-अलग मापदंड विकसित किए हैं। वास्तव में, एक पुरवे से लेकर संनगर (मेगालोपोलिस) तक बस्तियों की एक क्रम-सातत्यता दिखाई देती है। ग्रामीण बस्तियाँ मुख्यत: प्राथमिक कार्यों, जैसे-कृषि, मत्स्यन, खनन, वानिकी आदि से संबंधित होती हैं। दूसरी ओर, नगरीय बस्तियों में केंद्रीयता (नोडल) का गुण होता है तथा उनमें द्वितीयक एवं तृतीयक कार्यों की प्रधानता होती है।

कनाडा में 1,000 से कम जनसंख्या वाली बस्तियों को ग्रामीण वर्ग में रखते हैं, जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका में ग्रामीण बस्ती के निर्धारण की ऊपरी सीमा 2,500 की जनसंख्या है। भारत में, 5,000 तक की जनसंख्या वाली बस्तियों को ग्रामीण बस्ती कहते हैं, जबकि जापान में 30,000 तक की जनसंख्या वाली बस्ती को ग्रामीण बस्ती कहा जाता है। कुछ देशों में, जनसंख्या आकार के स्थान पर, बस्ती के

कार्यों या स्तर को, ग्रामीण से नगरीय में अंतर करने का आधार माना जाता है। दोनों में मौलिक अंतर यह है कि एक ओर गाँवों में अधिकांश लोग कृषि कार्यों में संलग्न होते हैं, तो दूसरी ओर नगरों में लोगों का मुख्य व्यवसाय गैर कृषि कार्य अर्थात् उद्योग, वाणिज्य एवं सेवाएँ आदि होते हैं।

कुछ व्यवसाय गाँवों तथा नगरों दोनों ही में पाए जाते हैं, जैसे-मत्स्यन, लकड़ी काटना, और खनन। तथापि ऐसे गाँवों को, उनके कार्यों के छोटे पैमाने के आधार पर नगरों से पृथक किया जा सकता है।

बस्तियों के आकार तथा कार्यों का संबंध बहुधा उनके स्थल तथा स्थिति से ही होता है, जो स्वयं भी उनके *कार्यों* द्वारा निर्धारित होते हैं। किसानों तथा खेतिहर मजदूरों की अधिकता वाले गाँव उपजाऊ कृषि क्षेत्रों में विकसित होते हैं। नगरों की वृद्धि के लिए स्थल तथा स्थिति से संबंधित आपस में जुड़े अनेक कारण उत्तरदायी होते हैं, जैसे–खनिज संसाधनों के निकट खनन शहरों का तथा मत्स्यन पत्तनों की स्थिति के लिए सुरक्षित लंगरगाहों का होना आवश्यक है। इसके विपरीत, औद्योगिक नगरों की स्थिति उन केंद्रीय स्थानों पर हो सकती है, जहाँ विनिर्माण उत्पादों से संबंधित सभी कच्चे माल प्राप्त किए जा सकते हैं।

नगरों के प्रमुख कार्यों में वाणिज्य एवं व्यापार, परिवहन तथा संचार, खनन तथा औद्योगिक उत्पादन, रक्षा, प्रशासन, संस्कृति एवं मनोरंजन आते हैं। बहुत से उदाहरणों में, एक नगर में एक से अधिक मुख्य कार्य हो सकते हैं। अतएव ऐसे नगरों को बहु–कार्य नगर कहते हैं।

ग्रामीण बस्तियाँ

ग्रामीण बस्तियों का भूमि से गहरा और प्रत्यक्ष संबंध होता है। इनमें प्राथमिक कार्यों, जैसे – कृषि, पशुपालन, मत्स्यन आदि की ही प्रधानता होती है। इनके आकार अपेक्षाकृत छोटे होते है, जिसकी पहले चर्चा की गई इन बस्तियों का अध्ययन इनकी आकृति, आंतरिक संरचना तथा कार्यों के संदर्भ में किया जा सकता है।

आकृति

संसार के मानचित्र पर ग्रामीण बस्तियों का वितरण दो स्पष्ट प्रारूप प्रकट करता है : सघन या संहत तथा बिखरी या प्रकीर्ण।

संहत ग्रामीण बस्तियाँ : इनमें बहुत से घर एक दूसरे के पास बने होते हैं। मूलत: ऐसी बस्ती का प्रारंभ एक छोटे पुरवे के रूप में किसी चौराहे अथवा एक जलाशय के समीप होता है। नए घरों के जुड़ने पर इस पुरवे का आकार बढ़ता जाता है। सामान्यत: ऐसी बस्तियाँ नदी घाटियों तथा उपजाऊ मैदानों में देखने को मिलती हैं। यहाँ मकान एक दूसरे से सटे होते हैं तथा गलियाँ संकरी होती हैं। इस प्रकार की बस्तियों में मनुष्य सामाजिक रूप से एक दूसरे से निकट से जुड़े होते हैं।

मानसूनी एशिया के अधिकांश नदियों के मैदानों में संहत बस्तियाँ पाई जाती हैं। भारत, चीन तथा थाईलैंड के मैदानों में बड़े-बड़े संहत गाँवों की अधिकता है। इरावदी डेल्टा में संहत छोटे गाँवों के साथ-साथ रेखीय बस्तियाँ भी देखी जा सकती हैं। जापान के क्वान्टो मैदान में संहत बस्तियों का सबसे बड़ा जमाव पाया जाता है। सऊदी अरब के दक्षिणी भागों में, मानव बस्तियों का संकेंद्रण समुद्री तट के निकट है, क्योंकि वहाँ पर जल तथा अच्छी मृदा उपलब्ध है।

यूरोप में वोल्गा तथा डैन्यूब नदियों के मैदानों में संहत बस्तियों के विशिष्ट स्वरूप देखने को मिलते हैं। राइन के पर्वतीय शीर्षों पर भी संहत बस्तियों का बिन्दुदार वितरण मिलता है, जबकि मैदानी भागों को खेती के लिए छोड़ दिया गया है।

बिखरी या प्रकीर्ण बस्तियाँ : प्राय: पर्वतीय, पठारी तथा उच्च भूमि के क्षेत्रों में प्रकीर्ण या बिखरी हुई बस्तियाँ पाई जाती हैं। ये एक या दो घरों वाली बस्तियाँ होती हैं, जिनमें रहने वाले लोग किसी एक सांस्कृतिक लक्षण, जैसे–गिरजाघर, मस्जिद अथवा मंदिर द्वारा एक सूत्र से बँधे होते हैं। अफ्रीका में ऐसी प्रकीर्ण बस्तियाँ बहुतायत से पाई जाती हैं। भारत में उत्तरी कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, सिक्किम तथा पश्चिमी बंगाल के उत्तरी भाग में ऐसी बस्तियाँ पाई जाती हैं। चीन के पर्वतीय प्रदेशों में प्रकीर्ण पुरवे पाए जाते हैं।

संरचना

ग्रामीण बस्तियों में गलियों, मकानों तथा अन्य कार्यों का विन्यास, इनकी आकृति, पर्यावरण तथा संस्कृति से संबंधित होता है। सामान्यत: इनके तीन प्रतिरूप पाए जाते हैं। ये हैं: रैखिक, गोलाकार या वर्गाकार तथा क्रास-आकृति की बस्तियाँ। इनके कई अन्य रूप भी देखने को मिलते हैं (चित्र 10.1)।

रैखिक प्रतिरूप: ये बस्तियाँ बहुत सामान्य हैं और सड़कों, नदियों अथवा नहरों के किनारों पर पाई जाती हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में, नदी के बाढ़ मैदानों में भी इस प्रकार की बस्तियाँ पाई जाती हैं। पश्चिमी यूरोप के निचले-क्षेत्रों में डाइक तथा तटबंधों पर

गाँव के रैखिक प्रतिरूप पाए जाते हैं। भारत में ऐसे प्रतिरूप प्रमुख सड़कों तथा नदियों के साथ-साथ मिलते हैं।

गोलाकार या वर्गाकार प्रतिरूप : गोलाकार ग्रामीण बस्तियाँ समतल भूमि पर किसी तालाब या पोखर, ज्वालामुखी-शंकुमुख, पहाड़ी की चोटी या एक पशु-कोरेल के चारों ओर होता है। उदाहरण के लिए पश्चिमी बंगाल में गाँव का किसी तालाब के चारों ओर से बसा होना सामान्य लक्षण है। अफ्रीका तथा यूरोप में, गोलाकार गाँवों को देखा जा सकता है। कहीं-कहीं भौतिक बाधाओं अथवा दो तरफ से अन्य रुकावटों के आने पर बस्ती की आकृति वर्गाकार हो जाती है।

क्रास आकृति : इस प्रकार की ग्रामीण बस्तियाँ सड़कों के चौराहों पर विकसित होती हैं। ये प्रारंभ में एक पुरवे के रूप में बसती हैं। बाद में सड़कों के किनारे मकानों के बढ़ते जाने से बस्ती का प्रतिरूप क्रास आकृति या तारे की आकृति के समान हो जाता है।

प्रकार्य

प्राय: सभी ग्रामीण बस्तियाँ कृषि कार्य से संबंधित होती हैं, किंतु कृषि के भीतर भी विशिष्टीकरण होता है। कुछ बस्तियाँ दुग्ध-उत्पादन में, तो कुछ का मत्स्यन, कुछ खेती एवं कुछ कृषि-प्रसंस्करण कार्यों की विशिष्टता धारण करती हैं। इसके अतिरिक्त, कुछ ग्रामीण बस्तियाँ प्राथमिक रूप में उत्पादन में संलग्न होती हैं, किंतु कुछ गाँवों में कृषि यंत्रों एवं मशीनों के मरम्मत का कार्य, तो कुछ में ऋण सुविधाएँ, उर्वरक और हैंडलूम कपड़ों की बिक्री जैसी विशेषीकृत सेवाएँ प्रदान करने का कार्य भी प्रारंभ हो जाता है। कुछ बड़े गाँवों में छोटी दुकानें भी होती हैं, जो पैसों तथा अनाज के बदले में वस्तुएँ बेचती हैं। भारत के प्रत्येक गाँव में पंचायत होती है जिसका कार्य प्रशासनिक होता है।
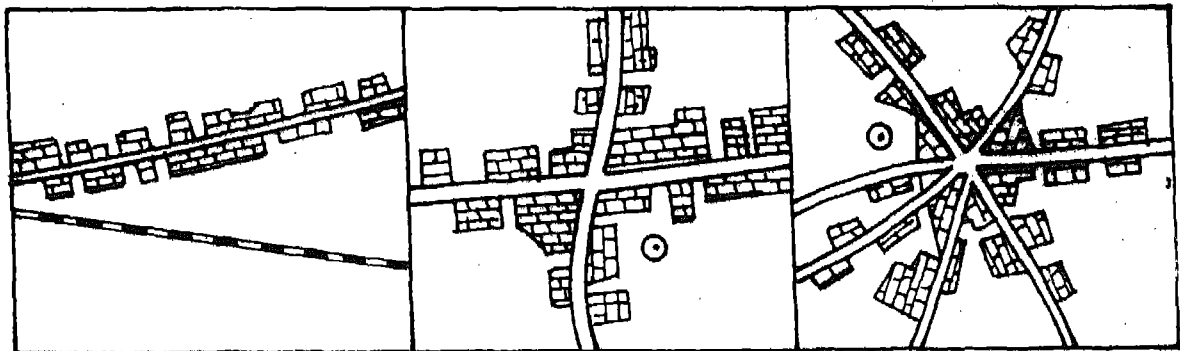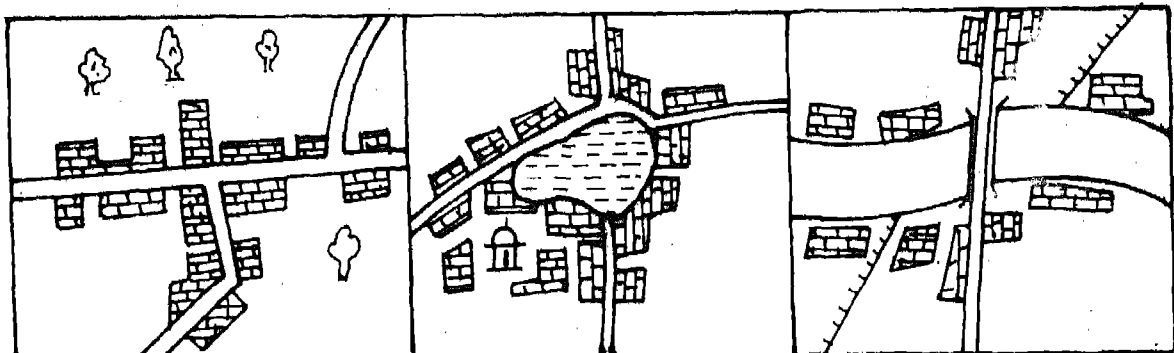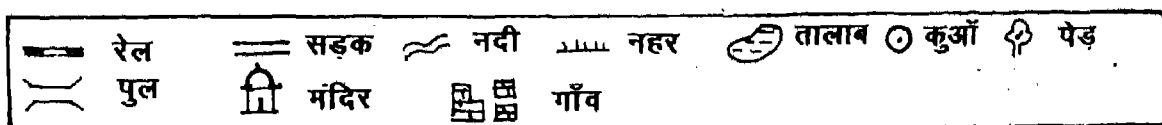
चित्र 10.1 ग्रामीण बस्तियों के प्रतिरूप

नगरीय बस्तियाँ

जैसा कि पहले चर्चा की गई है कि बस्तियों को ग्रामीण एवं नगरीय वर्गों में विभक्त करने के अलग-अलग आधार होते हैं। वर्गीकरण के कुछ सामान्य आधारों में जनसंख्या का आकार, व्यावसायिक संरचना और प्रशासन अधिक प्रचलित हैं।

जनसंख्या का आकार

एक बस्ती को नगर की परिभाषा के अंतर्गत सम्मिलित किए जाने के लिए लगभग संसार के सभी देशों ने जनसंख्या-आकार को महत्त्वपूर्ण आधार माना है। तो भी ग्रामीण बस्ती से नगरीय बस्ती को पृथक करने के लिए जनसंख्या-आकार के निर्धारण में बहुत अंतर पाया जाता है। निम्न जनसंख्या घनत्व वाले देशों में सघन जनसंख्या वाले देशों की तुलना में 'विभाजन की संख्या' कम हो सकती है। उदाहरण के लिए डेनमार्क, स्वीडेन तथा फिनलैंड में कोई स्थान जिसकी जनसंख्या 250 से अधिक है, नगर कहलाता है। आइसलैंड में यह संख्या 300 है जबकि कनाडा एवं वेनेजुएला में नगरीय बस्तियों की जनसंख्या 1,000 होनी चाहिए। कोलंबिया में 1,500, अर्जेन्टाइना तथा पुर्तगाल में 2,000, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा थाइलैंड में 2,500, भारत में 5,000 तथा जापान में 30,000 निवासियों की बस्तियाँ नगर कहलाने के योग्य मानी जाती है। भारत में जनसंख्या-आकार के अतिरिक्त जनसंख्या का घनत्व भी एक मानदंड है जिसके अनुसार एक नगर की जनसंख्या का घनत्व लगभग 400 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर होनी चाहिए।

व्यावसायिक संरचना

कुछ देशों जैसे भारत में, जनसंख्या के आकार के अतिरिक्त, नगर की परिभाषा का आधार वहाँ की जनसंख्या का आर्थिक क्रियाकलाप भी है। इटली में एक बस्ती को नगर तभी कहा जाता है, जब आर्थिक रूप से उत्पादक जनसंख्या का 50 प्रतिशत से अधिक गैर कृषि कार्यों में संलग्न हो। भारत में 75 प्रतिशत से अधिक कार्यशक्ति को गैर कृषि क्रियाकलापों में लगे होने पर ही नगरीय बस्ती कहा जाता है।

प्रशासनिक निर्णय

कुछ देशों में एक बस्ती को नगर के रूप में वर्गीकृत करने के लिए उसके प्रशासन के स्वरूप को भी एक आधार माना जाता है। उदाहरणार्थ, भारत में, 5,000 की जनसंख्या से कम की बस्ती को भी नगरीय कहा जा सकता है, यदि वह नगरपालिका, केंटोनमेंट बोर्ड अथवा नोटीफाइड एरिया है। लैटिन अमेरिकी देशों, ब्राजील तथा बोलिविया में छोटे से छोटा प्रशासनिक केंद्र भी नगर कहलाता है, चाहे उसकी जनसंख्या कुछ भी हो।

अवस्थिति तथा आकृति रूप संबंधी आधार

अपनी अवस्थिति के आधार पर एक नगरीय बस्ती रैखिक, वर्गाकार, तारक या अद्र्ध चन्द्राकार आकृति की हो सकती है। भवनों की वास्तुकला एवं उनकी विशेषताएँ ऐतिहासिक तथा संस्कृतिक प्रभावों को दर्शाती हैं। फिर भी, नगर की आकृति पर उसकी स्थिति तथा स्थल का बहुत प्रभाव पड़ता है।

विकसित एवं विकासशील देशों के नगरों में नियोजन तथा विकास में अत्यधिक अंतर पाया जाता है। विकसित देशों के अधिकांश नगर जहाँ सुनियोजित तथा सम-आकृति के है, वहीं विकासशील देशों की नगरीय बस्तियाँ, कुछ को छोड़ कर, बिना किसी नियोजन के बसी हैं तथा विषम आकृति की हैं। उदाहरण के लिए, चंडीगढ़ एक सुनियोजित नगर है, जबकि पटना का विकास अनियोजित नगर के रूप में हुआ है।

प्रकार्य

नगरों के अनेक प्रकार्य होते हैं। कुछ नगरों में एक निश्चित प्रकार्य की अधिकता होती है और वह नगर उसी प्रकार्य के लिए जाना जाता है। उदाहरणार्थ, आक्स्फोर्ड एक शैक्षिक नगर के रूप में जाना जाता है। वाराणसी एक धार्मिक केंद्र के रूप में तथा वाशिंगटन डी.सी. एक प्रशासनिक नगर के रूप में प्रसिद्ध है। इस प्रकार प्रकार्यों के आधार पर शहरों तथा नगरों को निम्नलिखित समूहों में वर्गीकृत किया जाता है।

प्रशासनिक नगर : राष्ट्रीय सरकारों के प्रशासनिक विभागों के मुख्यालय, जैसे-नई दिल्ली, केनबरा, मास्को, बीजिंग, अदिस अबाबा, वाशिंगटन डी.सी., पेरिस, लंदन आदि राष्ट्रीय राजधानियाँ हैं। भारत में जयपुर, भोपाल, पटना तथा बंगलौर, राज्यों के प्रशासनिक मुख्यालय (राजधानियाँ) हैं।

रक्षा-नगर : ये नगर सैनिक गतिविधियों के केंद्र होते हैं। ये तीन प्रकार के होते हैं : किला नगर, छावनी नगर तथा नौसेना के केंद्र जोधपुर एक किला नगर हैं, माऊ छावनी नगर है और कोच्ची नौसेना केंद्र है।

सांस्कृतिक नगर : सांस्कृतिक नगर धार्मिक केंद्र, शैक्षिक केंद्र अथवा मनोरंजन या आमोद-प्रमोद के केंद्र होते है।

जेरूसेलम, मक्का, अयोध्या, हरिद्वार, मदुरै एवं वाराणसी का धार्मिक महत्त्व है, अत: इन्हें धार्मिक नगर कहते है। कुछ स्थान शैक्षिक संस्थानों के लिए जाने जाते हैं, जैसे - वाराणसी, धार्मिक प्राचीन काल से ही नगर होने के साथ शिक्षा का बहुत बड़ा केंद्र रहा है। केम्ब्रिज और इलाहाबाद अपने विश्वविद्यालयों के लिए प्रसिद्ध हैं। मनोरंजन या आमोद-प्रमोद के नगरों में संयुक्त राज्य अमेरिका में लास वेगास, थाइलैंड में पताया तथा भारत में दार्जिलिंग प्रसिद्ध हैं।

औद्योगिक नगर : खनन तथा विनिर्माण उद्योग के प्रदेशों में खनन तथा विनिर्माण नगरों का विकास हुआ है। कालगूर्ली, कूलगार्डी, धनबाद तथा खेतड़ी खनन के नगर हैं। जिन नगरों का विकास उद्योगों की स्थापना के कारण हुआ है, उन्हें औद्योगिक नगर कहते हैं, जैसे - जमशेदपुर, कानपुर, दुर्गापुर, बर्मिंघम, पिट्सबर्ग एवं यंगसटाउन।

व्यापार एवं परिवहन नगर : प्राचीन काल के अधिकांश नगर व्यापार के केंद्र के रूप में महत्त्वपूर्ण थे। जर्मनी में डुसेलडॉर्फ, कनाडा में विनिपेग, पाकिस्तान में लाहौर, इराक में बगदाद, भारत में आगरा आदि सभी नगर महत्त्वपूर्ण व्यापारिक केंद्र रहे हैं। कुछ नगरों का विकास परिवहन नगरों के रूप में हुआ है। दो प्रकार के मुख्य परिवहनों के आधार पर इस प्रकार के नगरों का विकास हुआ है। पत्तन नगर समुद्र तट पर स्थित आयात एवं निर्यात के केंद्र हैं, जैसे- नीदरलैंड में रॉटरडैम, भारत में मुम्बई तथा यमन में अदन। रेलमार्गों के केंद्र (जंकशन) आगे चलकर नगर बन जाते हैं। भारत में मुगलसराय तथा इटारसी ऐसे नगरों के उपयुक्त उदाहरण हैं।

विकासशील देशों में नगरीय बस्तियों की समस्याएँ

नगरों को आर्थिक वृद्धि के इंजन के रूप में देखा जाता है। किंतु नगरीय जनसंख्या की तीव्र वृद्धि, सुविधाओं के साथ-साथ समस्याओं को भी जन्म देती है। नगरीकरण की प्रक्रिया ने ग्रामीण तथा नगरीय दोनों प्रकार की बस्तियों पर दूरगामी प्रभाव डाले हैं। नगरीकरण को बहुधा ग्रामीण से नगरीय जनसंख्या में परिवर्तन की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जाता है। किंतु यह गाँवों के जनांकिकी वृद्धि की मात्र वह प्रक्रिया नहीं है जिससे कस्बों, शहरों तथा नगरों की स्थापना होती है, बल्कि इसमें दूसरे बहुत से सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन-मात्रात्मक एवं गुणात्मक, दोनों ही जुड़े हुए होते हैं।

नई सहस्त्राब्दि मूलरूप से नगरीय है। जहाँ वर्ष 1950 में विश्व जनसंख्या की 16 प्रतिशत जनसंख्या नगरीय थी, आज विश्व की लगभग आधी जनसंख्या (47 प्रतिशत) नगरों में निवास करती है। नगरीकरण की दर विकसित देशों की अपेक्षा विकासशील देशों में बहुत अधिक है। इसके ऐसे ही बढ़ते रहने का अनुमान है, जैसा कि चित्र 10.2 में दर्शाया गया है।

विश्व के बड़े नगरों के कालिक एवं क्षेत्रिक वितरण समय एवं स्थान के संदर्भ में तीव्रता से परिवर्तित हुए हैं। वर्ष 1920 के दशक में जहाँ संसार में मात्र 24 दस लाखी महानगर थे, 1980 के दशक में उनकी संख्या बढ़कर 198 हो गई (सारणी 10.1)। आज 10 लाख से अधिक जनसंख्या वाले महानगरों की संख्या 350 हो गई है।

एक ओर जहाँ औद्योगीकृत देश अब पूर्णत: नगरीय हो चुके हैं, विकासशील देश 40 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या सहित

सारणी 10.1 संसार में दस लाखी नगरों का वितरण

वर्ष	*दसलाखी नगरों की संख्या औसत अक्षांश*	*भूमध्यरेखा से उत्तर या दक्षिण दस लाख में*	*औसत जनसंख्या जनसंख्या का प्रतिशत*	*दस लाखी नगरों में रहने वाली विश्व*
1920 के दशक के आरंभ में	24	44°30'	2.14	2.06
1940 के दशक के आरंभ में	41	39°20'	2.25	4.00
1960 के दशक के आरंभ में	113	35°44'	2.39	8.71
1980 के दशक के आरंभ में	198	34°07'	2.58	11.36

स्रोत : पौटर आर.बी. एंड उनविन टी. (संपादक) (1992) *टीचिंग द ज्याग्राफी ऑफ डवलपिंग एरियाज़*, मोनोग्राफ 7, डेवेलपिंग एरियाज़ रिसर्च ग्रुप ऑफ द इंस्टीट्यूट ऑफ बिट्रिश ज्याग्राफर्स
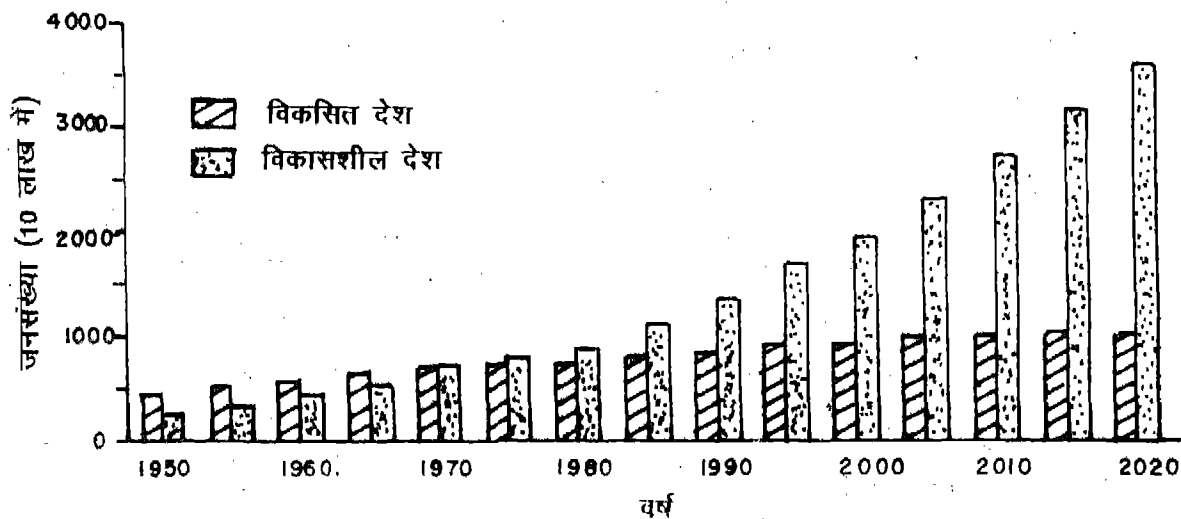
चित्र 10.2 : विकसित और विकासशील देशों में नगरीय जनसंख्या

बड़ी तेजी से नगरीय होने की प्रक्रिया में हैं। सन् 2020 तक इन प्रदेशों के 52 प्रतिशत लोग नगरों मे निवास करने लगेंगे। विकाशील देशों में सन् 1945 से ही नगरीय जनसंख्या की वृद्धि तीव्र हुई है। इसके अतिरिक्त इन्हीं देशों में 1975 से बहुत बड़े नगरों अर्थात् मेगा नगर की संख्या में तीव्र वृद्धि अंकित की गई है। संयुक्त राष्ट्र की परिभाषा के अनुसार 80 लाख से अधिक जनसंख्या वाले नगरों को मेगा-नगर कहते हैं। 1990 में विकसित देशों में 6 मेगा नगर थे जबकि विकासशील देशों में इनकी संख्या 14 हो गई थी। तथापि, विकासशील देशों के भीतर भी नगरीय जनसंख्या के आकार, नगरीकरण की दर तथा मेगा नगरों की वृद्धि में अत्यधिक विभिन्नता पाई जाती है।

विश्व नगरीकरण का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पक्ष इसकी वर्तमान वृद्धि की प्रवृत्ति है। संसार के विकसित एवं विकासशील प्रदेशों में इस प्रकृति में बहुत स्पष्ट अंतर है।

एशिया, इस प्रवृत्ति का सर्वाधिक नाटकीय उदाहरण प्रस्तुत करता है। एक गाँवों वाले प्रदेश के होते हुए आज
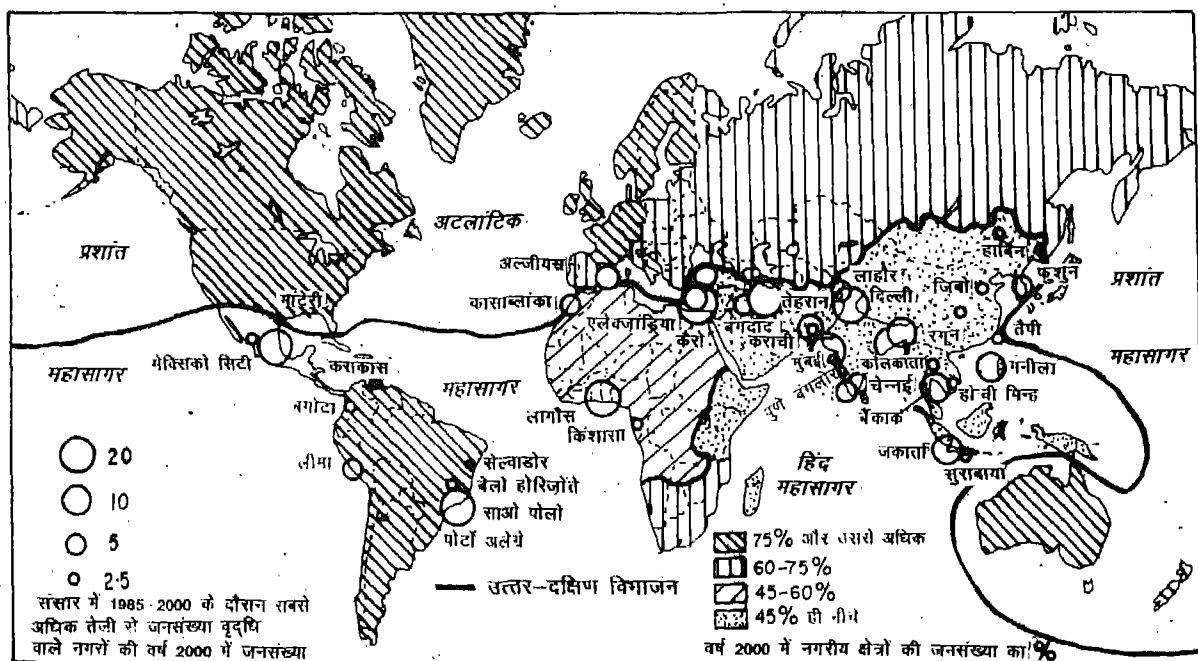
चित्र 10.3 विश्व : सर्वाधिक तेजी से बड़े होते नगर

सारणी 10.2 संसार के सबसे बड़े नगर (1950 तथा 2000)

कोटि क्रम (1950)	नगर	जनसंख्या (दस लाख)	कोटि क्रम (2000)	नगर	जनसंख्या (दस लाख)
1	न्यूयार्क	12.3	1	मैक्सिको सिटी	31.0
2	लंदन	10.4	2	साओपोलो	25.8
3	राइन-रूर	6.9	3	शंघाई	23.7
4	टोकियो	6.7	4	टोकियो	23.7
5	शंघाई	5.8	5	न्यूयार्क	22.4
6	पेरिस	5.5	6	बीजिंग	20.9
7	ब्यूनस आयर्स	5.3	7	रियो डि-जेनेरो	19.0
8	शिकागो	4.9	8	मुम्बई	16.8
9	मास्को	4.8	9	कोलकाता	16.4
10	कलकत्ता	4.6	10	जकार्ता	15.7
11	लॉस एंजिल्स	4.0	11	लॉस एंजिल्स	13.9
12	ओसाका	3.8	12	सीओल	13.7
13	मिलान	3.6	13	काहिरा	12.9
14	बम्बई	3.0	14	चेन्नई	12.7
15	मेक्सिको सिटी	3.0	15	ब्यूनस आयर्स	12.7

एशिया बड़ी तेजी से कस्बों तथा नगरों का प्रदेश बन रहा है। 2000 ई. में इसकी नगरीय जनसंख्या 1.3 अरब थी, जो विगत पाँच दशकों में लगभग पाँच गुनी की वृद्धि थी। विश्व की नगरीय जनसंख्या का 36 प्रतिशत भाग एवं विश्व के 30 में से 16 बृहत्तर आकार के नगर की स्थिति एशिया में ही है। सन् 2030 में एशिया की प्रक्षेपित जनसंख्या 4.9 अरब होगी जिनमें से लगभग आधे लोग (53.4 प्रतिशत) नगरीय क्षेत्रों में निवास करेंगे। लगभग सभी विकासशील देश अप्रत्याशित दर से नगरीकरण में उच्च वृद्धि का अनुभव कर रहे हैं। पाकिस्तान में स्थित कराची महानगर की जनसंख्या 1950 में 11 लाख थी जिसका 2015 ई. तक 206 करोड़ हो जाने का अनुमान है। इसी भाँति काहिरा, मुम्बई, साओपोलो, लैगोस आदि प्रत्येक नगर की, सन् 2015 के लिए प्रक्षेपित जनसंख्या 2 करोड़ से अधिक होने का अनुमान है। ऐसा अनुमान है कि 2015 में विश्व के 350 दस लाखी नगरों मे से 153 एशिया में ही होंगे। यह भी अनुमान है कि 2015 में विश्व के 27 मेगा नगरों (1 करोड़ से अधिक जनसंख्या के नगर) में से 15 एशिया में ही अवस्थित होंगे।

संसार के विकासशील प्रदेशों में नगरीय वृद्धि की प्रक्रिया विकसित प्रदेशों से भिन्न रही है। विकसित देशों में नगरीकरण में वृद्धि औद्योगिक विकास के साथ-साथ हुई विकासशील देशों में जनांकिकीय वृद्धि आर्थिक विकास से पहले हुई है। इन प्रदेशों में अप्रत्याशित नगरीय वृद्धि का मुख्य कारण ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों की कमी थी। इसकी तुलना में कस्बों तथा नगरों में संभावित रोजगार के आकर्षण कम प्रभावी थे। 5 लाख की जनसंख्या वाले नगर से 1 करोड़ (100 लाख) वाले महानगर बनने में लंदन को 190 वर्ष तथा न्यूयार्क को 140 वर्ष लगे थे, इसके विपरीत, मेक्सिको सिटी, साओपोलो, कोलकत्ता, सियोल तथा मुम्बई सभी की जनसंख्या को 5 लाख से 100 लाख (1 करोड़) की वृद्धि हेतु मात्र 75 वर्षों से कम का समय लगा था। इन नगरों ने अतिनगरीकरण अथवा अनियंत्रित नगरीकरण के परिणाम स्वरूप झुग्गी-झोपड़ी जैसी गंदी बस्तियों को जन्म दिया है। संसार में जहाँ कहीं भी ऐसी झुग्गी-झोपड़ी बस्तियाँ बसी हैं, वहाँ नगरीय जीवन दुखद हो गया है। लगभग 60 करोड़ से अधिक लोग आज नगरों में असुरक्षित जीवन दशाओं में जी रहे हैं, जबकि 30 करोड़ लोग नरकीय जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

विकासशील देशों में वर्तमान नगरीकरण की प्रक्रिया ने ग्रामीण क्षेत्रों की योग्य श्रम शक्ति को छीन लिया है। पारिस्थितिकी के विकृत होने तथा सामाजिक प्रदूषण ने उनकी ऊर्जा को निचोड़ लिया है। इसके साथ ही, नगरीय बस्तियाँ भी

आवास, परिवहन, स्वास्थ्य एवं अन्य सार्वजनिक सुविधाओं की कमी से अत्यधिक प्रभावित हुई हैं। इन दोनों ही स्थानों (ग्राम व नगर) पर गुणवत्ता युक्त जीवन का ह्रास हुआ है। अफ्रीका में, केवल एक तिहाई घरों में पेयजल की व्यवस्था है। एशिया प्रशांत क्षेत्र में मात्र 38 प्रतिशत नगरीय घरों को ही मल जल प्रणाली से जोड़ा गया है। विकासशील देशों के बहुत से नगरों में जनसंख्या का एक बढ़ता हुआ हिस्सा निम्न स्तरीय घरों अथवा सड़कों पर रहता है। भारत के अधिकांश दस लाख या इससे अधिक जनसंख्या वाले नगरों में, चार में से एक नागरिक अवैध बस्तियों में रहता है। इनमें नगर के शेष भागों की तुलना में दोगुनी वृद्धि हो रही है।

प्रशांत एशिया क्षेत्र के देशों में ही, जो आर्थिक सफलताओं के लिए जाने जाते हैं, यह अनुमान था कि बीसवीं शताब्दी की समाप्ति पर इन देशों की लगभग 60 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या झुग्गी-झोपड़ी या अवैध गंदी बस्तियों में निवास करती थी।

अनधिकृत बस्तियाँ सामान्यतः एक नगरीय क्षेत्र का आवासीय भाग हैं जिसमें अत्यंत निर्धन लोग बसे होते हैं तथा जो अपनी निजी भूमि खरीदने में असमर्थ होते हैं। अतः वे लोग निजी अथवा सार्वजनिक खाली भूमि पर बस जाते हैं। ऐसी बस्तियों के स्वरूप तथा नामों में एक देश से दूसरे देश में विभिन्नता पाई जाती है। इन्हें सामान्यतः शैंटी टाउन्स अथवा *अनियमित बस्तियों* के नाम से भी जाना जाता है। बहुत से देशों में इन्हें भिन्न स्थानीय नामों से जाना जाता है, जैसे-वेनेजुएला में *रांचोज,* ब्राजील में *फवेलास(* म्यनमार में *केवेट्टीस* तथा भारत में *मलिन बस्ती या झुग्गी-झोपड़ी* आदि। इनमें परंपरागत या अनियमित रूप से बनाए गए स्वनिर्मित मकानों में निवास करने वाले समुदायों को सम्मिलित किया जाता है। ऐसी बस्तियाँ विकासशील देशों के नगरों का सामान्य लक्षण हैं तथा ऐसी बस्तियों का जन्म गरीबों के आवास की भारी आवश्यकता के फलस्वरूप होता है। इनमें विभिन्न प्रकार की सामग्रियों द्वारा निर्मित छोटे और स्वरूप में बदलते रहने वाले घर होते हैं। इनके सघन जमाव से पारिस्थितिक तंत्र बिगड़ता है तथा गंभीर सामाजिक समस्याएँ पैदा होती हैं। ऐसी मलिन बस्तियाँ उस स्थिति में बनती हैं, जब स्थानीय प्रशासन अपने नियोजन में संपूर्ण समुदाय की आवश्यकताओं की पूर्ति में असफल होता है। ऐसे क्षेत्र तेजी से बढ़ने वाले, असंरक्षित एवं अनियोजित विकास की विशेषता वाले हैं। भूमंडलीय स्तर पर यह एक महत्त्वपूर्ण समस्या है।

बाक्स 10.1 धारावी-एशिया महाद्वीप की सबसे बड़ी मलिन बस्ती

''...बसें केवल उनकी सीमा तक ही जाती हैं। ऑटोरिक्शा वहाँ तक नहीं जा सकते, असंगति यह है कि धारावी मध्य बम्बई का हिस्सा है, जहाँ तिपहिया वाहनों पर प्रतिबंध है।

इस बस्ती से होकर केवल एक मुख्य सड़क गुजरती है, तथाकथित '90 फीट चौड़ी' सड़क अपनी पूरी लंबाई के अधिकांश भाग में घटकर आधी से कम ही रह गई हैं। अगल-बगल की कुछ गलियाँ तथा रास्ते इतने संकरे हैं कि इससे, एक साइकिल भी नहीं गुजर सकती है। संपूर्ण क्षेत्र में चाल की कोठरियाँ हैं। मकान, दो या तीन मंजिल ऊँचे हैं, जिनमें ऊपर जाने के लिए घुमावदार जंग लगी लोहे की सीढ़ियाँ हैं। यहाँ पूरा परिवार एक कमरा किराए पर लेता है जिसमें कभी-कभी 12 या इससे अधिक लोग रहते हैं। ये मकान एक प्रकार से विक्टोरियाई काल में लंदन के ईस्ट एंड क्षेत्र के औद्योगिक घरों के उष्णकटिबंधीय संस्करण लगते हैं।

यद्यपि धनी व्यक्तियों के बीच धारावी वितृष्णा पैदा करता है, परंतु यह अपने में अधिक गंभीर राज छुपाए हुए है। यहाँ के रहने वाले लोग अपनी कुशल कारीगरी के परिणामस्वरूप मुंबई के लिए जिस अपार संपत्ति का सृजन करते हैं, उसके अनुपात में उनका जीवन बहुत ही दयनीय है। इस तेज धूप वाली, वृक्ष विहीन, बिखरे कूड़े और गंदे पानी से भरे गड्ढों से युक्त, कौओं और चूहों से भरी बस्ती में रहने वाले लोग भारत की अत्यंत सुंदर, उपयोगी एवं मूल्यवान वस्तुओं का निर्माण करते हैं। धारावी के लोगों द्वारा निर्मित वस्तुओं में प्रमुख है: चीनी मिट्टी के बर्तन व अन्य सामान, कढ़ाई व जरी का कार्य, चमड़े की सुंदर-सुंदर वस्तुएँ, आधुनिक फैशन के अनुरूप सिले सिलाए कपड़े, धातुओं से बनी सुंदर चीजें, विविध प्रकार के आभूषण, लकड़ी पर खुदाई का काम तथा फर्नीचर जो भारत तथा विदेश के अत्यंत धनवान लोगों के घरों की शोभा बढ़ाते हैं।

धारावी समुद्र की एक भुजा थी, जो यहाँ आकर बसने वाले लोगों द्वारा बड़ी मात्रा में उत्पन्न कूड़े से पाटी गई। इन लोगों में अछूत या अनुसूचित जाति एवं गरीब मुस्लिम हैं। इस बस्ती में नालीदार टीन से पटे मकान हैं, जो कहीं-कहीं 20 मीटर ऊँचे हैं और जिनका उपयोग चमड़ा कमाने व रंगने के लिए किया जाता है। ऐसी बेतरतीब इमारतें यहाँ बहुत-सी हैं। इस बस्ती में कहीं मनोरम स्थल भी है, लेकिन बदबूदार कूड़ा सभी जगह है...''

(सीब्रूक, 1996, पृष्ठ सं 50, 51-52 से अनुवादित)

एक अवैध बस्ती को परिभाषित करने वाली तीन विशेषताएँ होती हैं, भौतिक, सामाजिक तथा वैधानिक।

भौतिक विशेषताएँ : इन अवैध बस्तियों में उनकी गैर कानूनी स्थिति होने के कारण न्यूनतम आवश्यक स्तर की सेवाएँ तथा सुविधाएँ भी नहीं पाई जाती हैं। अत: इनमें जल आपूर्ति, स्वच्छता, बिजली, सड़कें, नालियों, विद्यालयों, स्वास्थ्य केंद्रों एवं विपणन स्थलों का अभाव होता है अथवा उनकी अनौपचारिक व्यवस्था होती है।

सामाजिक विशेषताएँ : अधिकांश अवैध बस्तियों के घर निम्न आय वर्ग के लोगों के ही होते हैं। उनमें प्रवासी ही सर्वाधिक होते हैं, किंतु उनमें से कुछ वहीं जन्मे दूसरी या तीसरी पीढ़ी के लोग भी होते हैं।

वैधानिक विशेषताएँ : इन बस्तियों में भू-स्वामित्व का अभाव होता है। बहुधा अवैध बस्तियों तथा मलिन बस्तियों को समानार्थी शब्द के रूप में प्रयुक्त किया जाता है, जबकि वे एक दूसरे से भिन्न हैं। *मलिन बस्तियाँ* वे आवासीय क्षेत्र होते हैं जिनमें भौतिक एवं सामाजिक परिस्थितियाँ अत्यंत खराब होती हैं। उनमें पारिवारिक जीवन संतोषजनक होना असंभव होता है। मलिन बस्तियों की दशाओं का प्रमुख सूचक निकृष्ट आवासी व्यवस्था है, जिसका अर्थ ऐसे घर से है जिनमें प्रकाश, वायु, शौचालय व स्नान घर की सुविधाओं की अत्यंत कमी पाई जाती है। वे नमी युक्त तथा खराब मरम्मत की स्थिति में होते हैं। इनमें पारिवारिक एकांत का अभाव होता है। इनमें आग लगने की प्रबल संभावना रहती है। इनमें भूमि पर अत्यधिक भीड़ के कारण मनोरंजन के लिए खुले स्थलों का पूर्ण अभाव रहता है। भारत में धारावी (मुम्बई) एशिया की सबसे बड़ी मलिन बस्ती है।

इस प्रकार *अवैध बस्तियाँ* उनकी वैधानिक स्थिति बताती हैं, जबकि *मलिन बस्तियाँ* उनकी दशा को बताती हैं।

यू.एन.सी.एच.एस. के प्रतिवेदन में बताया गया है कि विकासशील देशों के महानगरों में लगभग 30 से 60 प्रतिशत निवासी अवैध बस्तियों में रहते हैं। उदाहरण के लिए दक्षिण अफ्रीका जहाँ जनसंख्या वृद्धि दर उच्च है, वहाँ नगरों में अवैध बस्तियाँ तेजी से बढ़ रही हैं। एक ऐसी ही अवैध बस्ती इमिजामों एंथू है, जो केपटाउन नगर के होट खाड़ी क्षेत्र में स्थित है। आज विकासशील देशों के समक्ष ऐसी बस्तियों में जीवन स्तर में सुधार करने की अति जटिल एवं भारी चुनौतियाँ विद्यमान हैं। बदलती आवश्यकताओं के संदर्भ में समकालीन प्रशासन बहुआयामी उपाय कर रहा है। इसमें प्रमुख हैं सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं का समान उद्देश्य को पूरा करने के लिए सहयोग प्राप्त करना। उदाहरण के लिए, विकासशील देशों में आवास की वित्तीय नीति में परिवर्तन की आवश्यकता है, ताकि लघुवित्तीय योजनाएँ, स्थानीय समुदाय की हिस्सेदारी द्वारा पुष्ट हों।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए :
   - (i) बस्ती किसे कहते हैं ?
   - (ii) बस्तियों के वर्गीकरण के आधार क्या हैं ?
   - (iii) ग्रामीण बस्तियाँ क्या हैं ?
   - (iv) नगरीकरण किसे कहते हैं ?
   - (v) विश्व में आज दस लाख या इससे अधिक जनसंख्या वाले महानगरों की संख्या कितनी है ?
2. अंतर स्पष्ट कीजिए :
   - (i) बस्तियों के स्थल एवं स्थिति
   - (ii) संहत एवं प्रकीर्ण बस्तियाँ
   - (iii) प्रशासनिक एवं सांस्कृतिक बस्तियाँ
   - (iv) अवैध बस्तियाँ एवं मलिन बस्तियाँ
3. संसार में ग्रामीण बस्तियों के वितरण प्रतिरूप का वर्णन कीजिए।
4. एक ग्रामीण बस्ती प्रतिरूप किस प्रकार पर्यावरण दशाओं एवं भौतिक-सांस्कृतिक प्रभावों को प्रतिबिंबित करती है ? समझाइए।
5. किसी बस्ती द्वारा नगरीय बस्ती निर्धारित करने के लिए विभिन्न देशों द्वारा प्रयुक्त मापदंडों की विवेचना कीजिए।

6. नगरों के कार्यात्मक वर्गीकरण का प्रत्येक प्रकारों से उपयुक्त उदाहरण देते हुए चर्चा कीजिए।
7. "संसार में नगरीय जनसंख्या का वितरण तथा इसकी वृद्धि दर बहुत ही असमान है।" इस कथन की व्याख्या कीजिए।
8. विकासशील देशों में नगरीय बस्तियों से संबंधित समस्याओं की चर्चा कीजिए।

भौगोलिक कुशलताएँ

9. संसार में रेखा मानचित्र पर वर्ष 1990 तथा 2000 के सभी 15 महानगरों (सारणी 10.2) की अवस्थिति उनके नाम सहित दर्शाइए।
10. सारणी 10.2 का अध्ययन कीजिए तथा निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए :
    (i) कितने नगरों को 1950 तथा 2000, दोनों वर्षों में स्थान मिला ?
    (ii) 1950 के किन नगरों को वर्ष 2000 में स्थान नहीं मिला ?
    (iii) वर्ष 2000 में किन नए नगरों को प्रवेश मिला ?
    (iv) महाद्वीपों के आधार पर 1950 तथा 2000 के नगरों का वर्गीकरण करें।
    (v) ऊपर दिए प्रश्नों के उत्तरों के आधार पर आपने क्या निष्कर्ष निकाले हैं और आप उनकी व्याख्या कैसे करेंगे ?

विश्व जनसंख्या : चयनित आँकड़े, 2000

प्रदेश/देश (1)	क्षेत्रफल (हजार वर्ग किमी) (2)	जनसंख्या 2000 (दस लाख) (3)	जनसंख्या घनत्व (4)	वृद्धि-दर घनत्व (प्रति वर्ग कि.मी) 1990-95 (5)	1995-2000 (6)
संसार	-	**6,055**	-	**1.7**	**1.3**
अफ्रीका	-	**784.4**	-	**2.9**	**2.4**
अल्जीरिया	2,382	31.5	13	2.7	2.3
अंगोला	1,247	12.9	11	3.7	3.2
बेनिन	113	6.1	57	3.1	2.7
बोट्सवाना	582	1.6	3	2.9	1.9
बुर्किना फासो	274	11.9	41	2.8	2.7
बुरूंडी	28	6.7	265	2.9	1.7
केमरुन	475	15.1	32	2.8	2.7
मध्य अफ्रीका गणराज्य	623	3.6	6	2.6	1.9
चाड	1,284	7.7	6	2.7	2.6
कांगो लोकतांत्रिक गणराज्य	2,345	51.7	22	3	2.6
कांगो गणराज्य	342	2.9	9	-	2.8
कोटे डी आइवर	322	14.8	50	3.7	1.8
मिस्र	1,001	68.5	64	2.2	1.9
एरिट्रिया	118	3.9	41	-	3.8
इथोपिया	1,104	62.6	64	3.1	2.5
गैबन	268	1.2	5	3.3	2.6
घाना	239	20.2	85	3	2.7
गिनी	246	7.4	30	3	0.8
गिनी-बिसाऊ	36	1.2	43	2.1	2.2
कीनिया	580	30.1	53	3.4	2

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
लेसोथो	30	2.2	67	2.5	2.2
लाइबेरिया	111	3.2	32	3.3	8.2
लीबियन अरब जमौहीरिया	–	5.6	–	3.5	2.4
मेडागास्कर	587	15.9	27	3.3	3
मलावी	118	10.9	110	3.3	2.4
माली	1,240	11.2	9	3.2	2.4
मारितानिया	1,026	2.7	3	2.9	2.7
मारिशस	2	1.2	584	1	0.8
मोरक्को	447	28.4	64	2.4	1.8
मोजांबिक	802	19.7	23	2.8	2.5
नामीबिया	824	1.7	2	3.2	2.2
नाइजर	1267	10.7	9	3.3	3.2
नाइजीरिया	924	111.5	32.7	3.1	2.4
र्वांडा	26	7.7	345	3.4	7.7
सेनेगल	197	9.5	49	2.7	2.6
सिएरा लियोन	72	4.9	70	2.7	3
सोमालिया	638	10.1	14	3.2	4.2
दक्षिण अफ्रीका	1,221	40.4	35	2.4	1.5
सूडान	2,506	29.5	13	2.8	2.1
टोगो	57	4.6	83	3.2	2.6
ट्यूनिशिया	164	9.6	62	2.1	1.4
यूगांडा	241	21.8	113	3	2.8
तंजानिया का संयुक्त गणराज्य	–	33.5	–	3.4	2.3
जांबिया	753	9.2	14	2.8	2.3
जिंबाब्वे	391	11.7	33	3	1.4
एशिया	–	**3,682.20**	–	**1.8**	**1.4**
अफगानिस्तान	652	22.7	41	6.7	2.9
बांग्ला देश	144	129.2	1,007	2.4	1.7
भूटान	–	2.1	–	2.3	2.8
कंबोडिया	181	11.2	68	2.5	2.3
चीन	9,598	1,277.60	135	1.4	0.9
कोरिया का लोकतांत्रिक जनवादी गणराज्य	–	24	–	1.9	1.6
हांगकांग, चीन	–	6.9	–	0.8	2.1
भारत	3,287	1,013.70	342	1.9	1.6

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
इंडोनेशिया	1,905	212.1	116	1.8	1.4
ईरान (इस्लामी गणराज्य)	1,633	67.7	39	2.7	1.7
इराक	438	23.1	53	3.2	2.8
इज़रायल	21	6.2	302	4.7	2.2
जापान	378	126.7	348	0.4	0.2
जोर्डन	89	6.7	55	3.4	3
कुवैत	18	2	111	-5.8	3.1
लाओ जनवादी लोकतांत्रिक गणराज्य	–	5.4	–	3	2.6
लेबनान	10	3.3	423	2	1.7
मलेशिया	330	22.2	71	2.4	2
मंगोलिया	1,567	2.7	2	2.6	1.7
म्यनमार	802	45.6	23	2.1	1.2
नेपाल	147	23.9	161	2.5	2.4
ओमान	212	2.5	11	3.6	3.3
पाकिस्तान	796	156.5	179	2.7	2.8
फिलीपीन्स	300	76	253	2.1	2.1
कोरिया गणराज्य	–	46.8	–	0.8	0.8
सऊदी अरब	2,150	21.6	10	3.4	3.4
सिंगापुर	1	3.6	6,587	1	1.4
श्रीलंका	66	18.8	300	1.3	1
सीरिया अरब गणराज्य	185	16.1	88	3.6	2.5
थाइलैंड	513	61.4	119	1.3	0.9
टर्की	775	66.6	85	2	1.7
संयुक्त अरब अमीरात	84	2.4	35	2.3	2
वियतनाम	332	79.8	241	2	1.6
यमन	528	18.1	33	3.5	3.7
यूरोप	–	**728.9**	–	**0.3**	**0**
अल्बानिया	29	3.1	124	0.8	-0.4
आस्ट्रिया	84	8.2	98	0.4	0.5
बेल्जियम	30	10.2	331	0.1	0.1
बोस्निया व हर्जेगोविना	51	4	78	–	3
बुल्गारिया	111	8.2	74	-0.2	-0.2
क्रोशिया	–	4.5	–	–	-0.1
चेक गणराज्य	79	10.2	133	–	-0.2
डेनमार्क	43	5.3	126	0.2	0.3

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
एस्टोनिया	45	1.4	32	-0.2.	-1.2
फिनलैंड	338	5.2	17	0.3	0.3
फ्रांस	552	59.1	107	0.4	0.4
जर्मनी	357	82.2	230	0.4	0.1
ग्रीस	132	10.6	82	0.3	0.3
हंगरी	93	10	109	-0.2	-0.4
आयरलैंड	70	3.7	55	-0.2	0.7
इटली	301	57.3	196	0.1	0
लात्विया	65	2.4	38	-0.3	-1.5
लिथुआनिया	65	3.7	57	0.2	-0.3
मैकेडोनिया	26	2	80	-	0.6
नीदरलैंड	42	15.8	470	0.7	0.4
नार्वे	324	4.5	15	0.5	0.5
पोलैंड	323	38.8	127	0.3	0.1
पुर्तगाल	92	9.9	109	0	0
रोमानिया	238	22.3	97	0.3	-0.4
स्लोवाकिया	-	5.4	-	-	0.1
स्लोवेनिया	20	2	99	-	-0.1
स्पेन	506	39.6	79	0.2	0
स्वीडन	450	8.9	22	0.5	0.3
स्विटजरलैंड	41	7.4	182	0.7	0.7
यूनाइटेड किंगडम	243	58.8	248	0.2	0.2
यूगोस्लाविया	102	10.6	108	0.3	0.1
उत्तर अमेरिका	-	**309.6**	-	**1.1**	**0.9**
कनाडा	9,971	31.1	3	1.4	1
संयुक्त राज्य अमेरिका	9,629	278.4	31	1	0.8
ओशनिया	-	**30.4**	-	**1.5**	**1.3**
आस्ट्रेलिया	7,741	18.9	2	1.4	1
न्यू वेफलेडोनिया	-	0.2	-	-	2.1
न्यूजीलैंड	271	3.9	14	0.9	1
पपुआ न्यू गिनी	463	4.8	11	2.3	2.2
वनातू	-	0.2	-	-	2.4
लैटिन अमेरिका	-	**519.1**	-	**1.8**	**1.6**
अर्जेन्टाइना	2,780	37	14	1.2	1.3
बेलिज	-	0.2	-	-	2.4
बोलीविया	1,099	8.3	8	2.4	2.3

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
ब्राजील	8,547	170.1	20	1.6	1.3
चिली	757	15.2	20	1.6	1.4
कोलंबिया	1,139	42.3	41	1.7	1.9
कोस्टारिका	51	4	75	2.4	2.5
क्यूबा	111	11.2	102	0.9	0.4
डोमिनिकन गणराज्य	49	8.5	173	2	1.7
इक्वेडोर	284	12.6	46	2.3	2
अल-सेल्वाडोर	21	6.3	303	2.2	2
गुआटेमाला	109	11.4	105	2.9	2.6
हैती	28	8.2	289	2	1.7
होंडुरास	112	6.5	57	3	2.8
जमाइका	11	2.6	243	1	0.9
मेक्सिको	1,958	98.9	51	2.1	1.6
निकारागुआ	130	5.1	42	3.7	2.7
पनामा	76	2.1	38	1.9	1.6
परागुए	407	5.5	14	2.7	2.6
पेरू	1,285	25.7	20	2	1.7
प्यूरिटो रिको	9	3.9	442	0.9	0.8
ट्रिनीडाड व टोबैगो	5	1.3	254	1.1	0.5
उरुग्वे	176	3.3	19	0.6	0.7
वेनेजुएला	912	24.2	27	2.1	2

मानव विकास सूचकांक, 1998

मानव विकास कोटि/क्रम

उच्च मानव विकास

1. कनाडा
2. नार्वे
3. संयुक्त राज्य अमेरिका
4. आस्ट्रेलिया
5. आइसलैंड
6. स्वीडन
7. बेल्जियम
8. नीदरलैंड
9. जापान
10. यूनाइटेड किंगडम
11. फिनलैंड
12. फ्रांस
13. स्विटजरलैंड
14. जर्मनी
15. डेनमार्क
16. आस्ट्रिया
17. लक्जेमबर्ग
18. आयरलैंड
19. इटली
20. न्यूज़ीलैंड
21. स्पेन
22. साइप्रस
23. इजरायल
24. सिंगापुर
25. ग्रीस
26. हांगकांग, चीन
27. माल्टा
28. पुर्तगाल
29. स्लोवेनिया
30. बारबैडोस
31. कोरिया गणराज्य
32. ब्रूनी दारूसलाम
33. बहामा
34. चेक गणराज्य
35. अर्जेंटाइना
36. कुवैत
37. अंटीगुआ और वरवूदा
38. चिली
39. उरुग्वे
40. स्लोवाकिया
41. बहरीन
42. कतार
43. हंगरी
44. पोलैंड
45. संयुक्त अरब अमीरात
46. एस्टोनिया

मध्यम मानव विकास

47. सेंट क्रिट्स और नेविस
48. कोस्टा रिका
49. क्रोशिया
50. ट्रिनिडाड और टोबैगो
51. डोमिनिकन
52. लिथुआनिया
53. सेशेल्स
54. ग्रेनाडा
55. मेक्सिको
56. क्यूबा
57. बेलारूस
58. बेलिज
59. पनामा
60. बुल्गारिया
61. मलेशिया
62. रूसी फेडरेशन
63. लातविया
64. रोमानिया
65. वेनेजुएला
66. फिजी
67. सूरीनाम
68. कोलंबिया
69. मेकेडोनिया
70. जार्जिया
71. मारीशस
72. लिबियन अरब जमाहिरिया
73. कजाखस्तान
74. ब्राजील
75. सऊदी अरब
76. थाईलैंड
77. फिलीपीन्स

78. यूक्रेन
79. सेंट विसेंट तथा ग्रेनाडिंस
80. पेरू
81. परागुए
82. लेबनान
83. जमाइका
84. श्रीलंका
85. टर्की
86. ओमान
87. डोमिनिकन गणराज्य
88. सेंट लुसिया
89. मालदीव
90. अजरबेजान
91. इक्वेडर
92. जोर्डन
93. आर्मेनिया
94. अल्बानिया
95. समोआ (पश्चिमी)
96. गायना
97. ईरान, इस्लामिक गणतंत्र
98. किरगिजस्तान
99. चीन
100. तुर्कमेनिस्तान
101. ट्यूनिसिया
102. मालडोवा गणतंत्र
103. दक्षिण अफ्रीका
104. अल सेल्वाडोर
105. केप वर्डे
106. उजबेकिस्तान
107. अल्जीरिया
108. वियतनाम
109. इंडोनेशिया
110. ताजिकिस्तान
111. सिरिया अरब गणतंत्र
112. स्वाजीलैंड
113. होंडुरास
114. बोलीविया
115. नामीबिया
116. निकारागुआ
117. मंगोलिया
118. वनातू
119. मिस्र
120. गुआटेमाला
121. सोलोमन द्वीप
122. बोट्सवाना
123. गैबोन
124. मोरक्को
125. म्यनमार
126. इराक
127. लेसोथो
128. भारत
129. घाना
130. जिम्बाब्वे
131. इक्वेटोरियल गायना
132. साओ टोम तथा प्रिंसिप
133. पापुआ न्यूगिनी
134. केमेरुन
135. पाकिस्तान
136. कंबोडिया
137. कोमोरोस
138. केनिया
139. कांगो

निम्न मानव विकास

140. लाओ गणतंत्र
141. मेडागास्कर
142. भूटान
143. सूडान
144. नेपाल
145. टोगो
146. बांग्लादेश
147. मारितानिया
148. यमन
149. जिबूती
150. हैती
151. नाइजीरिया
152. कांगो (लोकतांत्रिक गणराज्य)
153. जांबिया
154. कोटे डीला वोरे
155. सेनेगल
156. तंजानिया, गणतंत्र
157. बेनिन
158. यूगांडा
159. एरिट्रिया
160. अंगोला
161. गैम्बिया
162. गिनी
163. मलावी
164. र्वांडा
165. माली
166. मध्य अफ्रीकी गणतंत्र
167. चाड
168. मोजाम्बिक
169. गिनी–बिसाऊ
170. बुरूंडी
171. इथोपिया
172. बुरकिना फासो
173. नाइजर
174. सियरा लियोन

स्रोत: *ह्यूमन डेवलपमेंट रिपोर्ट, 2000, यू. एन. डी. पी., आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली*

संदर्भ पुस्तकें

ए.ए.ए.एस. (2000), *एटलस ऑफ पॉपुलेशन एंड एनवायरनमेंट*

एटकिंस, पी. साइमंस, आई. एंड राबर्ट्स, बी. (1998), *पीपुल, लैंड एंड टाइम,* लंदन : आर्नोल्ड

ब्राउन, एल.आर., "लैविन, सी., एंड फ्रेंच, एच.एफ. (2000), *स्टेट ऑफ द वर्ल्ड :* ए बर्ल्ड वाच इंस्टिट्यूट रिपोर्ट ऑन प्रोगेस टूवार्ड ए सस्टेनेबल सोसायटी, लंदन : अर्थस्केन

नॉक्स, पी. एंड एग्न्यू., जे. (1988), *द ज्याग्रफी ऑफ द वर्ल्ड इकोनोमी,* लंदन : आर्नोल्ड

मॉरिस, ए. (1998), *ज्याग्रफी एंड डेवेलपमेंट,* लंदन: यूनिवर्सिटी कॉलेज लंदन प्रेस,

पॉपुलेशन रेफरेंस ब्यूरो (1999), *वर्ल्ड पॉपुलेशन डाटा शीट*

पौटर, आर. बी, बिन्स, टी., इलियत, अे. ए., एंड स्मिथ, डी. (1999), *ज्याग्रफी ऑफ डेवलपमेंट,* लंदन: लांगमैन

नैशनल ज्याग्रफिक, (1999), द, नैशनल ज्याग्रफिक : *डेस्क रेफरंस,* वाशिंगटन डी. सी.

द वर्ल्ड बैंक (2002), *वर्ल्ड डेवलपमेंट इंडीकेटर्स,* वाशिंगटन डी. सी.

यूनाइटेड नेशन्स, (2001), *वर्ल्ड इकॉनोमिक एंड सोशल सर्वे*

यूनाइटेड नेशन्स डेवलपेंट प्रोग्राम (2002), *ह्यूमन डेवलपमेंट रिपोर्ट* 2000,
नई दिल्ली : आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

यू. एन. एफ. पी. ए., द *स्टेट ऑफ वर्ल्ड पॉपुलेशन,* यूनाइटेड नेशन्स पॉपुलेशन डिवीजन

यूनाइटेड नेशन्स फूड एंड एग्रीकल्चरल ऑर्गेनाइजेशन (2000), *एफ. ए. ओ. स्टैटिस्टिक्स*